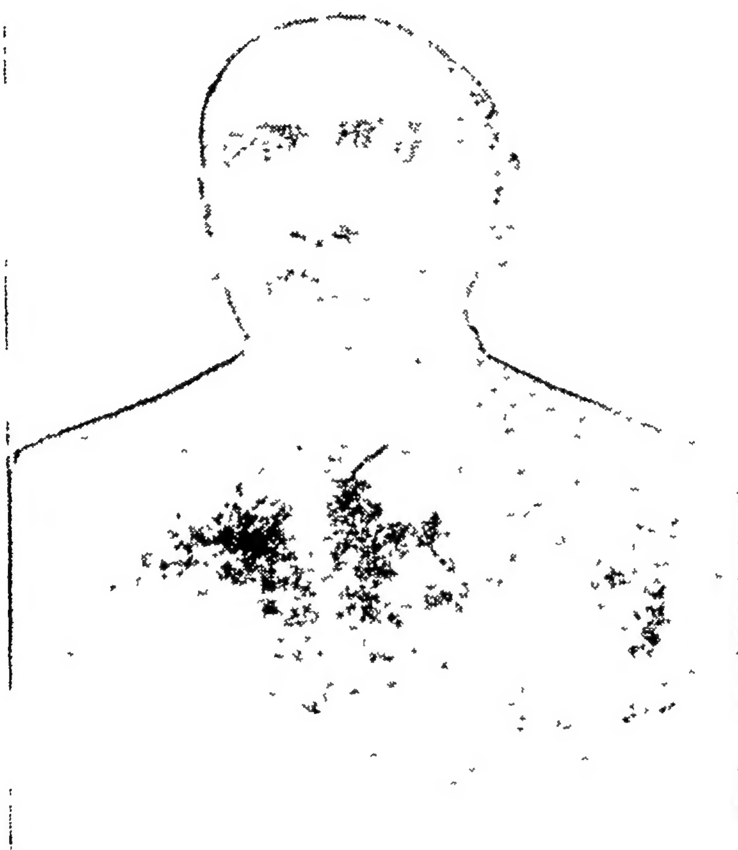


श्री प० पद्मसिंह शर्मा

जन्म-संवत् १९३३ वि०, मृत्यु-संवत् १९८९ वि०

पद्मसिंह शर्मा के पत्र

सम्पादक

बनारसीदास चतुर्वेदी

हरिशकर शर्मा

१९५६

आत्माराम एण्ड संस

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

काश्मीरी गेट

दिल्ली-६

प्रकाशक
रामलाल पुरी
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली ६

मूल्य ८)

मुद्रक
उग्रसेन दिगम्बर
इण्डिया प्रिंटर्स
एस्प्लेनेड रोड, दिल्ली-६

गुरु और शिष्य



संस्कृत-सूर्य गुरुवर श्री पं० काशीनाथजी शास्त्री [कुर्सी पर बैठे हुए]
विद्वद्वर श्री पं० भीमसेन शर्मा [खड़े हुए]
[गुरुजी पं० पद्मसिंह शर्मा के गुरु और शर्मा जी उनके सतीर्थ थे।
दोनों भारत-प्रसिद्ध विद्वान् थे।]

क्रम-सूची

परिशिष्ट

प्राक्कथन

चिट्ठियों का महत्त्व

कविता के सम्बन्ध मे कहा जाता है कि वह हृदय का उद्गार होती है, अर्थात् कवि कविता में अपना हृदय उँडेल देता है। परन्तु कविता लिखने के लिए कवि होने की आवश्यकता है—कलाकार बनने की जरूरत है। मेरी राय में चिट्ठियाँ लिखना भी एक प्रकार की कला ही है। औपचारिक पत्रो को, जिनमें नौकरी-चाकरी, व्यापार-व्यवहार, राज-काज आदि की चर्चा होती है, जाने दीजिए, परन्तु निजी पत्र जो इष्ट-मित्रो या सगे-सम्बन्धियो को लिखे जाते है, उनमे लेखक के हृदय का वास्तविक चित्र अकित होता है। ये निजी चिट्ठियाँ ही, जिनमे हृदय खोलकर बातें की जाती है, लेखक के वास्तविक व्यक्तित्व की परिचायक है। किसी विशेष स्थिति, प्रसग या घटना के सम्बन्ध मे, किसी के हृद्गत भाव जानने हो तो उसके निजी पत्रो का अवलोकन करना चाहिए। कवि या साहित्यकार जिन उद्गारो को कविताओ और निबन्धो में व्यक्त नही करते या कर पाते, उन्हे वे अपनी चिट्ठियो में अवश्य प्रकट करते है। कवियो या साहित्यकारो की रचनाएँ समझने के लिए, उनकी चिट्ठियो से बडी सहायता मिलती है। अंग्रेज़ी के महाकवि कीट्स की रचनाएँ समझने-समझाने के लिए 'कीट्स की चिट्ठियाँ' (लैटर्स ऑफ कीट) शीर्षक एक पृथक् निबन्ध की आवश्यकता हुई। इसी प्रकार 'जीवन और पत्र' (लाइफ एण्ड लैटर्स) आदि निबन्ध भी लिखे गये।

कवि या साहित्यकार के दृष्टिकोण या उसकी प्रवृत्ति में कब, किस प्रकार, कितना परिवर्तन हुआ, यह बात उसकी लिखी चिट्ठियो से ही भली प्रकार जानी जा सकती है। अभिप्राय यह है कि किसी का वास्तविक व्यक्तित्व या प्रकृत चरित्र जानने के लिए उसकी चिट्ठियाँ ही सुलभ और सबल साधन है। व्यक्तियो की विशेषताएँ और निर्बलताएँ, मित्रो को लिखी उनकी चिट्ठियो से ही प्रकट होती है। किसी कवि या लेखक का अपनी और दूसरो की रचनाओ के सम्बन्ध में क्या विचार है, इसकी झलक भी उसके पत्रो की भाषा में ही दिखाई देगी। किस घटना का किसी के हृदय पर क्या प्रभाव पडा, उसकी व्यजक निजी चिट्ठियाँ ही हो सकती है। अपने, अपनी रचना या कार्य-शैली के सम्बन्ध में जो सकेत निजी पत्रो में किया जाता है, वह अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। चिट्ठियो द्वारा दो भिन्न या अभिन्न रुचियो और प्रवृत्तियो की तुलना करने में भी बडी मदद मिलती है।

प्रसन्नता-अप्रसन्नता, आशा-निराशा, स्नेह-सहानुभूति, भय-संकोच, घृणा-आश्चर्य, शान्ति-सन्तोष आदि के भाव किस घटना, प्रसंग या दृश्य द्वारा कब कितनी मात्रा में हृदय पर अंकित हुए, इसका यथार्थ माप भी निजी चिट्ठियों द्वारा ही हो सकता है। किसी का विशेष व्यसन या शौक भी चिट्ठियों की पंक्तियों में ही दृष्टिगत होता है। किसी कवि, लेखक या व्यक्ति विशेष की रचनाएँ और वक्तृताएँ, कभी-कभी बड़ी ही भ्रामक होती हैं। रचनाओं में और मंच पर उसका जो रूप दिखाई देता है, प्रायः वह पत्रों की भाषा में भिन्न होता है। एक कवि या कलाकार मंच पर खड़ा होकर, अपनी कविता के कारतूस से पूंजीवाद के पिशाच को नष्ट-भ्रष्ट कर देना चाहता है, परन्तु चिट्ठियों में पूंजीवाद की भावना का समर्थन करता हुआ, स्वयं पूंजीपति बनने की चेष्टा करता रहता है। कुछ वक्ता या लेखक महोदय जनता के सामने वक्तृता या निबन्ध-पाठ में, मदिरा-पान के विरुद्ध, बड़ी कलात्मक शैली में घोषणा करते हैं, परन्तु चिट्ठियों में मित्रों से बढ़िया शराब भेजने की फरमायश करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझ बैठे हैं। ऐसी अवस्था में उनका व्यक्तित्व पत्रों के अतिरिक्त कविता या कला में कैसे खोजा जा सकता है? वस्तुतः वास्तविक व्यक्तित्व अन्य रचनाओं में नहीं, केवल पत्रों के पृष्ठों पर ही अंकित रहता है। किसी व्यक्ति की क्या हार्दिक अभिलाषा है, वह अपना जीवन-पथ किस दिशा में बनाना चाहता है, इसका आभास भी मित्र-मिलापियों या सगे-सम्बन्धियों को लिखे उसके निजी पत्रों में ही मिलेगा।

यों साधारण साक्षर व्यक्ति भी चिट्ठियाँ लिखते समय उनमें अपना हृदय उंडेल देते हैं। बिना पढ़े-लिखे लोग जो चिट्ठी-पत्री लिखना नहीं जानते, वे दूसरों से उन्हें लिखाते हैं और चाहते हैं कि उनकी उस चिट्ठी में उन्हीं की भाषा तथा भावना, अविकल रूप से, अंकित कर दी जाय। लेखक अपनी ओर से कुछ जोड़े, छोड़े या मोड़े-मरोड़े नहीं। ऐसे लोग अपने इष्ट-मित्रों और सम्बन्धियों तक, अपनी बोली में ही अपने उद्‌गार पहुँचाना चाहते हैं। जो लोग गाँवों में रहते और इस प्रकार के पत्र लिखते रहते हैं, वे इस भावना को भली प्रकार जानते हैं। कितने ही शिक्षित व्यक्ति चिट्ठी तो अच्छी लिख लेते हैं, परन्तु 'कागज़ पर कलेजा' काढ़कर रख देने की कला न जानने के कारण, वे कलात्मक या प्रभावशाली पत्र नहीं लिख पाते। कविता की तरह पत्रों में भी 'फसाहत बलागत' यानी प्रसाद-गुण और चमत्कार हो तो वे भी उपयोगी बनने के साथ-साथ कला की दृष्टि से भी बहुत श्रेष्ठ हो सकते हैं। किसी ने कहा है—

"समझ में साफ आ जाए, 'फसाहत' उसको कहते हैं,
असर हो सुननेवाले पर 'बलागत' उसको कहते हैं।"

जिस पत्र के सुनने-समझने या पढ़ने-पढ़ाने में आनन्द की गंगा उमड़े, वही

कला का उत्कृष्ट नमूना है। ये सब चिट्ठियाँ, चाहे वे कलात्मक न हो, हृदय की भाषा होने के कारण, महत्त्वपूर्ण और उपयोगी होती है। उनसे, निस्सन्देह किसी का भाव, स्वभाव, प्रभाव और व्यक्तित्व जानने मे बडी सहायता मिलती है।

अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओ में चिट्ठियो क बडा महत्त्व है। प्राय. सब ही महान् पुरुषो के, जिनमे कवि और साहित्यकार भी है, पत्र-सग्रह प्रकाशित हो चुके है। हमारे देश मे, बगला और उर्दू इस दिशा मे सौभाग्यशालिनी है। उर्दू में प्राय. सब ही महाकवियो और साहित्यकारो के पत्र-सग्रह मौजूद है। 'गालिब', 'आजाद', 'न्याज', 'हाली', 'नजीर अहमद', सर सय्यद', 'अमीर मीनाई', अकबर 'इलाहाबादी', शिब्ली, अमजद, हाशिमी आदि साहित्यकारो और कवियो के पत्र-सग्रह आपको पुस्तक-विक्रेताओ की दुकानो पर आसानी से मिल सकेंगे। अब तक पचास के लगभग ऐसे सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। प्रसिद्ध विद्वान् और लेखक ख्वाजा हसन निजामी ने तो 'अतालीक खतूत नवीसी' नामक एक विस्तृत पुस्तक ही लिखी है, जिसमे पत्र-लेखन-कला-कोविद विद्वानो की चर्चा करके उनकी कला के नमूने भी दिये है। इसके अतिरिक्त 'रुक्कात आलमगीर', 'मकातीब शिब्ली' आदि पुस्तकें भी पत्र-लेखन-कला से सम्बन्ध रखती है। उर्दू ही नही, फारसी के विद्वानो की चिट्ठियाँ भी प्रकाशित हो चुकी है।

बगला में गुरुदेव रवीन्द्र और शरत् बाबू के पत्रो के सग्रह प्रकाशित हो चुके है। और भी कई सग्रह निकले है।

भारत के शिक्षामन्त्री मौलाना आज़ाद साहब भी पत्र-कला-कुशल व्यक्ति है। आपने अहमदनगर जेल से उर्दू में जो पत्र लिखे थे, वे भी पुस्तकाकार प्रकाशित हुए है।

अंग्रेजी, फारसी, उर्दू की चिट्ठियो के सम्बन्ध में तो ऊपर सकेत किया गया, परन्तु इस दृष्टि से हिन्दी को देखते है तो बडी निराशा होती है। वह इस क्षेत्र में बहुत पिछडी हुई है। जहाँ तक हमे ज्ञात है, पचास वर्ष पूर्व स्व० महात्मा मुशीरामजी (श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी) ने सबसे पहले हिन्दी में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध की चिट्ठियो का एक सग्रह प्रकाशित किया था। इस सग्रह मे स्वामी दयानन्दजी की लिखी चिट्ठियाँ कम थी, उनके नाम दूसरो की चिट्ठियाँ अधिक थी। इसके पश्चात् श्री प० भगवद्दत्तजी ने बडे परिश्रम और प्रयत्न से खोज-खोजकर श्री स्वा० दयानन्द सरस्वती के लिखे पत्रो का एक बृहत् सग्रह प्रकाशित किया। जैसा कि ऊपर कहा गया है, मनुष्य का पूर्ण और विस्तृत व्यक्तित्व उसकी चिट्ठियो मे छिपा रहता है, इसी आधार पर स्वामीजी का व्यापक स्वरूप देखने के लिए, उनके इस 'पत्र-सग्रह' से बडी सहायता मिलेगी।

स्वामी दयानन्दजी के ग्रन्थो को पढने से यही जाना जाता है कि वे वेद-शास्त्रो के उद्भट विद्वान्, निर्भय आलोचक, देश-भक्त और बाल ब्रह्मचारी थे। साथ ही वे त्यागी, तपस्वी, निरीह सन्यासी भी थे। परन्तु जब हम उनके उक्त 'पत्र-सग्रह' को पढते है, तो यह भी विदित होता है कि स्वामीजी मे व्यावहारिक बुद्धि भी अच्छी थी। वे प्रबन्ध या व्यवस्था करने-कराने में भी बडे कुशल थे। पाई-पाई पर उनका ध्यान रहता था। वे हिसाब-किताब सम्बन्धी रसीदें लेने, प्राप्तिकर्त्ता से नियमानुसार हस्ताक्षर कराने, अच्छे-बुरे कर्मचारी को परखने, उसे नियुक्त एव वियुक्त करने आदि का भी अच्छा अनुभव और ज्ञान रखते थे। टाइप, कागज और छपाई सम्बन्धी बातो की भी उन्हे खूब जानकारी थी। वे यह भी प्रयत्न करते थे कि उनके आन्दोलन की प्रगति-सूचनाएँ तत्कालीन अग्रेजी और हिन्दी-उर्दू के पत्रो में प्रकाशित होती रहे। 'ट्रिब्यून' में यह सूचना अवश्य छपे, 'भारतमित्र' मे उस बात का सशोधन छपा दो, इत्यादि प्रचार-सम्बन्धी बातो पर भी वे पूरा ध्यान देते थे। उन्हे अपने प्रचारको के स्वागत-सत्कार पर भी नज़र रखनी पडती थी। वे लाहौर मे अपने एक भक्त को लिखते है—"वे • पहुँचे तो अपने लोग स्टेशन पर मौजूद रहे, और उनको अच्छी प्रकार खातिर के साथ लेकर अपनी बैठक या किसी अच्छे मकान में ठहरावे।" यही नही, इससे भी बढकर, उन्हे विदेशो में धर्म-प्रचार कराने और वहाँ भारत-गौरव बढाने का भी ध्यान था। वे अपने शिष्य प्रसिद्ध क्रान्तिकारी विद्वान् श्यामजी कृष्ण वर्मा को विदेश भेजते समय एक चिट्ठी में आदेश देते है—

"देखो, तुम विदेश में जाकर अपने को भारत का बहुत छोटा विद्यार्थी बताना और कोई ऐसा काम न करना जिसमे अपने देश का ह्रास होवे। जो कुछ कहो समझकर कहना।"—(१५ जुलाई, १८७२)

इन पत्रो को पढकर साश्चर्य कहना पडता है कि स्वामीजी वेदवेत्ता ही नही, व्यवहार मे भी बडे कुशल थे। यदि ये पत्र सामने नही आते तो लोगो की यही धारणा बनी रहती कि वेदज्ञ स्वामीजी को इन व्यावहारिक झगडे बखेडो से कोई सरोकार न रहा होगा। महात्मा गाधी के जो पत्र प्रकाशित हो चुके है उनमे कितने ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। पर अभी उनके सहस्रो पत्र अप्रकाशित पडे हुए है।

हाँ स्वामी दयानन्दजी के उपर्युक्त पत्र-सग्रह मे यह भी जाना गया कि वे सस्कृत और हिन्दी के प्रबल प्रचारक और समर्थक होते हुए भी अग्रेजी और उर्दू से घृणा न करते थे। उनके हस्ताक्षरो से अग्रेजी और उर्दू मे कितनी ही चिट्ठियाँ भेजी गई है। एक चिट्ठी मे वे लिखते है—"हम बमुकाम छलेसर, परगना मोरथल, ज़िला अलीगढ मे बयामफ़ज़ीर है। जुलाब जो लिया था उसमे फारिग हो गये। मगर कमज़ोरी निस कदर है।" २३-६-७६। स्वामीजी के इस भाषा में लिखे अनेक पत्र

है। उनके ग्रन्थ पढने वाले कल्पना भी नही कर सकते कि कभी स्वामीजी ने अपने व्यवहार मे ऐसी भाषा का भी प्रयोग किया होगा ? गत सौ-सवा सौ वर्षो में, हमारे देश मे अनेक विभूतियाँ हो गईं, परन्तु उनके पत्र-प्रकाशन की ओर बहुत ही कम ध्यान दिया गया है। हिन्दी साहित्य-महारथियो के 'पत्र-सग्रह' भी प्राय: न प्रकाशित होने के बराबर है। निश्चय ही यह हमारे लिए दु ख और लज्जा की बात है।

जहाँ चिट्ठियाँ लिखना एक कला है, वहाँ उनको सग्रह कर सुरक्षित रखना और सम्यक् सम्पादन के पश्चात् उचित रीति से प्रकाशित कराना भी एक कला है। इस प्रकार के कलाकारो में रायकृष्णदासजी और श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम विशेष रूप से उल्लेख योग्य हैं । इन दोनो महानुभावो से हमारा आग्रहपूर्ण निवेदन है कि वे इन पत्र-रत्नो को हिन्दी जगत् के सामने लाने का शीघ्र उद्योग करे।

जहाँ तक अपनी जानकारी है, हिन्दी मे आचार्य पद्मसिंह शर्मा पत्र-लेखन-कला में पारगत थे। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के पत्र वास्तविक स्थिति के पोषक एव परिचायक हैं। श्री भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, श्री प्रतापनारायण मिश्र और श्री बालमुकुन्द गुप्त की चिट्ठियो मे भी अच्छी चुलबुलाहट पाई जाती है। श्री प्रेमचन्दजी के पत्र भी बडे मार्के के हैं। काश इन तथा अन्य साहित्य-महारथियो के पत्र-सग्रह प्रकाशित हो सके तो हिन्दी की बडी सेवा हो।

ऊपर अधिकतर निजी पत्रो की ही चर्चा की गई है, उन्ही की उपयोगिता पर ध्यान रहा है। परन्तु हम समझते है, उन पत्रो का भी महत्त्व कम नही है, जो राजनीतिक या अन्य किसी दृष्टि से उपयोगी हो सकते है, या जिनके आधार पर बडे-बडे समझौते हुए अथवा कोई विशेष घटना घटी है। महात्मा गाधी को अपने जीवन मे—निजी नही—राजनीतिक दृष्टि से कितने ही ऐतिहासिक पत्र लिखने पडे। देश के अन्य महापुरुषो के भी ऐसे पत्र है और हो सकते है, वे सब ही राष्ट्र और साहित्य की अमूल्य निधि है। क्यो न वे सब पुस्तको के रूप में प्रकाशित किये जायं। वैयक्तिक जीवन न सही, राष्ट्रिय जीवन पर तो उनसे प्रकाश पडेगा ही। चिट्ठियो के सहारे ही व्यापार, राज-काज और ससार का सारा व्यवहार चल रहा है। अतएव उनकी प्रत्येक दृष्टि से बहुत बडी उपयोगिता तथा महत्ता है।

साहित्यिक, सास्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक इत्यादि सभी प्रकार के पत्र सगृहीत होने चाहिएँ। इस कार्य के लिए एक सुदृढ सस्था या विभाग का निर्माण हो। यह विभाग चिट्ठियो के सग्रह, सम्पादन और प्रकाशन में सतत संलग्न रहे। जिस पत्र या पत्र की जिन पक्तियो से देश या समाज का कुछ भी हित हो सकता हो वे प्रकाश मे अवश्य आवे, सार्वजनिक हित की भावना ही सच्चे साहित्य में परिणत होती है। अभिप्राय यह है कि महापुरुषो और कवि-साहित्यकारो के पत्र भी साहित्य सीमा में

प्रविष्ट किये जायें। वे साहित्य-शरीर की सुदृढ रीढ का काम देंगे। उनसे पाठकों की जानकारी बढ़ेगी और वे अनुप्राणित भी होंगे। हिन्दी वालों के लिए यह कार्य अनिवार्य होना चाहिए।

एक बात और है, लोगों में पत्रों की उपयोगिता के अनुसार उन्हें संवारकर रखने की प्रवृत्ति जागरूक होनी चाहिए। साधारणत. पत्र पढकर, उन्हें रद्दी खाते में फेंक देने की हमारी आदत है। यह ठीक नहीं है। यथासम्भव, स्थायी उपयोगिता के पत्रों को सुरक्षित रखना जरूरी है। कोई उदीयमान नवयुवक या विद्यार्थी कब कितना महान् पुरुष बन जायगा, इसे कौन जानता है। बडे आदमियों के बाल्य काल के लिखे पत्र भी बहुत महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। कविरत्न सत्यनारायण के स्वर्गवास के पश्चात् बालक या विद्यार्थी सत्यनारायण की लिखी चिट्ठियों का मूल्य या महत्त्व बढ जाना स्वाभाविक था। क्योंकि उनकी जीवनी के लिए वे अति आवश्यक समझी गईं। आज तुलसीदास, सूरदास, कबीर, नजीर आदि के पत्र किसी के पास हों तो वे लाखों की सम्पत्ति से कम न समझे जायँगे।

चिट्ठियों में लेखक की हस्तलिपि और उसके व्यक्तित्व के दर्शन तो हो जाते हैं परन्तु साक्षात् शरीर-पिण्ड के दर्शन नहीं होते। इसलिए जिस व्यक्ति के पत्रों का संग्रह प्रकाशित हो उसके सभी उपलब्ध चित्र भी प्रकाशित किये जायँ। सन् संवत् का भी उल्लेख रहे। यदि किसी पत्र के सम्बन्ध में कोई घटना व्याख्या की अपेक्षा रखती हो तो वह भी कर दी जाय। हाँ, पत्रों की जिन बातों से कटुता, अश्रद्धा या अरुचि उत्पन्न होने की आशंका हो, उनके न प्रकाशित करने में ही हित है।

चिट्ठियों की उपयोगिता और महत्ता के सम्बन्ध में ऊपर कुछ पंक्तियाँ लिखी गई हैं। आशा है, हिन्दी संसार उन पर विचार करेगा।

शंकर-सदन
लोहामण्डी, आगरा

हरिशंकर शर्मा

भूमिका

पत्र-लेखन कला

सन् १८८७—

२१ वर्ष का एक फरासीसी युवक पेरिस की एक मामूली गली मे अपने छोटे-से कमरे मे बैठा हुआ है। वह कला और गान-विद्या का प्रेमी है। अभी हाल ही मे टाल्सटाय की पुस्तक 'What is to be done?' (हमारा कर्तव्य क्या है?) छपी है। इस पुस्तक मे टाल्सटाय ने कला-सम्बन्धी प्रचलित विचारो पर काफी जोरदार आक्षेप किये है। इस पुस्तक को पढकर उस युवक की मानसिक स्थिति डाँवाँडोल हो गई, क्योकि अब तक वह टाल्सटाय को अपना आदर्श मानता रहा है। उसने मन में सोचा कि चलो, टाल्सटाय को एक चिट्ठी ही लिख दूँ, वह महान् लेखक मेरे जैसे मामूली युवक के पत्र का उत्तर तो भला क्यो देने लगा! उसने टाल्सटाय को एक पत्र भेज दिया, जिसमें उसने अपनी शकाएँ लिखी थी, और कुछ दिनो तक उत्तर की प्रतीक्षा भी की, फिर इस बात को भूल ही गया। कुछ सप्ताह इसी प्रकार बीत गये। एक दिन शाम के वक्त वह अपने कमरे पर लौटा, तो देखता क्या है कि फरासीसी भाषा में एक लम्बी चिट्ठी कही से आई है। उसको खोलने पर मालूम हुआ कि यह तो टाल्सटाय का पत्र है! वह पत्र ३८ पृष्ठ का था, या यो कहिये कि एक छोटा-सा ट्रैक्ट ही था। उस अपरिचित साधारण युवक को टाल्सटाय ने 'प्रिय बन्धु' लिखा था। पत्र के प्रारम्भिक शब्द थे—"तुम्हारी पहली चिट्ठी मुझे मिली। उसमे मेरा हृदय द्रवित हो गया। पढते-पढते आँखो मे आँसू आ गये।" इसके बाद टाल्सटाय ने अपने कला-सम्बन्धी विचार उस पत्र में प्रकट किये थे—"दुनिया में वही चीज कीमती है, जो मनुष्यो के पारस्परिक सम्बन्ध को दृढ करे, जो उनमें भ्रातृ-भाव स्थापित करे, और सच्चा कलाकार वही है, जो अपने सिद्धान्तो तथा विश्वासो के लिए त्याग और बलिदान करने के लिए तैयार हो। सच्चे पेशे की पहली शर्त कला का प्रेम नही, बल्कि मानव-जाति से प्रेम है। जिनके हृदय मे मनुष्य-जाति के प्रति प्रेम है, वे ही कभी कलाकार की हैसियत से उपयोगी कार्य करने की आशा कर सकते है।" टाल्सटाय के विस्तृत पत्र का साराश यही था।

इस पत्र ने उस युवक के हृदय पर बडा भारी प्रभाव डाला। सबसे महत्त्वपूर्ण बात उसे यह जँची कि इस विश्व-विख्यात महापुरुष ने मेरे जैसे एक अपरिचित युवक को इतनी लम्बी और सहृदयतापूर्ण चिट्ठी भेजी है, और तब से उस युवक ने यह निश्चित कर लिया कि यदि कोई आदमी सकट के समय मे अन्तरात्मा से कोई पत्र

भेजेगा तो मैं अवश्य ही उसका उत्तर दूँगा, क्योकि संकटग्रस्त मनुष्य की सेवा ही कलाकार का सर्वोत्तम गुण है।

वह युवक था रोमाँ रोलाँ, जिसने आगे चलकर विश्व-साहित्य में अपना एक विशेष स्थान बना लिया, जिसे नोबिल प्राइज मिली और जिसने अनेक अमर ग्रन्थो की रचना की। पर रोमाँ रोलाँ के ग्रन्थो के समान उनके सहस्रो पत्रो का भी महत्त्व है, जिनके द्वारा उन्होने सैकडो लेखको का पथ-प्रदर्शन किया था और असंख्य दु खितो तथा पीडितो के हृदय को सान्त्वना प्रदान की थी। टाल्सटाय की उस एक चिट्ठी ने जो बीज बोया था, वह वट-वृक्ष के रूप मे पल्लवित हुआ। रोमाँ रोलाँ के लिखे हज़ारो ही पत्र आज विद्यमान है और सुना है कि वे कितनी ही जिल्दो मे फरासीसी भाषा मे छप भी गये है। जिस दिन टाल्सटाय ने उस पत्र के लिए कुछ घटे व्यय किये थे, उन्होने स्वप्न में भी यह खयाल न किया होगा कि आगे चलकर मेरा यह पत्र इतना सफल होगा।

इस घटना से पत्र-लेखन-कला का महत्त्व प्रकट होता है। खेद की बात है कि हिन्दी जगत् ने इस महत्त्व को अभी तक भली भाँति नही समझा। जहाँ तक हम जानते है हिन्दी में कुल जमा दो-तीन पत्र सग्रह है—एक तो ऋषि दयानन्द के पत्रो का सग्रह और दूसरा स्व० प० महावीरप्रसादजी द्विवेदी की चिट्ठियो का। आवश्यकता इस बात की है कि हम लोग सर्वोत्तम पत्रो को एक जगह संग्रह करके उन्हे कई जिल्दो में छपा दें। सुना है कि उर्दू में चालीस से अधिक पत्र सग्रह विद्यमान है और एक उर्दू विद्वान् मि० फरूखी ने उनका अन्वेषण करके उन पर एक निबन्ध लिखा है और पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त की है।

'प्राचीन पत्र-लेखन' नामक एक निबन्ध से, जो स्व० डॉक्टर हीरानन्द शास्त्री एम० ए०, डी०लिट० ने जनवरी सन् १६३८ के 'विशाल भारत' में लिखा था, इस कला की प्राचीनता का कुछ परिचय मिलता है। उसी प्रकार मार्च सन् १६४० के 'विशाल भारत' मे श्री हजारीप्रसादजी द्विवेदी द्वारा लिखित २०० वर्ष पुरानी खडीबोली के पत्रो के नमूने छपे थे। इस विषय का ऐतिहासिक अनुसन्धान करने वाले विद्यार्थियो को ये दोनो लेख अवश्य पढ लेने चाहिएँ। यही नही अन्य भाषाओ के पत्र सग्रहो को पढे बिना हम हिन्दी पत्रो का उचित मूल्याङ्कन करने में समर्थ न होगे।

१८ सितम्बर सन् १६५३ के Times Literary Supplement (विलायत के 'टाइम्स' पत्र के साहित्यिक विशेषाक) में डॉक्टर जॉनसन के पत्र-सग्रह की आलोचना छपी थी। तीन जिल्दो का यह सग्रह R W Chapman द्वारा सम्पादित है और ६ पौंड ६ शिलिंग में प्राप्य है। चैपमैन साहब ने इस पुण्य कार्य मे अपने जीवन के पच्चीस वर्ष लगा दिये थे।

पत्र-व्यवहार एक व्यसन

कोई भाँग पीता है, कोई तमाखू खाता है, किसी को अफीम की लत है, तो किसी को गांजे का शौक। सुरो की प्रिय सुरा पीने वालो का क्या कहना ! और चाय के पियक्कडो की सख्या तो दिन दूनी रात चौगुनी बढ रही है। 'वह और उसका भाई पीता है चाय' यह सचित्र विज्ञापन टीन पर छपा हुआ, किसी भी नगर में आपको दीख पडेगा। पर इन सब नशो की तरह का, उतना ही उन्मादक एक नशा और भी है और वह है चिट्ठियाँ भेजने का।

स्वर्गीय पण्डित पद्मसिंहजी शर्मा ने अपने ग्रन्थ 'पद्म-पराग' में पण्डित भीमसेन शर्मा के सस्मरणो में एक जगह लिखा है—"पत्र-व्यवहार का मुझे एक व्यसन-सा रहा है। पत्र लिखते-लिखते ही मैंने कुछ लिखना सीखा है। पण्डित भीमसेनजी मुझे दाद दे-देकर पत्र लिखने के लिए उत्साहित करते रहते थे। उस समय के उस सस्कृतमय पत्र-व्यवहार का अधिकाश अब भी मेरे पास सुरक्षित है। उस सिलसिले के जो पत्र नष्ट हो गये हैं, उनका अफसोस साहित्य की बहुत-सी पोथियाँ जमा कर लेने पर भी अब तक बाकी है। अब भी जब कभी उन पत्रो को पढता हूँ तो वही आनन्द पाता हूँ। किसी सुलेखक और सहृदय विद्वान् के साथ इस प्रकार का पत्र-व्यवहार भी शिक्षा का एक साधन है।"

यदि धृष्टता क्षन्तव्य समझी जाय तो मै भी यही कहूँगा कि आचार्यजी की तरह मुझे भी पिछले चालीस वर्षो से पत्र-व्यवहार का व्यसन रहा है और इसमें मेरे समय और शक्ति का बहुत कुछ अपव्यय भी हुआ है। मेरा खयाल है कि शराब को छोडकर शायद ही कोई दूसरा व्यसन इतना अधिक खर्चीला हो।

हमने कही पढा था कि जर्मनी के महान् कवि गेटे ने पत्रो के विषय में एक नियम बना लिया था। वे उन्ही पत्रो का उत्तर देते थे, जिनमें उन्हे कोई कुछ देने का वचन देता था और शेष पत्रो को, जिनमें कुछ माँगने की बात होती, फाड फेंकते थे। सुना है कि आस्कर वाइल्ड बहुत ही कम चिट्ठियो का जवाब देता था और उसने एक जगह कहा था कि पत्रो का उत्तर देना अपने साहित्यिक जीवन को नष्ट करना है। अमरीका के सुप्रसिद्ध लेखक थोरो पत्रो को बिल्कुल ही महत्त्व नही देते थे। एक पत्र के उत्तर में उन्होने लिखा था, "मैने कभी आपको पत्रोत्तर देने का वचन नही दिया था, इसलिए यह पत्रोत्तर भेजकर मै अपनी प्रतिज्ञा से ऊपर का काम कर रहा हूँ।" उन्होने एक जगह यह भी लिखा था, "जो आदमी भाग-भागकर डाकखाने जाते है और वहाँ से अपने नाम आये हुए पत्रो का पुलन्दा लाते है—ऐसा प्रतीत होता है, उन्हे बहुत दिनो से अपने भीतर वाले से कोई खबर नही मिली?" पर जिन्हें पत्र-व्यवहार का व्यसन लग गया

है वे न तो महाकवि गेटे के उदाहरण से निरुत्साहित हो सकते हैं और न आस्कर वाइल्ड का उपदेश उन पर कुछ असर कर सकता है, फिर भला फक्कड़ शिरोमणि थोरो की बात क्यों सुनने लगे ?

जैसे शराब के पीने वाले अपने बचाव के लिए कभी-कभी कह देते हैं—'अजी साहब ! बलराम पीते थे और सुकरात भी पीते थे, हमी ने क्या गुनाह किया है ?" और एक बार तो स्वर्गीय प्रतापनारायण मिश्र ने नाटक के बीच में कह दिया था—

"बामन पीवै, खत्री पीवै, पीवै अग्गरवाला।
हम ऐडीटर पी लई तो करेगा क्या कोई साला ?"

उसी प्रकार जिन्हे चिट्ठी-पत्री का चस्का लग चुका है वे रोमाँ रोलाँ और दीनबन्धु ऐण्ड्रूज, महात्मा गान्धी तथा आचार्य पद्मसिंहजी के नाम ले सकते हैं !

पत्र-व्यवहार और मछली का शिकार

पत्र-व्यवहार मछली के शिकार जैसा व्यसन है ! दोनो मे अनन्त धैर्य की आवश्यकता है। मछुए को उतना आनन्द किसी भारी-भरकम मछली के काँटा निगलने पर भी न आता होगा जो किसी महापुरुष से पत्र पाने पर पत्र-व्यवहार के शिकारी को आता है !

आज से छत्तीस वर्ष पहले की बात है, मैंने 'फिजी द्वीप मे इक्कीस वर्ष' नामक पुस्तक (जो स्व० पण्डित तोतारामजी सनाढ्य की सहायता से और उन्ही के नाम से लिखी गई थी) कवीन्द्र, श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की सेवा में भेज दी। मै जानता था कि गुरुदेव प्रवासी भारतीयों के शुभचिन्तक है और दीनबन्धु ऐण्ड्रूज तथा मि० पियर्सन के कारण उनके प्रश्नो मे रुचि भी रखते है, इसलिए पत्रोत्तर की कुछ आशा थी, वैसे उन जैसे विश्व-विख्यात महापुरुष से पत्र पा लेना आसान नही था। मेरी वह आशा पूर्ण हुई। गुरुदेव ने निम्नलिखित पत्र भेजकर मुझे कृतार्थ किया, वैसे यह एक साधारण पत्र है, पर मेरे लिए स्वभावत यह महत्त्वपूर्ण था—

Calcutta
Nov. 8, 1915

Dear Sir,

Please accept my thanks for your remarkable Hindi book dealing with the Indian emigrants in Fiji Islands. It is a valuable document and I hope it will lead to beneficial results in the hands of our friends, who are working in the interest of Indian Emigrants

Yours sincerely
Rabindranath Tagore

इसके बाद गुरुदेव से चार पत्र मुझे और भी मिले, जिनमें दो बँगला मे है। एक बार मैंने देवनागरी लिपि मे एक बँगला चिट्ठी गुरुदेव की सेवा मे भेजने की धृष्टता की थी। बँगला मे लिखने का वह प्रथम प्रयत्न ही था, इसलिए स्वभावत उसमें अनेक भूले रह गई थी। पर गुरुदेव ने लिखा—

"आपनार वाला चिठि खानि सुन्दर हइयाछे। दुई एकटि या भूल आछे ताहा यत्सामान्य।"

गुरुदेव के अतिरिक्त रोमाँ रोलाँ के भी फरासीसी भाषा में लिखित तीन पत्र प्राप्त करने का मुझे सौभाग्य मिला और भारतवर्ष के सर्वश्रेष्ठ पत्र-लेखक महामाननीय श्रीनिवास शास्त्री ने हमे चालीस से ऊपर पत्र भेजकर कृतार्थ किया। बापू के तो एक सौ पत्र मेरे पास इकट्ठे हो गये। स्वर्गीय प्रेमचन्दजी के अठारह तथा स्व० श्रीधर पाठक के ३०-३५ पत्र मुझे मिले और सम्पादकाचार्य द्विवेदीजी के ६० पत्र। आचार्य प० पद्मसिंहजी की तो मुझ पर विशेष कृपा रहती ही थी और उनके सवा सौ पत्र मुझे मिले। और दीनबन्धु ऐण्ड्रूज़ के पत्रो की मै अभी तक गिनती भी नही कर पाया!

१५ जुलाई सन् १९२१ को कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने दीनबन्धु सी. एफ. ऐण्ड्रूज़ को लिखा था—

"As a letter-writer you are incomparable! Your letters come down like showers of rain upon the thirsty land. Writing letters is as easy to you as it is easy for our Sal Avenue to put forth its leaves in the beginning of the spring month."

अर्थात् "पत्र-लेखक की हैसियत से आप अनुपम है। आपके पत्र धारा रूप में उसी प्रकार बरसते है जिस प्रकार प्यासी भूमि पर वर्षा की धाराएँ, और आपके लिए पत्र लिखना उतना ही आसान है जितना वसन्त ऋतु के प्रारम्भ में हमारी शाल कुंज के लिए नवीन पत्र धारण करना।"

मि० ऐण्ड्रूज की जो प्रशसा कवीन्द्र ने की थी, उसमे अत्युक्ति नही पर स्वयं कविवर पत्र लेखको मे शिरोमणि थे। जो महानुभाव उनके अंग्रेज़ी पत्रो को पढना चाहे वे George Allen and Unwin लन्दन से Letters to a friend मँगा सकते है। एक पत्र मे गुरुदेव ने पत्र-लेखन कला की खूबी को बडी मनोहर भाषा में प्रकट किया है—

"आपकी चिट्ठियाँ इसलिए आनन्दप्रद होती है कि आप छोटी-छोटी बातो में

जिनकी प्राय: उपेक्षा की जाती है, रुचि रखते है । इस दुनिया को वे चीजें ही सुन्दर बनाती है जिन्हे महत्त्वहीन समझा जाता है। वे छोटी-छोटी बातें ही ससार रूपी चित्र मे छाया और रग भरने का काम करती है। महत्त्वपूर्ण चीजे तो सूर्य की रोशनी के समान है। उनका उद्गम महान् है, लेकिन छोटी-छोटी चीजे हमारे जीवन के लिए वातावरण का काम देती है । वे सूर्य की किरणो का प्रसार करती है और वायुमण्डल मे रग का सचार और वे ही सूर्य की रश्मियो मे कोमलता का समावेश कर देती है।"

वस्तुत पत्रो मे छोटी-छोटी बातो का ही महत्त्व है। ए. जी गार्डनर ने अपने एक निबन्ध मे लिखा था—

"The secret of letter writing is intimate triviality."

घरेलूपन से भरी छोटी-छोटी बातो में ही पत्र-लेखन कला की सफलता का रहस्य छिपा हुआ है । काउपर ने, जो अग्रेजी पत्र-लेखको मे शिरोमणि माने जाते है, घर से अपने एक खरगोश के निकल भागने और फिर पकडे जाने का समाचार बडे उत्साह से लिख भेजा था। १७६ वर्ष पुराना वह पत्र आज भी पठनीय है।

काउपर के इस खरगोश वाले पत्र का मुकाबला कीजिये। महात्मा गाधीजी के बिल्ली सम्बन्धी पत्रो से, जो उन्होने यरवदा मन्दिर से लिखे थे—

यरवदा जेल मे जिस 'यार्ड' (जेल का भाग) में महात्माजी रहते थे उसमें एक बिल्ली भी रहती थी। उसकी आदतो पर महात्माजी मुग्ध हो गये। भिन्न-भिन्न अवसरो पर उन्होने उसके बारे मे लिखा था—

'बिल्ली की सफाई के बारे में तो मै लिख ही चुका हूँ । अब उसका और अधिक अवलोकन हुआ है। उसने डेढ-दो महीने हुए दो बच्चे जने । उसकी रहन-सहन अलौकिक लगती है। वे तीनो शायद ही कभी अलग दीख पडते हो। जब बच्चे माँगते है तब उन्हे उनकी माँ दूध पिलाती है। दोनो बच्चे साथ ही लगकर पीते है । यह दृश्य भव्य होता है। माँ को उसमें जरा भी शर्म नही लगती। बिल्ली ऐसी सलीकेदार है कि वह हर एक काम सबके सामने या जहाँ पाया तहाँ नही करती—जैसे ही बच्चे चलने-फिरने के योग्य हुए वैसे ही माँ ने उन्हे शौच के नियम सिखाये । वह खुद एकान्त वाले स्थान में चली गई और नरम जमीन ढूँढकर वहाँ गढहा बनाया, उस पर बच्चो को बिठलाया, उनके पाखाना कर चुकने पर उसने उस गढहे को मिट्टी से तोप कर ज्यो का त्यो बना दिया । आजकल ये बच्चे इसी प्रकार शौच फिरते है। ये भाई-बहन है। चार दिन हुए इनमें से एक ने एक जमीन ढूँढी—गढहा करना चाहा लेकिन वह निकली जरा सख्त, दूसरा बच्चा उसकी मदद के वास्ते पहुँचा। दोनो ने मिलकर आवश्यकतानुसार गड्ढा तैयार कर लिया और शौच हो चुकने पर उसे अच्छी तरह मिट्टी से ढँका और चलते बने। (९-५-३२)

"•••इस बिल्ली के इन बच्चो को देखते हुए कहना पडता है कि यह एक आदर्श शिक्षिका है। जो कुछ अपने बच्चो को सिखाती है या जो उन्हे सीखने की आवश्यकता है, उसे चुपचाप सिखाती है, गडबड नही मचाती। बच्चे जो कुछ सीखना चाहते है। उसे वह खुद कर दिखाती है। बच्चे तुरन्त वैसा ही करने लग जाते है। इसी प्रकार वे बच्चे दौडते-फाँदते पेडो पर चढते, सावधानी से उतरते, खाते-पीते, शिकार करते है, और जीभ से चाट-चूटकर शरीर को स्वच्छ रखते है। माँ के सब लक्षण बच्चो में उतर आये है, जो कुछ वह जानती है—उस सबको बच्चे सीख गये है—इस बिल्ली का उनके प्रति प्रेम मनुष्यो-जैसा है। ठीक वैसा ही लगता है। बच्चो को बगल में लिटाकर सोती है, दूध पिलाने के वक्त खुद लेट जाती है और मजे में दूध पीने देती है। अगर कही शिकार किया है तो बच्चो के पास ले आती है। वल्लभभाई इन तीनो को नित्य दूध देते है। तीनो चैन से एक रकाबी में पीते है। कभी-कभी खुद अलग खडी रहती है। बच्चो को पेट भर पी लेने देती है। उनसे प्यार की कुश्ती भी लडती है।"

२२-५-३२ बापू

× × ×

यरवदा जेल की बिल्ली की इतनी तारीफ सुनकर श्री परशुराम मेहरोत्रा ने एक पत्र मे बापू से उस बिल्ली का समाचार पूछा। बापू ने उत्तर में लिखा—

"बिल्ली बहन और उसके बच्चे-कच्चे खेलते-कूदते है और भोजन के समय अपना भाग लेने के वास्ते बिला नागा आ डटते है। न देने पर कुछ गडबड नही करते।"

जब आचार्य प० पद्मसिह शर्मा ने २१-९-१९५५ को श्री मास्टर रामस्वरूपजी गर्ग को निम्नलिखित पत्र भेजा था तो मानो इसी सिद्धान्त का पालन किया था—

"आपकी इस तवील अलालत का हाल मालूम करके मुझे अफसोस और तअाज्जुब है। आप-सा मोहतात मेहनती वर्जिशी तफरीह-पसन्द हट्टा-कट्टा हैडमास्टर इस तरह बुखार की जद मे कैसे आ गया? पढने से जी चुराने वाले शरीर लडको की बददुआ का असर तो नही? इत्यादि।"

फिर एक अन्य पत्र मे आचार्यजी ने उन्ही से पूछा था—

"वह मौलवीनुमा आतिशफिशा जो चाँदपुर में आग और लावा उगल रहा था, ठडा पडा कि नही? 'खुदा महफूज रक्खे इस बला से' कही कमबख्त खरमने अमन को न फूंकदे।"

प० ज्वालादत्त शर्मा मुरादाबादी को एक पत्र में उन्होने लिखा था—

"प० • शास्त्री अलौकिक जीव है। सस्कृत से निराश होकर पराड्मुख हो बैठे है। उस दिन गौड़जी ने मैने कहा कि इनका सस्कृत विद्वेष का भूत निकाल

दीजिये तो मै भी कायल हो जाऊँ। आदमी सज्जन और सहृदय है, यह और बात है कि......"

यहाँ यह लिखना अप्रासङ्गिक न होगा कि महात्मा गाधीजी इस इलाज को नापसन्द करते थे। उन्होने २०-६-३१ के पत्र मे श्री सुमगलप्रकाश को लिखा था—यदि तुम्हारा शरीर अच्छा हो रहा है तो दूसरी झझट मे क्यो पडना ? रामदासजी से लिखो भूत-प्रेतादि के इलाज से यदि शरीर अच्छा भी हो तो भी त्याज्य है, क्योकि उसमे ईश्वर मे विश्वास कम होता है।"

श्री प्रतापनारायणजी मिश्र ने ७ जनवरी १८९२ को श्री बालमुकुन्द गुप्त को लिखा था—

"राहुजी पाजी है। वह रुपया बीसियो का गपक बैठे है। नालिश कर दो न ? गवाही हम भी दे देंगे। नगर के मित्रो का हाल 'वही अतवारे सदरगी जो आगे थे सो अब भी है।' आपके भी ताबदार है—आमार नामई प्रेमदास। जोदी आपनार मोने आमार प्रेम, तबे आमी आपनार क्रीतदास......अवकाश दिनरात है। गुज़ारे का बन्दोबस्त पिताजी खुद ही कर गये है। ऊपर से दो घण्टे मात्र की मेहनत पर एक अग्रेज बहादुर पन्द्रह रुपया महीना भी देते है। निदान सब मज़ा है, केवल शरीर गडबड रहता है सो उसका नाम ही शरीर (फारसीवाला) है किन्तु डाक्टर भोलानाथ की जै हो। उनकी दया से उसकी भी शरारत दबी ही रहती है ...."

इन्ही मिश्रजी ने प्रेमघनजी को भारत-सौभाग्य नाटक के सम्बन्ध में सन् १८८९ मे लिखा था—

"हमरी मुच्छै कैयो दाँय घोटी गई है, जो हम मेहरिया मसवा दूनो के नकल करै जानति है। तेहिते ऐसी पोथिन माँ हमहूँ ते पूछि लीन करौ तो क्रिटिक हुन का ब्वाले का बीचु न रहै। अबै ३३ कैयो दाँय दोखु लगाय सकत है। हम बैसवारे में रहित है। दुसरेन का चराइ आइत है। भला हमका कोहू का रग का लागी ?"

एक अग्रेज़ लेखक ने लिखा था—"दरअसल सिर्फ वे ही पत्र सुरक्षित रहने योग्य है, जो कभी न लिखे जाने चाहिए थे और जिन्हे तुरन्त नष्ट कर देना चाहिए।'[1]

एक ऐसा ही मजेदार पत्र महाकवि शङ्करजी ने २६-१२-१९२२ को प० पद्मसिहजी शर्मा को भेजा था उसमें एक घनाक्षरी कवित्त था, जो शङ्करजी के किसी सग्रह मे अब तक प्रकाशित नही हुआ।

1. Letters that should never have been written and ought immediately to be destroyed are the only ones worth keeping"
—Sydney Tremayne

नई अज्ञात यौवना

घनाक्षरी कवित्त

"देख-देख दादी रात काट खाई माछरन
कैसे कढि आये मेरी छाती पै ददोरा दो।
पारसाल ऐसे ही दिखावत ही छोरी एक
छेड़त हे ताहि घेर-घेर मिटे छोरा दो॥
आगे बढने पै कहूँ बाँधने परें न हाथ,
उलटें मर्जोरन की भाँति फूले फोरा दो।
आँकन को शकर अँकैया को बुलाय वेग
लाद न सकूगी भारी तेरे से भटोरा दो॥"

इसके बाद शङ्करजी ने लिखा था—"यह कवित्त सजीवन भाष्य में ठिकाना मांगता है।"

आचार्यजी ने ऐसे महत्त्वपूर्ण पत्र को अपने सग्रह में रख लेना ही मुनासिब समझा। सजीवन भाष्य मे इसे ठिकाना मिला या नही, हम नही जानते पर आचार्यजी के पत्रो के संग्रह में इसे स्थान मिल ही गया है।

कविवर रत्नाकरजी ने अपनी एक कविता हमे इस शर्त पर लिखाई थी कि हम उसे कही छपावे नही। हमने 'विशाल भारत' में उसके तीन चरण छपा दिये और पाठको के मन की जिज्ञासा वढाने के लिए चौथा यो ही छोड दिया। आचार्यजी का पत्र आया "आखिर वह चौथा चरण क्या है? हम भी जानना चाहते हैं।"

गोपनीय चीज़ें अपना अलग ही आकर्षण रखती है, इसी कारण ज़ब्त किताबों की बिक्री कई गुनी वढ जाती है।

कभी-कभी मामूली आदमियो के हाथ के लिखे हुए पत्र ऐतिहासिक महत्त्व धारण कर लेते हैं। आज से ६५ वर्ष पूर्व रामलाल मिश्र नामक एक सज्जन ने, जो कालाकार के 'हिन्दोस्थान' ऑफिस में काम करते थे, वावू वालमुकुन्द गुप्त को अपने २ फरवरी सन् १८९१ के पत्र मे लिखा था—

"प्रिय मित्र,

धन्य है उस परमेश्वर की माया को कि नाना प्रकार के रङ्ग देखने में आता है। जहाँ मै पत्र लिखने मे आनन्दित होता था तहाँ आज दुख होता है। कल्ह तिथि १ के मध्याह्न काल मे राजा साहव ने आज्ञा-पत्र मँगा के लिख दिया कि आज मु० जी को आना चाहिए था सो अपने नियत समय पर नही आये इसलिए और हमारे चले जाने पर हिन्दोस्थान में उनका लेख जाने योग्य न होगा, कारण गवर्नमेण्ट के विरुद्ध

बहुत कडा लिखते है, अतएव इस स्थान के योग्य नही है, च्युत कर दिये जायँ । अधिक कारण, तिथि पर न आये । . ..

रामलाल मिश्र"

हिन्दी पत्रकार-कला के इतिहास मे शायद यह पहला ही मौका था जब कि किसी सम्पादक को "गवर्नमेण्ट के विरुद्ध बहुत कडा लेख" लिखने के लिए 'च्युत' किया गया था । श्री रामलाल मिश्र के नाम का उल्लेख केवल अपने इस पत्र के कारण ही हिन्दी पत्रकार-कला के इतिहास मे हो जायगा ।

दैवी दुर्घटनाओ और आकस्मिक विपत्तियो के आने पर ससार के महान् से महान् पुरुषो के चित्त विचलित हो जाते है और उस समय के उनके लिखे हुए पत्रो में उनकी आत्मा प्रतिबिम्बित हो जाती है। मार्च सन् १८९५ मे टालसटाय के सात वर्ष के एक बच्चे का स्वर्गवास हो गया था । उस समय टाल्सटाय की पत्नी ने उनकी एक चचेरी बहन को लिखा था—

"अपने इस महान् दुख में हम लोगो को प्राय आपकी याद आई है, क्योकि हम दोनो आपके प्रेमपूर्ण हृदय को भली भांति जानते है । हम लोगो की वेदना कल्पनातीत है। यद्यपि जॉन के प्रति हमारे हृदय में असीम प्रेम था, तथापि हम यह नही जानते थे कि सात वर्ष के इस मनोहर बालक ने सारे कुटुम्ब के जीवन मे कितना बडा स्थान बना रखा है। केवल दो दिन के ज्वर में ही वह चल बसा । प्रान्तो की तकलीफ ने और भी गडबडी पैदा कर दी थी। उसे बेहोशी हो गई थी, इसलिए उसे ज्यादा कष्ट नही सहना पडा ।" अत्यधिक वेदना और बीमारी के कारण श्रीमती काउण्टैस टालसटाय ने इस चिट्टी को अधूरा ही छोड दिया था। इसे पूरा करते हुए टालसटाय ने लिखा था—"अनेक बार मेरे मन में यह प्रश्न उठा था—आखिर बच्चे मरते क्यो है ? इस सवाल का कोई भी जवाब मुझे नही मिला था । पिछले दिनो मे मैं अपने और मानव-समाज के जीवन पर ही विचार करता रहा हूँ—बच्चो के बारे मे कोई विचार नही किया और मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि हमारा एक-मात्र कर्तव्य यह है कि अपने हृदय मे प्रेम की वृद्धि करें और अपने उदाहरण द्वारा साथी-सगियो में भी प्रेम को बढा ले । अब तो स्वय यह सवाल मेरे सामने आ खडा हुआ है । मेरा यह बच्चा क्यो इस ससार मे आया और क्यो अपने जीवन के दशाश को भी बिताये बिना ही वह यहाँ से बिदा हो गया ? इस दुर्घटना का जो प्रभाव हम लोगो पर पडा है उससे मेरे सिद्धान्त की पुष्टि हो जाती है । मेरा बच्चा जॉन ससार में इसीलिए आया था कि ससार मे प्रेम की वृद्धि हो, वह स्वय प्रेम में बढा । ईश्वर ने उसे यहाँ इसीलिए भेजा था कि वह यहाँ प्रेम को बढावे और इस ससार से विदा होकर प्रेमपूर्ण ईश्वर से मिलने से पूर्व हम दोनो को प्रेम के बन्धन में बाँध दे । इतना अधिक हम कभी एक-दूसरे के

निकट न आ पाये थे—मै और मेरी पत्नी सोफिया। जितना प्रेम अब मै सोफिया से करता हूँ, उतना मैने पहले कभी नही किया था।"

यद्यपि टालसटाय ने अपने मन को सान्त्वना देने के लिए ये दार्शनिक बाते लिखी थी पर आखिर वे पिता थे और इसी पत्र मे उन्हे लिखना पडा था—"मेरे लिए यह दुर्घटना बडी दु खप्रद है पर मुझे दु ख का उतना अनुभव नही होता, जितना सोफिया को। मै उसके दु ख से इतना अभिभूत हो जाता हूँ कि अपने दु ख को भूल जाता हूँ। सोफिया इस दु ख के बोझ के मारे दब गई है। जब कभी उसे कोई पीडा होती थी या कोई समझ में न आने वाली वेदना या कोई अटपटी चिन्ता, तो वह अपने इस बच्चे के प्रेम का सहारा ढूंढ लेती थी और यह बच्चा भी असाधारण गुणो वाला था। ईश्वर ऐसे बच्चो को दुनिया मे जल्दी भेज देता है, जब कि दुनिया उनका स्वागत करने के लिए तैयार नही होती। अब जब कि यह बच्चा मेरी पत्नी से छिन गया है उसे इस दुनिया में अपना कुछ नही दीख पडता…वह सर्वथा वचित हो गई है।"

दैव दुर्विपाक से ससार मे ऐसी घटनाएँ घटती है और घटती रहेगी। टालसटाय की पत्नी का मातृ-हृदय इसी बात से कुछ सन्तोष पा रहा था कि अन्तिम समय में बेहोश हो जाने के कारण उनके बच्चे को ज्यादा कष्ट नही हुआ और टालसटाय अपनी पत्नी के महान् दु ख के सामने अपना दु ख भूल जाते थे। पुत्र-वियोग के वज्र-पात से पीडित इस दम्पति के ६१ वर्ष पहले के ये उद्गार आज भी हमारे हृदय के वेदनामय तारो को झकृत कर देते है।

१७ मार्च सन् १७५२ की रात को अग्रेजी के महान् लेखक डाक्टर जानसन की पत्नी का स्वर्गवास हो गया और उसी वक्त उन्होने अपने मित्र रैवरैण्ड डाक्टर टेलर को एक अत्यन्त मर्मभेदी पत्र भेजा। टेलर साहब भी उसी समय उठकर उनकी सेवा में पहुँचे। दोनो मित्रो ने तभी स्वर्गीय आत्मा की सद्गति के लिए प्रार्थना की। दुर्भाग्यवश डाक्टर जानसन का वह पत्र सुरक्षित नहीं रह सका, पर वह चिट्ठी जो उन्होने दूसरे दिन लिखी थी वह सुरक्षित है। डाक्टर जानसन ने उसमे लिखा था—

प्रियवर,

पधारिये और मुझे कुछ नसीहत दीजिये। मुझ से दूर न रहिये। मै बहुत दु खी हूँ। कृपाकर अपनी पत्नी श्रीमती टेलर से पूछकर यह लिखते लाइये कि मै अपनी माता तथा पुत्री के लिए शोकसूचक क्या-क्या चीजें खरीदूं। अपनी ईश्वर प्रार्थना के समय मुझे याद कर लिया कीजिये, क्योकि मनुष्य द्वारा दी हुई मदद बेकार है।

विनीत

१८ मार्च १७५२ सैम जानसन

"Do not live away from me. my distress is great." इन दो वाक्यो मे कितनी मार्मिक वेदना छिपी हुई है । दो सौ वर्ष बाद भी ये वाक्य विशेषत उन व्यक्तियो के हृदय को, जिनके जीवन मे ऐसी दुर्घटना घट चुकी है, झकझोर सकते है । अगर हमारी धृष्टता क्षन्तव्य समझी जाय तो हम अपने पूज्य पिताजी का एक पत्र उन्ही के अक्षरो मे उद्धृत कर दें, जो उन्होने मेरे छोटे भाई के स्वर्गवास की खबर पाने पर लिखा था । उस समय पूज्य कक्का की उम्र ८४ वर्ष की थी और रामनारायण कुलजमा २८ वर्ष का था । वह आगरा कालेज मे इतिहास का अध्यापक था ।

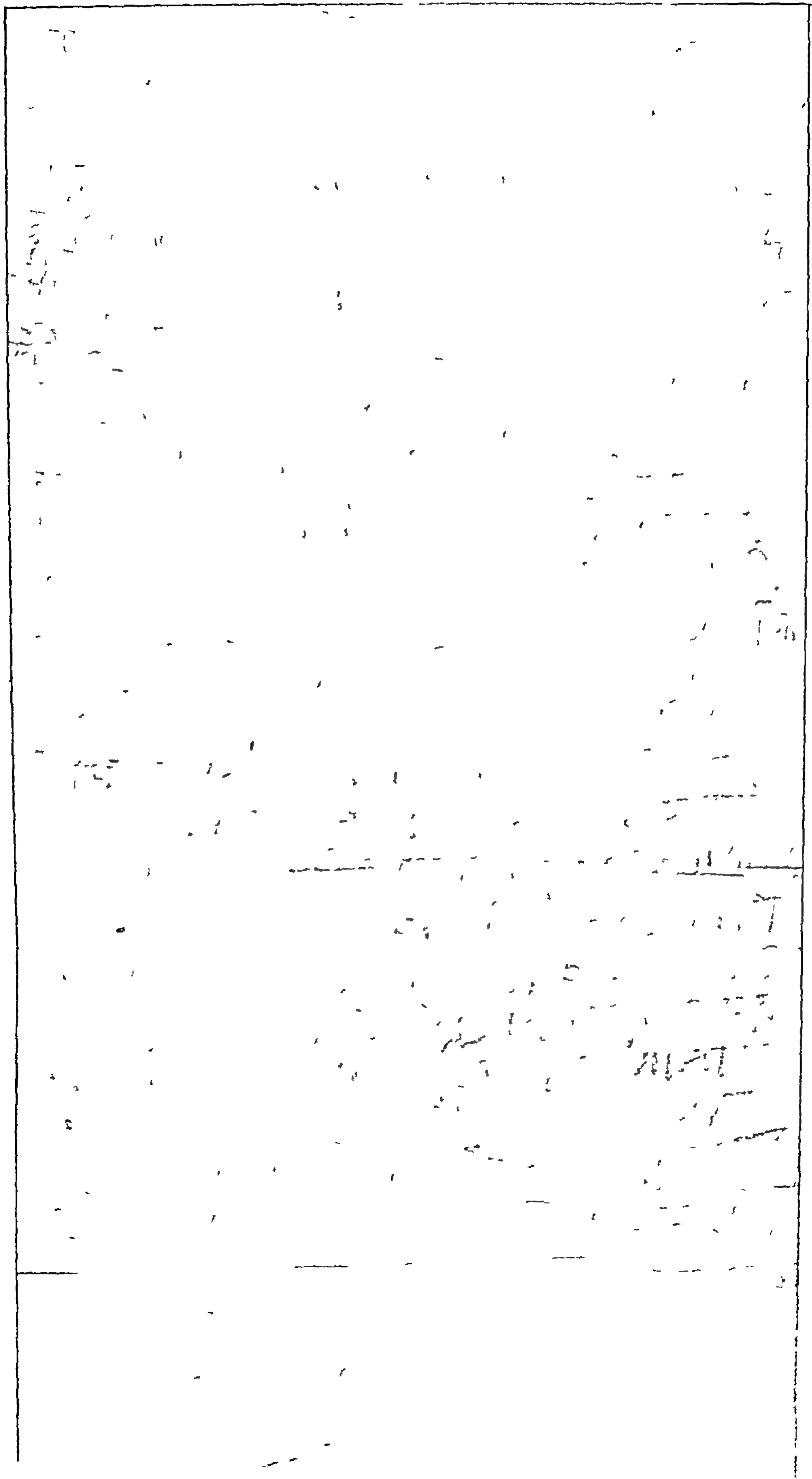
श्रीराम

ता० ८-१०-३६

यहाँ सब कुशल है ।

श्रीपत्री चि. बनारसी चिट्ठी मेरी बहुत पहुँची । तुमने इस मुसीबत की हालत में कुछ नसीहत सीखी होगी आसा है कि, तुम मेरी बातो से अक्सर सीखा करते हो और अमल भी करते हो और हम अपने निश्चय से दृढ विश्वास से हटते नही है कि उसके उपकारो का अन्त नही है । कहा है अखीर वक्त पर औषधी जानवी तोय वैद्यो नारायणो हरी पर विश्वास रखना हर हालत मे उसी को पहले सुमिर कर काम करना चाहिए । वह अतरयामी है । अपना किया कुछ नही होता है । देख लिया आँखो से । किसी ने कहा कि खुदा खैर करे अब भी छिन मे कुछ से कुछ होता है । अपना तो खाली विचार है । तभी तो कहा है । 'अपनी बनाई कछू न बनै बनिहै प्रभु मेरे तुमारी बनाई ।' बस यही निश्चय रखो, कोई अखबार सहज भाषा का छोटा-सा ज्ञान देने वाला हो तो अच्छा हो । रामायण अच्छे छापे की अर्थ समेत तुम्हारी मा के पास थी । ब्रजविलास खासकर बच्चो को लाना । मानी बहुत अच्छा लगाती थी । समय-समय का । रामायण घर में मौजूद है माता की । लिखो तो तुम्हारे ही कहने से देखा करे, अच्छा है । दुनिया उमीद पर कायम है । निराशा बुरी होती है । कहा है 'रीते भरै, भरे ढरकावै महर करैं तो फेरि भरै ।' वह सर्वशक्तिमान है ।

आरम्भ से अन्त तक यह सारा पत्र आस्तिकता तथा ईश्वर विश्वास और असाधारण दृढता से परिपूर्ण है और साथ ही उसमे आशा का एक सन्देश भी है । मेरे अनुज का देहान्त ६ अक्टूबर १९३६ को हुआ था और यह पत्र ८ अक्टूबर का लिखा हुआ है । ८४ वर्ष के एक वृद्ध के लिए अपने २८ वर्षीय युवा पुत्र के चले जाने पर ऐसा पत्र लिखना कोई आसान काम न था । उस समय स्वय मेरे हाथ मे कम्पन हो गया था । पर कक्का मर्द आदमी थे । उन्हे हजारो दोहे, कवित्त और लोकोक्तियाँ कण्ठस्थ थी । वे प्राय कहा करते थे "हारियै न हिम्मत बिसारियै न हरि नाम, जाहि बिधि राखै



राम ताही विधि रहिये"। इस दुर्घटना के ८ वर्ष बाद तक कक्का और जीवित रहे और अपने जीवन के अन्तिम दिनो तक निरन्तर परिश्रमपूर्ण जीवन व्यतीत करते रहे।

महापुरुषों के पत्र

नवम्बर सन् १९१३ में लैनिन ने गोर्की को एक मजेदार पत्र लिखा था—

आपकी यह खबर पढकर कि आप एक बोलशेविक डाक्टर से इलाज करा रहे है—किसी नये तरीके से—मुझे दरअसल बहुत फिक्र हो गई है। खुदा इन 'कामरेड' डाक्टरो से—खास तौर पर बोलशेविक डाक्टरो से—हमारी रक्षा करे। मै सच कहता हूँ—मज़ाक नही करता—इन कामरेड डाक्टरो मे ९९ फीसदी गधे होते ह। एक अत्यन्त कुशल डाक्टर ने मुझे यह बात बतलाई थी। मै दृढतापूर्वक आप से यही कहूँगा कि मामूली बीमारियो को छोडकर सभी बीमारियो में हमें विदेशी-विशेषज्ञो से ही इलाज कराना चाहिए। अगर आप जाड़े के दिनो मे यात्रा कर सकें तो स्विटज़रलैण्ड और वियेना के सर्वोत्तम डाक्टरो के पास जावें। अगर आपने ऐसा नही किया तो यह अक्षम्य अपराध होगा। तबीयत अब कैसी है ?"

अक्टूबर सन् १९२१ की बात है। मास्को में सफाई सप्ताह मनाया जा रहा था। सोवियत सरकार ने उसके लिए लाखो रूबल मजूर कर दिये थे। लैनिन ने उस वक्त अपने २४ अक्टूबर के पत्र में शासन के प्रधान की हैसियत से स्वास्थ्य-विभाग के मन्त्री को लिखा था।

"इज़वेंस्टिया अखबार में सफाई सप्ताह के समाचार पढकर मेरी यह आशङ्का और भी दृढ हो गई है कि यह सफाई का काम बिल्कुल रद्दी फालतू तरीको से हो रहा है। सरकार के लाखो रूबल खर्च होगे, लोग अपनी जेब भरेंगे और काम कुछ नही होगा। मास्को के बडे-से-बडे घरो में जो "सोवियत गन्दगी" पाई जाती है उनसे ज्यादा शर्मनाक चीज दूसरी कोई हो ही नही सकती। मुझे सक्षेप मे, पर बिल्कुल व्यावहारिक ढग पर और ठीक-ठीक लिखिये कि सफाई सप्ताह में क्या काम हुआ ? और इस काम को करा कौन रहा है ? क्या वह ऐसे क्लार्कों के जिम्मे है, जिन्हे बडी-बडी सोवियत उपाधियाँ मिली हुई है पर जो अपने काम के बारे में खाक नही समझते और जो सिर्फ कागजो पर दस्तखत करना जानते है ? या फिर कोई योग्य आदमी इस काम को सँभाल रहे है ? और कौन है वे ? क्या वे विश्वसनीय भी है, जो अपनी जिम्मेवारी समझ सकें ? व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की भावना को उत्साहित करने के लिए क्या किया जा रहा है ? कार्य का निरीक्षण कौन कर रहा है ? इन्सपैक्टर लोग ? उनकी सख्या कितनी है ? कौन-कौन है वे ? युवक मण्डल ? कोई है क्या ? कितने ? और उनकी योग्यता कहाँ पर प्रमाणित हुई थी ? दरअसल कण्ट्रोल कौन कर रहा है ?

जरूरी चीजे खरीदने पर क्या कुछ पैसा खर्च हो रहा है ? कारबोलिक पर ? सफाई के औज़ारो पर ? कितनी चीजें खरीदी गई है ? या सारा रुपया बेकार आफिसरो पर ही खर्च हो रहा है।

प्रेसीडेण्ट सोवनारकम्} वी. उलिया नौव (लैनिन)"

पत्रो से मनुष्य के चरित्र पर पर्याप्त प्रकाश पडता है, लैनिन के उपर्युक्त दोनो पत्र इस तथ्य के जीते-जागते प्रमाण है । इनका महत्त्व इसलिए और भी ज्यादा है कि ये निजी थे और इनके प्रकाश का खयाल स्वप्न मे भी लैनिन को न आया होगा।

महात्मा गाधी—पत्र-लेखक के रूप मे—

जिन्दगी मे जितना पत्र-व्यवहार महात्मा गाधी को करना पडा उतना शायद ही किसी को करना पडा होगा। दुर्भाग्य की बात यही है कि जो सहस्रो पत्र महात्माजी के पास आये, उनमें बहुत ही कम सुरक्षित रह पाये है । हाँ, महात्माजी के द्वारा भेजी गई सहस्रो चिट्ठियाँ सुरक्षित है। यद्यपि अभी तक उन सब का सग्रह गाधी स्मारक सग्रहालय नही कर पाया है। सहस्रो ही व्यक्ति बापूजी से प्रेरणा पाते थे । बापू जी उनकी शङ्काओ का समाधान करते थे, उनके घरेलू जीवन की ग्रन्थियाँ सुलझाते थे, दु ख में उन्हे सान्त्वना देते थे और उनका पथ-प्रदर्शन करते थे। नित्य प्रति तीन-चार घण्टे बापूजी को पत्र-व्यवहार करने मे बीतता था और कभी-कभी तो उससे भी ज्यादा। उनके अनेक पत्रो मे ऐसे वाक्य है जो मन्त्र जैसे प्रभावशाली है । मेरी पत्नी की मृत्यु के बाद उन्होंने मुझे लिखा था—

"इस दु ख में से शक्ति उत्पन्न कर लो।" और पूज्य पिताजी के स्वर्गवास पर लिखा था—"और मरता है कौन ? जीव तो हर्गिज नही, जिसके साथ हमारा सम्बन्ध था और है और रहेगा।"

महात्माजी के दो महत्त्वपूर्ण पत्र, जो उन्होने पण्डित तोतारामजी सनाढ्य को लिखे थे यहाँ उद्धृत किये जाते है—

पहला पत्र रात को दो बज के पाँच मिनट पर लिखा हुआ। उसका इतिहास प० तोतारामजी सनाढ्य के शब्दो में उसके साथ ही सम्बद्ध है । यह बात ध्यान देने योग्य है कि प० तोतारामजी की पत्नी बीमार तो अवश्य थी और बापू उनका इलाज कर रहे थे लेकिन वे इतनी बीमार नही थी कि उनके लिए बापू का दो बजे उठना अनिवार्य हो जाता । पर कर्तव्य के विषय में बापू अपने पर काफी कठोर बन जाते थे। इस पुर्जे का महत्त्व इसलिए और भी बढ जाता है कि उसके छपने की कल्पना उन्होंने कभी न की होगी।

गंगा देवी बीमार थीं
दिन में तीन बार उनको
[illegible] देखने जाते थे [illegible]
कुछ न इलाज में [illegible]
[illegible] करने की सूचना
मुझे देने की [illegible]
[illegible] पर भूल गये जब
तीसरे दिन रात में याद
आई उस समय रात
को २ बजकर पांच मिनट
[illegible] उसी समय यह
सूचना की चिट्ठी
एक बहिन के हाथ
रात में मेरे पास
भेजी थी।

[illegible]

दूसरा पत्र कृषि सम्बन्धी है और उसमे हम लोगो के लिए एक सन्देश है।

भाई तोतारामजी,

तुम्हारा विवरण अच्छा
लगा - गहाई का गान
गाना बहुत अच्छा. और
हलों का गाना भी तुम्हें
बहुत प्रिय लगा। हमारा
प्रत्येक कार्य प्रभु का
भजन हो, होना चाहिए
विवरण द्वारा पढ़कर मुझे
मेरी आकांक्षा तो यह है
कि हम इतने फल और
इतनी भाजी पैदा करें
जो हमारे लिये पर्याप्त हो।
यदि गोमाता के लिये भी
घास आदि पैदा करें और

आश्रम के लिये [illegible]
सेवा को पूर्ण आहुति [illegible]
इन [illegible] से इसने थोड़ा
ज्यादा [illegible] नहीं हुआ
[illegible] में [illegible] सब काम
[illegible] हुआ लेकिन मैं
जानता हूं कि यह सब
[illegible] है इसकी
[illegible] सब [illegible] न किया,
और [illegible] सबक से मैं ने
इस [illegible] ज्यादा की है
[illegible]. इसकी बड़ी चीजों
में से है जो करने का [illegible]
[illegible]
पर आया.

१५-८-३३ बापु

महात्माजी के पत्रो पर तो एक विस्तृत ग्रन्थ ही लिखा जा सकता है ।

कुछ अन्य पत्र

यहाँ हम पाठको के मनोरंजनार्थ कुछ पत्रो के चित्र प्रकाशित कर रहे है। पहला पत्र है माननीय श्रीनिवास शास्त्री का, जो उन्होने सन् १९२४ मे मुझे लिखा था। यह पोशाक के बारे मे है। मैंने शास्त्रीजी की सेवा मे एक चिट्ठी भेजी

Govind Bhavan, Shankarpur
Basavangudi P.O., Bangalore City
10 December 1924

My dear Benarsi Das,

Don't break your heart over your conventional dress. If you live long enough and become famous enough and make yourself indispensable, you can dress some day as scantily and as originally as ever you please. Look at Mr. Gandhi, his dress is evolving in proportion to his fame — only as the latter increases the former decreases. But no smaller man dares keep step with him in

थी जिसमे मैंने विलायती ढङ्ग की पोशाक पहनने मे अपनी असमर्थता प्रकट की थी। उन दिनो मेरे मारीशस जाने की बात चल रही थी और अपना कुछ-कुछ मज़ाक उडाते हुए मैंने शास्त्रीजी को सारा वृत्तान्त लिख भेजा। उस दिल्लगी के परिणाम-स्वरूप मुझे यह चिट्ठी मिली जो कई दृष्टियो से महत्त्वपूर्ण है—

that respect Even Das & Nehru still cover a great part of their bodies. When you go out of India, you cannot afford to defy convention at all, unless you don't care for your specific mission and consider it sufficient just to defy convention & earn what notice that brings. It is a funny world, Banarsi Das, we have to live in; bend first to it & become great. Then you can make it bend to you. Did Gandhi always dress like this? If he had begun so, he would have ended differently. Forgive a little lecture from one who loves you—

[illegible signature]

प्रेमचन्दजी का पत्र

दूसरा पत्र है स्वर्गीय प्रेमचन्दजी का, जो उन्होने १ दिसम्बर, १९३५, को मुझे लिखा था। इस पत्र का एक अश काफी उद्धृत हुआ है। एक रूसी लेखक ने भी



1762 -

THE MAGAZINE WORKING FOR A COMMONWEALTH OF LITERATURES IN INDIA



Proprietors
THE HANS LIMITED
Editors
PREMCHAND
&
KANAIYALAL MUNSHI

Bombay 111 Esplanade Road
Benares Hans Karyalaya

1st Dec 1935

My dear Benarsi Das ji

I read your card & thank you for it. How I wish I could attend Noguchi's lectures but [illegible] to leave the family is the problem. The boys are at Allahabad and then I go [illegible] better half would feel so lonely and helpless. If I take her with me, I must have a decent amount to spend. So it's better to be tied down to home, than feel the pinch of money. [illegible] to keep young is a question of [illegible]. I have seen youths older than myself and elderly people younger than myself. But I hope I am growing younger every day [illegible] the idea of otherworldliness which is the [illegible] of youth does not approach me. Of course there is a healthy youth and a dead youth. Healthy youth

अपने लेख मे उसे उद्धृत किया था, यद्यपि उन्होने यह नही बतलाया था कि पत्र कहाँ से लिया गया था और किसे लिखा गया था।

तृतीय और चतुर्थ पत्र क्रमश मौलाना हाली और महाकवि अकबर के है, जो उन्होने आचार्य पद्मसिंहजी को लिखे थे।

[illegible]

मौलाना हाली साहब का पत्र 'परोपकारी'-सम्पादक प० पद्मसिंहजी के नाम

हिन्दी अनुवाद

पानीपत
१८ अगस्त, १९०८

जनाब एडीटर साहब,

रिसाला 'परोपकारी' की एक कापी मरसल[1] जनाब पहुँची। यादआवरी का शुक्रिया अदा करता हूँ। मुझे इस बात के दरियाफ्त होने से बे इतहा खुशी हुई कि प० भीमसेनजी ने मनाजात बेवा को बहुत पसन्द किया और उसको इस काबिल समझा कि संस्कृत मे उसका मनजूम तरजुमा[2] किया जाय। जो कुछ आपने अपने रिसाले मे नज़्म मज़कूर[3] पर उमदा रीमार्क्स फरमाये है, इसका भी मैं दिल से शुक्रिया अदा करता हूँ। मैं निहायत ममनून[4] हूँगा अगर आप मेहरबानी फरमाकर रिसाला 'परोपकारी' के पर्चे जब तक कि उसमे संस्कृत का मनजूम तरजुमा छपता रहे मेरे पास भेजते रहेंगे। मैं इन तमाम पर्चों को जमा करके पानीपत की पब्लिक लायब्रेरी मे, जहाँ संस्कृत की किताबें भी दाखिल की गई है, दाखिल करूँगा।

मैंने कई साल हुए एक नज़्म खास औरतो के मुतल्लिक लिखी थी, जिसका नाम "चुप की दाद" है और (जिसको अलीगढ की कमेटी तालीमे-नुसवाँ[5] ने रिसाला 'खातून' के अलावा किताब की सूरत मे भी अलहदा छपवा दिया है।) उसकी कोई कापी इस वक्त मेरे पास मौजूद नही है। अगर वह नज़्म आपकी नजर से न गुज़री हो तो आप मुझे मतला[6] फरमायें ताकि उसको कही से बहम पहुँचाकर आपको भेज दूँ। ज्यादा नयाज़।

खाकसार
हाली

---

१ भेजी हुई। २ कविता मे अनुवाद। ३ उक्त। ४ कृतज्ञ। ५ नारी शिक्षा समिति। ६ सूचित।

پانی پت - ۱۸ اگست ۱۹۰۶

جناب ایڈیٹر صاحب.

رسالہ پروگریس کے ایک جلد کی جو مرسل جناب نے بھیجی یاد آوری کا شکریہ ادا کرتا ہوں۔ مجھے اس بات کے دریافت ہونے سے بے انتہا خوشی ہوئی کہ پنڈت ہیم سین جی نے مناجات بیوہ کو بہت پسند کیا اور اُسکو اس قابل سمجھا کہ سنسکرت میں اُسکا منظوم ترجمہ کیا جائے۔ جو کچھ آپ نے اپنے رسالہ میں نظم مذکور پر عمدہ ریمارکس فرمائے ہیں اُسکا بھی میں دل سے شکریہ ادا کرتا ہوں۔ میں نہایت ممنون ہوں گا اگر آپ مہربانی فرما کر رسالہ پروگریس کے پرچے جب جب کہ اُنمیں سنسکرت کا منظوم ترجمہ چھپا ہے میرے پاس بھیجدیں گے میں ان تمام پرچوں کو جمع کرکے ایک جلد میں پانی پت کی پبلک لائبریری میں جہاں سنسکرت کی کتابیں بھی داخل کی گئی ہیں داخل کردونگا۔

میں نے کئی سال ہوئے ایک نظم خاص عورتوں کے متعلق لکھی تھی جس کا نام (چپ کی داد) ہے اور جسکو علیگڈھ کی کمیٹی تعلیم نسوان نے رسالہ (خاتون) کے علاوہ کتاب کی صورت میں بھی علیحدہ چھپوا دیا ہے) اُسکی کوئی کاپی میرے پاس اسوقت موجود نہیں ہے اگر وہ نظم آپ کی نظر سے نہ گذری ہو تو آپ مجھے مطلع فرمائیں تاکہ میں اُسکو علیگڈھ سے بہم پہنچا کر آپ کی خدمت میں بھیجدوں۔ زیادہ نیاز

خاکسار

حالی

महाकवि अकबर का पत्र प० पद्मसिंह शर्मा के नाम

हिन्दी अनुवाद

मेरे प्यारे पण्डित साहब खुश रहिये, तन्दरुस्त रहिये।

आपके खत को आँखे ढूँढती थी। मुद्दत के बाद अनायतनामा आया। बहुत मसर्रत[1] हुई। खुदा करे आपके दर्शन भी मयस्सर हो। आप लिखते है कि आपने अलाहाबाद होकर सफर किया, मैं प्रतापगढ मे था। आपका खत वही मिला। निहायत अफसोस हुआ। कुछ न समझ सका कि कहाँ जवाब लिखूं।

अव्वल हिस्सा बिल्कुल खतम हो गया। पाँचवाँ एडीशन छप रहा है। शायद इसी महीने मे मिल जाय। उसी वक्त वह भेजा जायगा। दूसरे हिस्से की कुछ जिल्दे बाकी है। उसकी एक कापी आपके दोस्त को रवाना हो रही है। तीसरा हिस्सा हनूज़[2] मुरत्तब[3] नही हुआ। जमाने के हालात और तबीयत की नादरुस्ती ने बहुत कुछ अफसुरदा किया। बहरकैफ अब फिक्र कर रहा हूँ। जिदगी है और कोई अमर माना न हुआ[4] तो इशाअल्लाह सन् '१८ मे तबा[5] हो जायगा। आपकी काबलीयत और सुख़न फहमी ने मुझको आपका आशक बना दिया है। मेरे लिए दुआ फरमाया कीजिए। अब बजुज़ यादे खुदा और जिक्रे आखरित के कुछ जी नही चाहता लेकिन इसी रग के सच्चे साथी नही मिलते। आप बहुत दूर ह।

अकबर हुसैन

---

१ प्रसन्नता। २ अभी। ३ तरतीब देना। ४ अमर माना न हुआ = कोई बाधा न आ पड़ी। ५ प्रकाशित।

[illegible] صاحب خوش رہیے [illegible]

آپ کا خط [illegible]

[illegible] —

[illegible] الہ آباد [illegible]

[illegible] جواب [illegible] —

اول [illegible]

آخر وقت [illegible]

آپکا [illegible]

[illegible]

[illegible] —

آپ کی [illegible] ممکن نہیں [illegible]

[illegible] لیکن [illegible]

اکبر حسین

آپکا [illegible]

कविवर सत्यनारायणजी के चार पत्र

सत्यनारायणजी कविरत्न के प्रथम तीन पत्र प० पद्मसिंहजी के नाम लिखे गये थे । पहला पत्र कविरत्नजी ने हरद्वार से लौटकर लिखा था, दूसरा शर्माजी के पत्र न आने पर लिखा गया था, और तीसरे पत्र मे तो कविरत्नजी ने अपने चरित्र का चित्रण ही कर दिया है ।

सुधि रहि २ आवत तव संग की रँगरलियाँ
नव नयनाभिराम श्यामल वपु शील गंगातट गलियाँ
हँसि मुसकानि निहारनि बिकसत प्रेम २ की कलियाँ
नित गरीब को फेरि देउ मन भलीन पै चलबलियाँ

पद्म तव हृदय बड़ो बेपीर
सोचत भयो यह भँवर बिचारो कब तें महा अधीर
टाढ़ि अधर दल तातिक न बोलत ना अपराध बतावै
पुरवत साध न याके मन की टेरि २ पै हारो
कोमल प्रान कहावत तोऊ कठिन भये अब ऐते
काऊ को दुख दरद न मानत जानत ना कछु जैसे

आई तव पाती
नाहिं बिसरायो अजहूँ मोहि पहिचानि सिरानी छाती
बड़े भाग जो इतने दिन मैं सोधि कछु सुधि लीनी
दरस-पियासा कुल कों आछी-जीवन-आशा दीनी
जो जो सो हँसि मिले होत मैं तासु निरन्तर चेरो
बस गुनहीगुन निरखत तिह-कारे सरल प्रकृति को जो
यह स्वभाव को रोग जानिये मेरो बस कछु नाहीं
नित नवनि बल रहत याही सों देखत हृदय बिदरि जाहीं
त्यों गत-दोषित तन बेबस आशा प्रीति-ज्यों मैं
जोते सम प्राकवै काली कहा "नकुलांक" जामैं
२६-१२-१५

कविरत्नजी का यह चौथा पत्र किसी महिला को लिखा गया था।

कली सी अबढ़ फूल भई
मन मधुकर बहु आस लगाये तो लौ प्रेम मई
विकसत रूप अंग दल प्रतिपल शिशुता [illegible]
रह्यो कछु अजान तोहि जो अब ऐसी हठ ठानी
चार दिनन की लहरि महा है आवत बीते रीते
ऐसो करहु न जो पछितावौ पाछे अवसर बीते
सो चित सखि ये कीजै कारज जग स्वारथ को
सधै लोक परलोक माहि तो सफल जिवावन चेरो
मेरो

आचार्यजी के तीन पत्र—

प० पद्‌मसिंहजी स्वय बहुत अच्छे पत्र-लेखक थे जैसा कि इस संग्रह से पाठकों को ज्ञात हो ही जायगा। इस विषय पर तो एक निवन्ध ही लिखा जा सकता है।

ॐ १२, आशुतोष दे लेन,
[illegible] भवन,
कलकत्ता.
१०।१०।२८

प्रिय वाजपेयीजी नमस्कार।

विशाल-भारत में आपका [illegible] [illegible] [illegible] में बहुत कम लोग हैं, ऐसी हालत में [illegible] इसीलिये [illegible] [illegible] हिन्दी [illegible]

[illegible]

[illegible]

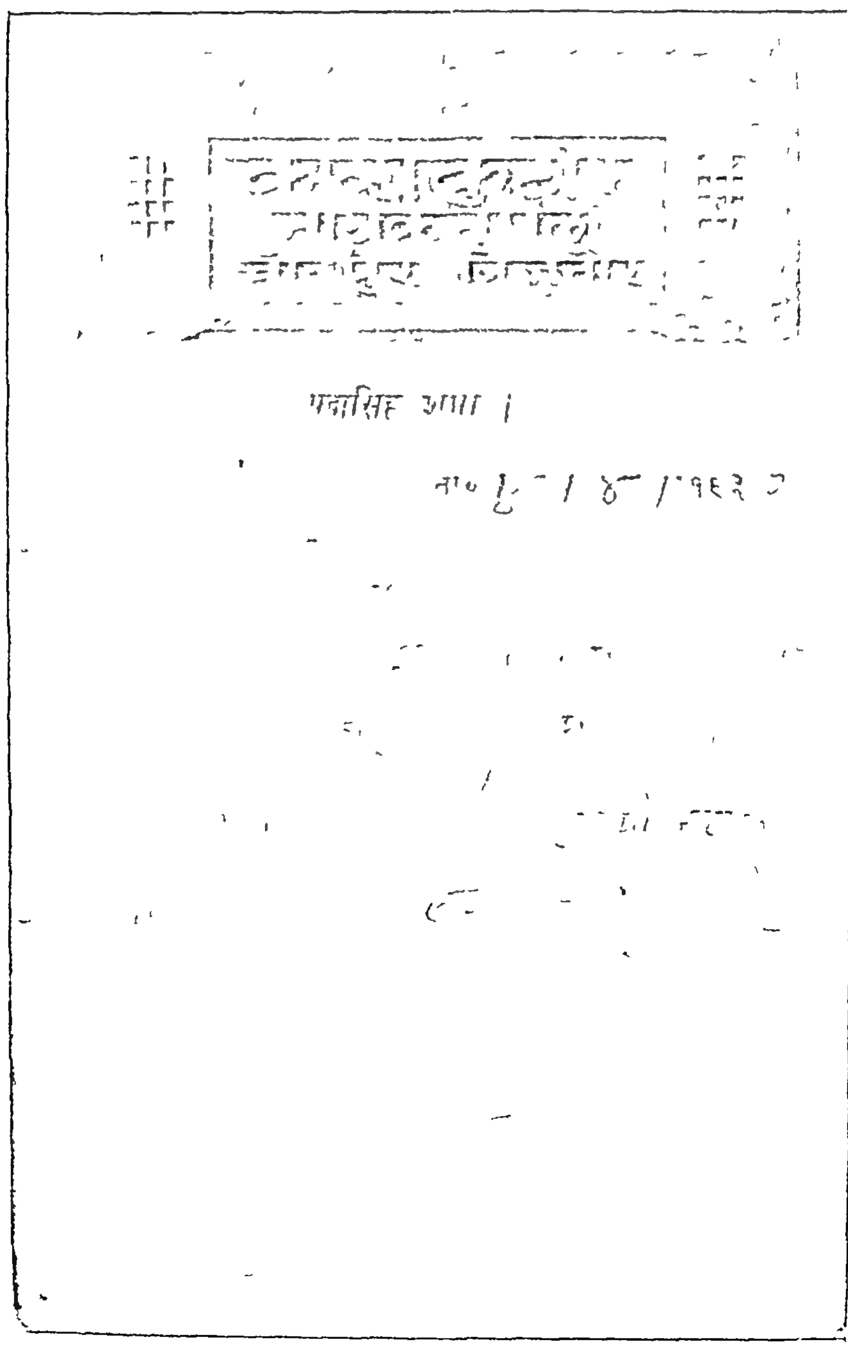
पद्मसिंह शर्मा

फिर भी उनके तीन पत्र यहाँ उद्धृत किये जाते हैं, जिनसे उनके स्वभाव पर प्रकाश पडता है। प्रथम पत्र सन् १६२६ का है, और दूसरा मृत्यु के पन्द्रह दिन पहले का, और तीसरा मृत्यु के तीन दिन पूर्व का ही। प्लेग के दिनो मे रोगियो की सेवा-सुश्रूषा करते हुए आचार्यजी ने अपने प्राण गँवाये। समाज-सेवा का यह अद्भुत उदाहरण अत्यन्त प्रशंसनीय है, यद्यपि उसका अनुकरण करने वाले बहुत थोडे ही निकलेगे।

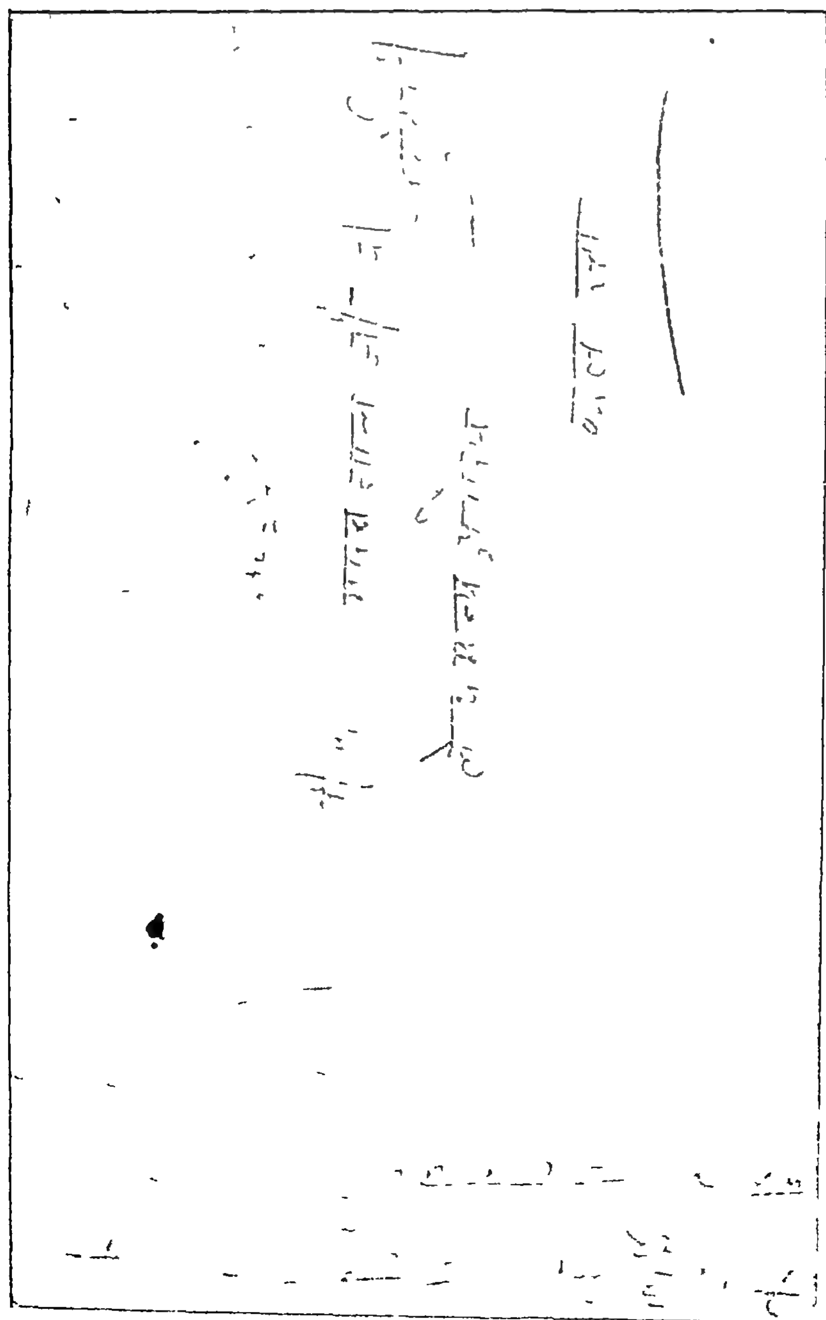
पद्मसिंह शर्मा

काव्य-कुटीर
नायक नगला,
डा० चाँदपुर (बिजनौर)

बात यह थी कि 'लोकमान्य'-सम्पादक बन्धुवर मदनलालजी चतुर्वेदी ने बिहारी के एक दोहे की व्याख्या पर कुछ लिखा-पढी प्रारम्भ कर दी थी । २६ मार्च से प्लेग मे ग्रस्त होते हुए भी ४ अप्रैल को आचार्यजी ने उनके पत्र का उत्तर भिजवाना जरूरी समझा । दस दिन से पीडित प्लेग का कोई मरीज भला इस बात की क्या चर्चा कर सकता है कि अमुक दोहे का पाठ शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' ने क्या लिखा है ? अगर



आचार्यजी उत्तर न भी देते तो भाई मदनलालजी कभी भी इसका बुरा मानने वाले न थे, पर किसी साहित्यिक जिज्ञासु की उपेक्षा करना वे अक्षम्य अपराध मानते थे, इसलिए उस भयकर बीमारी मे भी उन्होने उत्तर लिखाया। मातास रस्वती के लिए इस प्रकार का अर्घ्य दान किसी भी साहित्य के इतिहास मे एक चिरस्मरणीय घटना मानी जायगी।



स्टीफ़न ज्विग का अन्तिम पत्र

अन्त मे हम विश्वविख्यात लेखक स्टीफन ज्विग के उस पत्र को उद्धृत करते है, जो उन्होने अपनी पत्नी के साथ विष-पान करने के पहले २२ फरवरी, सन् १९४२ को लिखा था—

Declaração

Ehe ich aus freiem Willen und mit klaren Sinnen aus dem Leben scheide, drängt es mich eine letzte Pflicht zu erfüllen diesem wundervollen Lande Brasilien innig zu danken, das mir und meiner Arbeit so gute und gastliche Rast gegeben. Mit jedem Tage habe ich dies Land mehr lieben gelernt und nirgends hätte ich mir mein Leben lieber vom Grunde aus neu aufgebaut, nachdem die Welt meiner eigenen Sprache für mich untergegangen ist und meine geistige Heimat Europa sich selber vernichtet.

Aber nach dem sechzigsten Jahre bedürfte es besonderer Kräfte um noch einmal völlig neu zu beginnen. Und die meinen sind durch die langen Jahre heimatlosen Wanderns erschöpft. So halte ich es für besser, rechtzeitig und in aufrechter Haltung ein Leben abzuschliessen, dem geistige Arbeit immer die lauterste Freude und persönliche Freiheit das höchste Gut dieser Erde gewesen.

Ich grüsse alle meine Freunde! Mögen sie die Morgenröte noch sehen nach der langen Nacht! Ich, allzu Ungeduldiger, gehe ihnen voraus.

Stefan Zweig

Petropolis 22 II 1942

निवेदन

"स्वेच्छा से और अपने होश-हवास की दुरुस्तगी मे अपने प्राण-त्याग करने के पहले मैं अपना अन्तिम कर्तव्य-पालन करना चाहता हूँ। मैं ब्रेजिल देश की आश्चर्य-जनक भूमि को, जिसने मुझे प्रेमपूर्ण आश्रय दिया, हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। इस भूमि-खण्ड के प्रति मेरे हृदय मे श्रद्धा दिनोदिन बढती ही गई है और यदि कोई ऐसा देश है, जहाँ मै अपना जीवन पुन प्रारम्भ कर सकता था तो वह ब्रेज़िल ही है; क्योकि मेरी मातृ-भाषा की भूमि मेरे लिए समाप्त हो चुकी है और मेरी आध्यात्मिक मातृ-भूमि को यूरोप ने आत्मघात कर लिया है।

"लेकिन अब मै साठ वर्ष से ऊपर का हो चुका और अब विल्कुल नवीन जीवन प्रारम्भ करने के लिए असाधारण शक्ति की आवश्यकता है। जो शक्ति मुझ मे थी, वह वर्षो तक लामकान होकर इधर-से-उधर भागे फिरने मे खर्च हो चुकी है। इसलिए मै यही ठीक समझता हूँ कि इस जिन्दगी का खातमा कर दिया जाय। जिस जीवन मे मुझे बौद्धिक परिश्रम से सबसे अधिक आनन्द मिला और जिसमे मैंने व्यक्तिगत स्वाधीनता को ही संसार की सर्वोच्च वस्तु समझा, उसकी समाप्ति ठीक समय पर, जब कि मै तनकर खडा हो सकता हूँ, हो जानी चाहिए। सम्पूर्ण मित्रमण्डल को मै नमस्कार करता हूँ। ईश्वर करे कि दीर्घरात्रि के बाद उषा के दर्शन करने का सौभाग्य उन्हे प्राप्त हो। मै तो अपना धैर्य खो चुका हूँ, इसलिए उसके पहले ही विदा होता हूँ।

पैट्रोपोलिस
२२-२-४२

स्टीफन ज़्विग

ज़्विग की रचनाओं का अनुवाद ससार की ३३ भाषाओं मे हो चुका था पर अत्याचारी हिटलर के यहूदी-विरोधी अनाचारो के कारण उन्हे अपने देश आस्ट्रिया को छोडकर विदेशो मे मारा-मारा फिरना पडा था।

वे जर्मन भाषा के लेखक थे और जर्मनी मे उनके ग्रन्थ जला दिये गये थे। हिटलरशाही और नाज़ीवाद कभी के नष्ट हो चुके, पर ज़्विग का यह पत्र अमर है।

पत्रकार-कला विश्व साहित्य का एक विषय है। वह अन्तर्राष्ट्रीय है। हिन्दी पत्रो को पूरी समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम ससार की अन्य भाषाओं के पत्र-लेखकों के पत्र भी पढ ले। इसलिए यह सर्वथा स्वाभाविक है कि इस लेख का प्रारम्भ

टालसटाय के द्वारा रोमाँ रोलाँ को भेजे गये पत्र से हुआ है और अन्त रोमाँ रोलाँ के एक अनन्य मित्र स्टीफन ज़्विग के पत्र से। यह बात ध्यान देने योग्य है कि यूरोपीय लेखको को प्रोत्साहन प्रदान करने मे स्टीफन ज़्विग वैसे ही अग्रगण्य थे जैसे भारतीय लेखको को 'दाद' देने मे आचार्य पण्डित पद्मसिंहजी शर्मा।

बनारसीदास चतुर्वेदी

३-७-५६

६६, नार्थ ऐवन्यू, नई दिल्ली

पद्मसिंह शर्मा के पत्र

१

श्री पारसनाथसिंह को लिखे गये पत्र

१

C/O आर्यमित्र-सम्पादक, आगरा
श्रा० सुदि १४, सोमवार, १९८२

प्रिय महोदय, प्रणाम ।

२९ जुलाई का कृपा-पत्र यथासमय मिला । अनुगृहीत हुआ । यह आपकी कृपा है—कद्रदानी है, जो मुझे जिन्दा समझते हैं । मुझे तो अकबर के ये शेर अक्सर याद आते हैं ।

"कल मदह वो मेरी करते थे और बज्म मे मैं शरमिन्दा था,
मैं कुछ भी न था और था भी अगर उस वक्त मैं था जब ज़िन्दा था ।"

× × ×

"अफसोस है कि जिन्दा हूँ, लिखना पड़ा है हाल,
क्या मुख्तसिर जवाब यह होता कि मर गया ।"

अस्तु, जिन्दगी-मौत का सवाल बड़ा पेचीदा है । इसे ऐसे ही रहने दें ।

सतसई की भूमिका का भाग छप चुकने पर अपना लेख-संग्रह[1], जिसमें बहुत-सी समालोचनाएँ और फुटकर लेख हैं, भेजूँगा । "शंकर-सूक्ति-संग्रह" के सम्बन्ध में जो सूचनाएँ आपने दी हैं, उनका ध्यान रखूँगा । ऐसा ही होगा । प० हरिशंकरजी से कहा था, (अभी श्रावणी पर घर गये थे) कि सब सामग्री ले आओ । यहाँ सम्पादन कर डालेंगे । पर शंकरजी वहीं बुला रहे हैं । कहते हैं कि १५-२० दिन हरदुआगंज आकर बैठो तो संग्रह हो सकेगा । यहाँ से निपटकर जाने का विचार है । प० बनारसीदासजी को मिलने पर उन मोटे-ताज़े शरीर की याद दिलाऊँगा । और आपकी भेजी बधाइयाँ उन्हें दूँगा । बाकी बातें मिलने पर होंगी ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१. महाकवि नाथूराम शंकर शर्मा की सर्वश्रेष्ठ कविताओं का संग्रह-सम्पादन आचार्यजी 'शंकर-सूक्ति-संग्रह' नाम से करना चाहते थे । लेकिन दुर्भाग्यवश वे ऐसा

२

आगरा, २१-९-१९२५

प्रिय महोदय, प्रणाम।

आपका ९-९ का कृपा-पत्र यथासमय मिल गया था। उत्तर मे इस कारण विलम्ब हुआ कि तगा बिरादरी की संख्या आदि के बारे मे मैने एक 'कौमी लीडर' से पूछा था (मै भी आपकी तरह कौमी झगडो मे सदा उदासीन और तटस्थ रहता आया हूँ। इस विषय का विशेषज्ञ नही हूँ।) कल ही उनका उत्तर आया है। लिखा है, तगा बिरादरी की आबादी यू० पी० और पंजाब के निम्नलिखित जिलो मे दो लाख के लगभग है। पंजाब के अम्बाला, करनाल, रोहतक, हिसार, गुड़गावा और दिल्ली मे और यू० पी० के सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बुलन्दशहर, बिजनौर, मुरादाबाद, अलीगढ, मथुरा, आगरे मे है। इसके अतिरिक्त रियासत ग्वालियर, धौलपुर और करौली मे ये लोग है। वहाँ ये लोग 'गौना पूरब' नाम से प्रसिद्ध है। पर वे अपने को तगा ही समझते और कहते है। यह उनकी रिपोर्ट का सार है। श्री स्वा० सहजानन्दजी महाराज की पुस्तक 'ब्रह्मर्षि वंश-परिचय' मे भी तगो के सम्बन्ध मे लिखा है। उसे भी देख लीजिए। आपका यह विचार तो अच्छा है। मैने भी एक बार बीस वर्ष पहले भूमिहार सभा, काशी के एक अधिवेशन मे यह प्रस्ताव रखना चाहा था, पर कुछ 'पोप' लोगो के विरोध से पेश न हो सका था। अब भी सफलता की आशा तो कम है। लोग 'रूढियो के गुलाम' और अहम्मन्यता की मूर्ति है। बात-बात पर 'सनातन धर्म' बिगडने का डर है। फिर भी महाशय, मै कहूँगा—आपका यह विचार सुधार की दृष्टि से जाति-हित के विचारकोण से परम प्रशंसनीय एवं आदरणीय है। मारवाडी बोली मे 'घणो चोखो छै' ईश्वर का नाम लेकर रूढि के बन्दो से पहलू बचाते हुए, धर्म-प्राण मूर्तियो का अदब मलहूज रखते हुए प्रस्ताव पेश कर दीजिए। प्रस्ताव पेश करते समय तीन बार 'हरये नम' का उच्चारण अवश्य कर लीजिए। श्रीमद्भागवत के सिद्धान्त और पूज्य श्री मालवीयजी के विश्वासानुसार यह 'विघ्ननिवारण' का अमोघ मन्त्र है। काशी के हिन्दू सभा वाले पहले अधिवेशन मे इसी मन्त्र के प्रताप से मालवीयजी महाराज ने धर्म-प्राण पण्डितो के आक्रमण से अपनी जान बचाई थी। सो आप भी इस रक्षा-कवच को न भूले। अधिवेशन के समय जिस दिन आप यह प्रस्ताव पेश करने वाले हो, उस दिन की मुझे ठीक सूचना दीजिए। मै आपकी रक्षा के लिए अनुष्ठान करूँगा। महाभारत मे से उस स्तोत्र का पाठ करूँगा जो जयद्रथ-वध न कर सके। शंकरजी की कविताओ का संग्रह 'शङ्कर-सर्वस्व' नाम से १९५१ ई० मे प्रकाशित हुआ है।

के दिन श्रीकृष्णजी के परामर्शानुसार अर्जुन ने पढा था। पर हाँ, उसका पाठ तो स्वय आपको ही करना चाहिए। उसे याद कर रखिये। प्रतिनिधित्व का विधान होगा तो किसी मन्त्र-शास्त्री से पूछकर मै भी करूँगा। प्रस्ताव-प्रकरण समाप्त हुआ।

आपने अपने 'मौजी' जी का भोंडा और भद्दा मजाक मुलाहजा फरमाया। १४-६ के 'स्वतन्त्र' का विचार-वैचित्र्य देखा—"मालूम होता है पण्डित पद्मसिंह शर्मा सम्मेलन के साथ खिचे फिरते है क्योकि (कुर्बान जाइए इस 'क्योंकि' के) गत वर्ष देहरादूनी सम्मेलन के समय वह ज्वालापुर मे जमकर बैठे थे और अब के आगरे मे आसन जमा है।" इसका क्या अर्थ है। यही न कि मै सभापतित्व की प्राप्ति के लिए मारा-मारा फिरता हूँ! दुहाई है वाजपेयीजी की और पारसनाथजी की! जगदन्तरात्मा साक्षी है और मेरे अनेक अन्तरग मित्र हलफिया बयान दे सकते है कि मै इस विषय मे सर्वथा निर्दोष हूँ। मै इस प्रकार की धृष्टतापूर्ण चेष्टा को नीति-विरुद्ध पाप समझता हूँ। मैने कभी स्वप्न मे भी ऐसी दुश्चेष्टा नही की। मै तो ऐसे प्रसग से बहुत बचता हूँ। मै 'मौजी' जी को भरतजी की तरह प्रतिज्ञा करके विश्वास दिला सकता हूँ कि मै जन्म-भर कही भी सभापति नही बनूँगा। आप 'मौजी' जी से पूछिए तो कि उन्होंने यह कृपा इस निरीह प्राणी पर क्यो की है? मैने तो कभी उनका कोई अपराध नही किया। मै तो उनके 'नियाजमन्दो' मे हूँ। मुझे उनकी इस भोंडी करतूत पर दुःख है। परमात्मा ऐसे 'दोस्तो' से बचावे। क्या यही 'हास्य रस' है, इसी पर उन्हे नाज है। यह तो साफ और बिला वजह दिलाजारी है। मै इसका इन्साफ आप ही पर छोडता हूँ।

आशा है, आप सपरिवार सानन्द है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३

नायक नगला, चाँदपुर (बिजनौर)
वैशाख सुदि ६, १९८३

प्रिय पारसनाथसिंहजी, नमस्कार।

पत्र यथासमय मिल गया था। पर मै इस बीच मे बराबर बीमार रहा। इसलिए न पत्र का उत्तर दे सका और न आपको उस सहृदयता, वीरता और तत्परता के लिए धन्यवाद-साधुवाद दे सका, जो हिन्दू-मुस्लिम-इत्तहाद की बाढ मे आपने दिखाई। समाचारपत्रो मे हिन्दुओ की वीरता, बिडला-बन्धुओ की धीरता और उदारता के कारनामे पढता था और खुश होता था। कलकत्तेवालो को यह पुरुषत्व और पराक्रम चिरस्मरणीय रहेगा। सदियो बाद यह बासी कढी मे उबाल आया और राख की

चिनगारी चमकी। कलकत्ते का यह उदाहरण हिन्दुओं के मुर्दा दिलों में जान डाल दे तो ऐसे उपद्रव वाञ्छनीय हैं और आवश्यक हैं। रोज-रोज हों और सब जगह हों। हर हिन्दू यह कहकर कलकत्ते को मुबारकबाद दे रहा है।

"इकार अज तो आय दो परदा चुनी कुनन्द।"

अब क्या दशा है? हिन्दू कहीं ढीले तो नहीं पड़ गये? बाढ़ पीड़ितों की सहायता का काम जारी है न? परमात्मा मालवीयजी और बिड़ला-बन्धुओं का सा विशाल और दयार्द्र हृदय सब किसी को दे। मुरसन्द्र वाले बन्धु मामला जीत गये। यह जानकर परम प्रसन्नता हुई। आजकल वे लोग कहाँ हैं? मेरी ओर से उन्हें बधाई दीजिये। श्री कार्थीजी आजकल क्या कार्य कर रहे हैं? कहाँ हैं? आपने उस विषय में कुछ योजना तैयार की? कलकत्ते की बाढ़ में शायद अवकाश ही नहीं मिला। कुशल समाचार लिखते रहिये।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

४

काव्य-कुटीर, नायक नगला

चाँदपुर (बिजनौर)

४-८-२६

प्रिय महोदय, प्रणाम।

३०-१ का कृपा कार्ड मिला। 'मिश्रजी' ने सूचना दी थी कि आप काशी में विराजमान हैं, और मेरा कार्ड वहाँ भेज दिया गया है। यह भी मालूम हो गया था कि बिड़लाजी कौंसिल के लिए कमर कस रहे हैं। मेरी सम्मति में बिड़लाजी को व्यर्थ ही कष्ट दिया जा रहा है। कौन्सिलें तो निठल्ले और लीडरत्व-लोलुप लोगों के लिए हैं। बिड़लाजी का एक-एक मिनट कीमती है। उनके अमूल्य समय का दुरुपयोग होगा और मानसिक कष्ट होगा। संसार-भर के दुर्व्यसनों में, मैं कौन्सिलों को प्रधान समझता हूँ। भारत की सामाजिकता के लिए यह क्षय रोग है। कौन्सिलों के बायकाट पर लिखने को तो जी चाहता है, बहुत-सी बातें सूझती हैं। पर वहाँ किसी को भेजने का समर्थन करने के लिए कलम चलाना नहीं चाहता। पर अब जब कि बिड़लाजी का जाना निश्चित हो चुका है, और हमारे 'पीरे-मुगाँ' (मालवीयजी महाराज) आज्ञा दे रहे हैं तो खैर यों ही सही।

ब मे सज्जादा रगीं कुन गरत पीरे मुगाँ गोयद्,
कि सालिक बेखबर न बुवद् ज़े राहोरस्मे मंजिल हो।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

५

महाविद्यालय, ज्वालापुर
२३-४-२७

प्रिय पारसनाथसिंहजी, नमस्कार।

२८-३-२७ का आपका कृपा-पत्र घर से लौटकर मुझे यहाँ यथासमय मिला था। मेले के झमेले मे उत्तर देने का अवकाश न मिला। अब तो आप विलायत जाने की तैयारी मे लगे होंगे। सुना है, पं० राधाकृष्णजी भी साथ जा रहे है। आपका काफला किस तारीख को कहाँ से रवाना होगा? आपकी यात्रा शुभ हो। वरुण देवता अनुकूल रहे। बिरादरी के पंच शान्त रहे। कोई नया बखेड़ा न करे। आप लोगों के मनोरथ सिद्ध हो। यात्रा के मिशन मे कामयाबी हो, यही परमात्मा से प्रार्थना है।

कभी-कभी वहाँ से पत्र लिखा कीजिए। अपनी यात्रा का विवरण भी पुस्तकाकार मे प्रकाशित करने के लिए लिखना न भूलिये। काम की चीज होगी। जहाज पर चढ़ते ही लिखना प्रारम्भ कर दीजिए और वापसी मे उतरने तक बराबर लिखते रहिये। पहले यात्रियो ने भी ऐसी पुस्तके लिखी है। आपकी यात्रा का विवरण उनसे बढ़-चढ़कर रहे। यह ध्यान रहे।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६

'सुधा'-आफिस, लखनऊ
चैत्र सुदि ८, गुरुवार, १९८५

प्रिय पारसनाथसिंहजी, प्रणाम।

पहले पद्यमय पत्रोत्तर[1] और आज पुनश्च कार्ड मिला। अनेक धन्यवाद। बहुत-बहुत, मैनी थैंक्स। हजार-हजार शुक्रिया कि आखिर आपका पता चला और पत्रोत्तर मिला। आपने पत्रोत्तर बड़े मजे का दिया है और अपने कवि-कौशल की छोटी-सी

[1] इस पत्र मे जिस 'पद्यमय पत्रोत्तर' का उल्लेख है, वह श्री पारसनाथसिंहजी की एक कविता थी। आचार्यजी उन दिनों 'सुधा' के साहित्यांक का सम्पादन करने के लिए लखनऊ ठहरे हुए थे। कविता हिन्दी-साहित्य की वर्तमान दशा से सम्बन्ध रखती थी। उसकी अन्तिम पंक्तियाँ थीं—

"क्षमा चाहता निकल गई हो,
जो प्रमादवश बात कठोर।
आप बैठ साहित्य सम्हालें,
मैं जाता जीवन की ओर।"

छटा दिखा दी है। छायावाद और प्रकाशवाद पर जो लिखा-पढ़ी हो रही है, मैं उसे यों ही कभी-कभी सरसरी तौर पर पढ़ लेता हूँ। दिलचस्पी से नहीं। मैं न छायावाद का विरोधी हूँ न खड़ीबोली का। पर दुर्भाग्य से छायावाद के नाम से जो कुछ आज-कल निकल रहा है, वह मेरी समझ से बाहर है। अज्ञेय मीमांसा है। इसलिए मजबूर हूँ। दाद नहीं दे सकता। समझूँ तो दाद दूँ। छायावाद के रहस्य पर आप कुछ प्रकाश डालिए, तो शायद कुछ तत्व समझ में आ जाए। खैर, साहित्य-संख्या में आपका पत्रोत्तर ज्यों का त्यों छाप दूँगा। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप जीवन की ओर जा रहे हैं और अफसोस कि मैं मौत की ओर जा रहा हूँ।

सुना है, अखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन जेठ में हो रहा है। ऐसी दशा में अग्नि-परीक्षा देने का मेरा साहस तो होता नहीं। मैं तो वहाँ पहुँचते-पहुँचते ही मूर्च्छित नहीं अधमरा हो जाऊँगा। आप इस वर्ष गर्मियों में हरद्वार आइए, आपका स्वास्थ्य बिलकुल ठीक हो जायगा। मैं यहाँ से वहीं जा रहा हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७

गुरुकुल, कांगड़ी
१०-३-२८

प्रिय पारसनाथजी, सप्रेम नमस्कार।

आपने अमोढ़े[1] दर्शन न दिये। बड़ी आशा थी, बहुत उत्कण्ठा रही। अनेक सज्जन दर्शनार्थी थे। कई व्यक्ति ऐसे थे जिनसे मिलकर आप प्रसन्न होते। कवि शंकरजी भी आये थे। उनके सुपुत्र प० हरिशंकर शर्मा 'आर्यमित्र'-सम्पादक भी थे। अपने दण्डी स्वामियों की जुगल जोड़ी, श्री स्वामी सहजानन्दजी और स्वामी सोमतीर्थजी भी विराजमान थे। सभी आपसे मिलना चाहते थे। एक बड़े ही गुणी पुरुष और आये थे—मुन्शी अजमेरी। यह सज्जन जन्म के तो मुसलमान हैं, पर वैसे सोलह आना वैष्णव हिन्दू हैं। उनका आचार व्यवहार देखकर अनुमान भी नहीं होता कि यह किसी पहले जन्म में भी मुसलमान रहे होंगे। बड़े ही अच्छे कवि, पक्के कोकिल-कण्ठ गायक और अनुकरण-कला का आश्चर्यजनक उदाहरण। उनके कमाल को देखकर सब लोग दंग रह गये। आप बार-बार याद आते थे। कभी उन्हें जरूर सुनिए। चिरगाँव,

१ अमोढ़ा मेरठ जिले में एक छोटा कस्बा है। वहाँ के प्रतिष्ठित रईस श्री रघुवीरनारायणसिंह आचार्यजी के मित्र हैं। उनकी पौत्री के विवाहोत्सव में श्री पारसनाथसिंहजी सम्मिलित न हो सके थे, उसी की शिकायत इस पत्र में है।

बाबू मैथिलीशरणगुप्त के गाँव, में रहते हैं। चि० रामनाथ के विवाह में उन्हें फिर बुलाने का प्रयत्न करूँगा। आपको अभी से निमन्त्रण है। विवाह ज्येष्ठ के अन्त में होगा। बारात अमीडे ही जायगी। 'सरमद शहीद' का परिशिष्ट भेजता हूँ। सरमद के सम्बन्ध में कुछ और बातों का पता चला है, एक पुर्जे पर उन पुस्तकों का पता लिखा है। ये पुस्तकें वहाँ मिल जायँ तो उनसे सरमद का समाचार संकलित करके लेख में जोड़ दीजिए, तो लेख सर्वांगपूर्ण हो जाय। मन्सूर के बारे में अकबर का एक पद्य और मिला है। भेजता हूँ। इसे भी परिशिष्ट में जोड़ दीजिए। एक लेख और मिला है, 'कविता के सम्बन्ध में आजाद के विचार' वह भी भेजता हूँ। 'सरमद शहीद' के सम्बन्ध में 'सरस्वती'-सम्पादक ने लिखा है। प्रयाग के 'लीडर' ने 'सरस्वती' (जनवरी) की समालोचना में एकमात्र आपके ही लेख (सरमद शहीद) की प्रशंसा की है। यदि इस लेख में पुर्जे वाले ग्रन्थ से संकलन करके कुछ बातें और जोड़ दी जायँगी तो लेख बेजोड़ हो जायगा। बाण के सम्बन्ध में कुछ और भेजिए। लेख-संग्रह प्रेस में देने लायक कब तक हो जायगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८

गुरुकुल, कांगड़ी
ता० ११-५-१९२८

प्रिय पारसनाथजी, प्रणाम।

८-५-२८ का कार्ड यथासमय मिला। हाँ, सम्मेलन के सभापतित्व का पगहा मेरे गले में पड़ गया है। ताज्जुब है कि मुझ गोशानशीन गरीब को यों क्यों गिरफ्तार कर लिया! इस पद को गौरवान्वित करने के लिए बड़े-बड़े महारथी मौजूद थे। मुझे तो स्वप्न में भी इसकी आशा न थी कि यह बलाये नागहानी मुझ पर नाजिल होगी। मेरी अयोग्यता, अस्वास्थ्य, सम्मेलन की संकटमयी वर्तमान परिस्थिति और स्वागत-समिति वालों का गृह-कलह इन सब बातों को देखते हुए हिम्मत टूट जाती है, दिल बैठ जाता है। कई हितैषी मित्रों के आग्रह से विवश होकर मैंने स्वीकृति तो दे दी है। पर भ्रमतीव च मे मनः। आपने इस दुर्घटना पर मुझे बधाई नहीं दी, एक प्रकार से दबी हुई सहानुभूति ही प्रकट की है। इसके लिए कृतज्ञ हूँ, पर हिन्दी भाषा-भाषियों को आप किस बात पर बधाई दे रहे हैं? क्या भयानक भूल पर भी बधाई दी जाती है? सम्मेलन के इस भावी संग्राम में आप भी सम्मिलित होंगे? मेरी कुछ सहायता करेंगे? यह गले पड़ा ढोल बजाना ही पड़ेगा। पर यह तो

बतलाइए मुझे वहाँ कहना क्या चाहिए ? बिहार की दशा से मैं अच्छी तरह परिचित नही हूँ। और वैसे भी मैं तो गिरफ्तारो मे हूँ—

"किस तरह फर्याद करते हैं, बता दो कायदा,
ऐ असीराने कफस, मैं नौ गिरफ्तारों मे हूँ।"

एड्रेस के लिए कुछ हिंट्स दीजिए। आपका स्वास्थ्य अच्छा नही, यह जानकर चिन्ता है। आप यहाँ हरद्वार (कनखल) आ जाइए। आजकल यहाँ बडा अच्छा मौसम है। मैं तो यही उचित समझता हूँ। घर पर रहकर या कलकत्ते मे स्वास्थ्य ठीक न हो सकेगा। मैं तो समझता हूँ जलवायु के परिवर्तन से ही आप भले-चंगे हो जायँगे। चिकित्सा की जरूरत ही न पडेगी। एक बार यहाँ आकर तो देखिए। हरद्वार मे गगा के किनारे सुरम्य बिडला-भवन मे ठहरिए और स्वास्थ्य-सम्पादन कीजिए। बस, यही कीजिए। इससे अच्छा उपाय नही। लौटती डाक से सूचना दीजिए, कब आते हैं। आप कलकत्ते गये होगे, इस विचार से यह पत्र वहाँ ही के पते पर लिख रहा हूँ। परमात्मा करे, आप तक पहुँच जाय। कही गुम न हो जाय। वाजपेयीजी महाराज का स्वास्थ्य आज-कल कैसा है ? हो सके तो उन्हे भी हरद्वार अपने साथ लाइए। 'स्वतन्त्र' के सम्पादन को छोडकर कुछ दिन गगा-तट पर बैठकर स्वास्थ्य-सम्पादन करे। आपके साथ आने मे उन्हे कुछ कष्ट भी न होगा।

आप पर कुछ लिखने को तबीयत चाहती है। आपको बदनाम किए बिना न मानूँगा। आपका जड भरत का-सा मूक जीवन मुझे पसन्द है। आपने तो आत्म-गोपन की हद कर दी—

"निगाहे कामिलो पर पड ही जाती है जमाने की,
कहीं छिपता है 'अकबर' फूल पत्तो में निहाँ होकर।"

मुझे आपके सम्बन्ध में जो कुछ लिखना है, अपनी जिम्मेदारी पर लिखूँगा। आपको दिखाने की जरूरत न पडेगी। उसमे आपको अपने स्वरूप का आभास दिखाई देगा। आप अपने असली स्वरूप को भूले हुए है। यदि आपको कुछ भी स्वरूप-ज्ञान हो गया, तो मै अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

दर्शनाभिलाषी—
पद्मसिंह शर्मा

९

गुरुकुल, कांगडी
१८-८-२८

प्रिय पारसनाथजी, नमस्कार।

लेख के प्राप्ति स्वीकार मे एक पत्र आज ही भेज चुका हूँ। वह पत्र जल्दी में लिखा था। इसलिए उसका परिशिष्ट कल की डाक मे भेजने के लिए लिख

रहा हूँ। भगवान् करे पटना छोड़ने से पहले यह पत्र आपको मिल जाय और अपने 'मिशन' में आप से टिप्पणी लिखाने में कामयाब हो जाय।

सम्पादकीय टिप्पणियों का जो मतालबा 'सुधा' वालों ने मुझ से किया है, उनकी लिस्ट भेजता हूँ। इनमें से कुछ आप चुन लीजिए। ३-४ उन पर या इनके अतिरिक्त किन्हीं दूसरे विषयों पर कम से कम 'सुधा' के ५-६ पेज का मैटर आप लिख दीजिए। इससे ज्यादा हो तो क्या कहना है। अधिकस्याधिक फलम्।

'सुधा'[1] के संकट में अपने को फँसाकर मैं इस वक्त पछता रहा हूँ। इस संकट से मेरा उद्धार कीजिए। 'यह वक्त है इम्दाद का।' 'सुधा' का यह अंक अच्छा न निकला तो मुझे भी बदनामी मिलेगी। सम्पादकीय टिप्पणियाँ महत्त्व की न हुई तो मामला फीका रहेगा। इसीलिए आपको तकलीफ दे रहा हूँ। मुझे आशा है, आप जो भी लिखेंगे अच्छा लिखेंगे। कलम उठाने की देर है। मैं अपनी पूरी शक्ति से अनुरोध कर रहा हूँ। राजेश्वर बाबू तकाजा करने को मौजूद हैं ही। क्या फिर भी आप न लिखेंगे? राजेश्वर बाबू के तकाजे से जब वैशाली का मैदान मार लिया तो क्या टिप्पणियों का कूचा सर न होगा। मुझे इस समय कुछ नहीं सूझ रहा। तबीयत राह न देती कि क्या लिखूँ? इस हफ्ते में आप टिप्पणियाँ लिखकर भेज दीजिए। बस यही प्रार्थना है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०

ज्वालापुर-महाविद्यालय,
सहारनपुर
२-९-२८

प्रिय पारसनाथजी, नमस्कार।

कलकत्ते का पत्र मिला था। आशा है, आप शिमला पहुँच गये होंगे। अपना चित्र 'सुधा' वालों के पास भिजवा सकें तो अच्छा है। अब आप छिपे नहीं रह सकेंगे, छपना ही पड़ेगा। 'हर्ष' के सम्बन्ध में जिन पुस्तकों का पता आपने दिया है मँगवा लूँगा। पर अंग्रेजी या बंगला में जो पुस्तकें इस विषय पर हों उनका सार-सकलन आपको करना पड़ेगा। इस बारे में आप मेरा हाथ बटाएँगे तो मैं [illegible] पर एक संग्रह समालोचनात्मक पुस्तक तैयार करके दे दूँगा, जैसा

[1] आचार्यजी ने लखनऊ से प्रकाशित मासिक 'सुधा' के 'साहित्यांक' का सम्पादन-भार अपने ऊपर लिया था। उपर्युक्त पत्र इसी समय लिखा गया है।

कि आप चाहते हैं। बाण या हर्ष पर जो पुस्तकें मालूम हो सकें सूचना देते रहिए या मंगाते रहिए। इस विषय में आपका साहाय्य नितान्त प्रार्थनीय है। आशा है, आप शिमला-शैल-प्रेक्षण कर रहे हैं और प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११

ज्वालापुर-महाविद्यालय, सहारनपुर
७-६-२८

प्रिय श्री प० पारसनाथजी, नमस्कार।

मैं अभी यहीं हूँ। आपका १५-६-२८ का कृपा-पत्र आज यहीं मिल गया। श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकरजी' हरद्वार से शिमले गये हुए हैं। वह आप से मिलना चाहते हैं। मिलें तो मिल लीजिए। 'हर्ष' और 'बाण' दोनों ही मेरा विषय हैं। क्योंकि हर्ष-चरित की समालोचना करनी है। 'हर्ष-चरित' में हर्ष के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है उसकी पुष्टि इतिहास से कहाँ तक हो सकती है, होती है? उस प्रसिद्ध चीनी यात्री ने किन बातों का विशेषता से उल्लेख किया है? यह सब कुछ दिखाना होगा। अंग्रेज़ी और बंगला आदि में 'हर्ष' या 'बाण' पर जो कुछ लिखा गया हो, उसका सार-सकलन आप कर दीजिए तो मेरा आधा काम हो जाय। यह काम आप ही के करने का है। अंग्रेज़ी जानने वालों की कागडी में कमी नहीं है। पर उनमें सहायता न मिलेगी। मतलब की बात समझा न सकेंगे। जिस प्रकार उस दिन आईने-अकबरी का अर्थ आपने सुनाया था, इस प्रकार अनुवाद करते मैंने किसी को नहीं देखा। यदि आपका वह जल्दी का अनुवाद अक्षरशः लिख लिया जाता तो उसमें कहीं भी करेक्शन की ज़रूरत न पड़ती। सुन्दर गद्य-काव्य था। अभी जल्दी नहीं है। अक्टूबर के अन्त तक, जब अवकाश मिले, लिख डालिए। क्या 'हर्ष-चरित' का अंग्रेज़ी में अनुवाद हुआ है? इसका पता ज़रूर-ज़रूर लगाइये। राधाकुमुदजी ने हर्ष में 'हर्ष-चरित' से कुछ सहायता ली है अथवा उसकी प्रामाणिकता या अप्रामाणिकता के बारे में कुछ लिखा है? हर्ष के सम्बन्ध में जायसवालजी (श्रीकाशीप्रसादजी जायसवाल) ने एक अंग्रेज़ी ग्रन्थ का पता दिया था, वह पर्चा मुझ से खो गया। फिर पूछूंगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२

गुरुकुल, कांगड़ी
४-११-२८

प्रिय पारसनाथजी, नमस्कार।

आपका २८, १० का कृपा-पत्र मिला। आपने बहुत ज्यादा दाद दे डाली। इतनी आज तक किसी ने न दी थी। बकौल अकबर आप 'साहिबे दिल' मालूम होते हैं। सचमुच मैं इस सहृदयता के हाथों तंग हूँ। मुझे इसने बिलकुल निकम्मा कर दिया। आजकल के निष्ठुर समाज मे सहृदयता एक उपहासनीय रोग है। दिल की कमजोरी है। खैर, 'विशाल भारत' वाला लेख आपको पसन्द आ गया तो जरूर अच्छा है। उस लेख के लिखने मे मुझे बड़ा कष्ट हुआ है। बार-बार रुकना पड़ता था। दिल उमड़ता था। आँसू बहते थे। ऐनक उतारकर साफ करता था। उधर भावों का प्रवाह-सा आता था। इस छोटे-से लेख ने मुझे थका दिया। पूरे 'सतसई-संहार' के लिखने में इतना कष्ट प्रतीत न हुआ था। आपका पत्र पढ़कर सन्तोष हुआ कि उस दर्द ने आपके दिल मे भी असर किया। बात यह है कि किसी वियुक्त मित्र की याद दिल को बेचैन कर देती है और किसी हृदय-हीन पाखण्डी का अत्याचार सहन नहीं होता। कभी आपके साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हो तो आप तो क्या सीखें मैं अलबत्ता आपसे बहुत कुछ सीख जाऊँ। लेख-संग्रह के सम्पादन का काम आपने स्वीकार कर लिया, बड़ी कृपा की।

श्री राधाकुमुद मुकुर्जी के ग्रन्थ की विषय-सूची तथा भूमिका का सारांश जो आपने भेजा है, वह संक्षिप्त होने पर भी काम का है। रा० कु० जी के ग्रन्थ में 'हर्ष-चरित' के अवतरणों का, यदि कहीं हो, पूरा अनुवाद भेजिए। यदि कुछ ऐसी घटनाएं हों, जिनका उल्लेख बाण ने और चीनी यात्री ने भिन्न-भिन्न प्रकार से किया हो तो उनका अनुवाद भी कीजिए। बाण के विषय में जो लिखा हो, उसका पूरा अनुवाद चाहिए। बाण की जन्म-भूमि, वंश, बाण जब हर्ष के दरबार में पहुँचा है, तब हर्ष की राजधानी थानेश्वर मे थी या कन्नौज में? बाण ने जो 'हर्ष चरित' में अपने पहुँचने का हाल लिखा है, उससे तो यह मालूम होता है कि वह कहीं छावनी में जाकर मिला है। सम्भव है, उस समय हर्ष दौरे में हो। बाण के लेख से कुछ ऐसा ही प्रतीत होता है। आप 'हर्ष-चरित' का अंग्रेजी अनुवाद by E. W. Cowell पढ़ जाइये। उसके पहले उच्छ्वास में बाण ने आत्मचरित लिखा है और दूसरे उच्छ्वास में हर्ष के दरबार में पहुँचने का हाल है। बाण हर्ष के दरबार में 'कृष्ण' के द्वारा पहुँचे हैं। यह 'कृष्ण' कौन थे? मुकुर्जी के ग्रन्थ में इसका कुछ उल्लेख है। हर्ष के

प्रसिद्ध हाथी दर्पशात का बाण ने बड़ा विस्तृत वर्णन किया है। क्या इसका उल्लेख चीनी यात्री ग्रन्थ मे है ? चीनी यात्री के ग्रन्थ का अनुवाद यदि हिन्दी मे हुआ हो तो पता दीजिए। बाण ने हर्ष-चरित मे जिन घटनाओ का उल्लेख किया है उनकी पुष्टि दूसरे ऐतिहासिक ग्रन्थो मे कितने अंश मे होती है। इस पर विशेष रूप मे प्रकाश डालिए। बाण के बारे मे मुकुर्जी ने या 'हर्ष-चरित' के अनुवादक ने जो कुछ लिखा हो उसका अनुवाद जरूर भेजिए। बाण की 'कादम्बरी' का भी अंग्रेजी में अनुवाद हुआ है। सी० एम० रीडिंग ने किया है। उसे भी देखिए। उसकी भूमिका मे शायद कुछ लिखा हो। 'हर्ष चरित' और 'कादम्बरी' का अंग्रेजी अनुवाद कलकत्ते मे मिल सकेगा। चिन्तामणि वैद्य की पुस्तक भी देखिए। हर्ष के तमाम पत्रो की नकल किसी पुस्तक मे छपी हो तो वह भी चाहिए। पहले बाण के सम्बन्ध का मसाला भेजिए। बाण ने हर्ष के दरबार मे पहुँचने के मार्ग का वर्णन 'हर्ष-चरित' के दूसरे उच्छ्वास मे किया है। कई गाँवो और चण्डी के मंदिर का उल्लेख भी किया है। वह कहाँ थे ? बाण का घर किस जगह था ? वह हर्ष के दरबार में किस जगह पहुँचा ? थानेश्वर में, कन्नौज मे या दौरे की छावनी मे ? बाण के सम्बन्ध की कोई उपलब्ध बात छूट न जाय। चीनी यात्री के ग्रन्थ के हिन्दी अनुवाद का पता भी दीजिए। हर्ष-चरित का अंग्रेजी अनुवाद जरूर देख जाइए।

पहले पत्र मे मैंने जायसवालजी की लिखी एक पुस्तक के पते की एक चिट भेजी थी। उसे भी देख लीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३

गुरुकुल, कांगड़ी
२-१२-२८

प्रिय पारसनाथजी, नमस्कार।

लालाजी के स्मारक-दिन वाला पत्र आज मिला। अकबर के संस्मरण आपको पसन्द आ गये, मेहनत ठिकाने लगी। उधर आपका अनुरोध है तो दो-एक संस्मरण और भी लिखूँगा, पर इन संस्मरणो का लिखना मेरे लिए है बड़ा दुखद व्यापार। भूली-बिसरी बातें कुरेद-कुरेदकर उखाड़नी पड़ती है। तबियत बेचैन हो जाती है। इस बारे मे मैंने एक पत्र चतुर्वेदीजी (पं० बनारसीदास चतुर्वेदी) को कई दिन हुए लिखा है। कलकत्ता पहुँचकर आप उसे लेकर देखिये तो कैफियत-

मालूम हो कि इन सस्मरणो से मैं क्यो पहलू बचाता हूँ। पर आपका अनुरोध है तो कुछ और भी गडे मुर्दे उखाड़ूंगा। इस वक्त बडी उलझन मे हूँ। बाण की मुहिम सिर पर सवार है और अभी उस ओर चलना भी शुरू नही किया। होली तक पुस्तक तैयार करके देनी है। समझ मे नही आता किस तरह पूरा पडेगा। क्या 'माधुरी' मे 'तैल माहात्म्य' पर आपका लेख है ? अकबर के काव्य का सग्रह दिक्कत-तलब है। उसके लिए वक्त चाहिए। जल्दी मे न हो सकेगा। बाण से छुट्टी पाकर उसमे लगूंगा। उसके लिए कापी करने वाला कोई लेखक भी दरकार होगा। मुझ से अपने लेख की कापी नही होती। कापी करने लगता हूँ तो लेख बहुत बढ जाता है। कभी-कभी बिलकुल नया ही रूप धारण कर लेता है। यह काम सहाय-सापेक्ष है। अकेले के वश का नही। दाद देने वाले तो बहुत मिल जाते है। तकाजा करने वालो की भी कमी नही। पर हाथ बँटाने वाला कोई नही मिलता। अकबर ने कहा है—

"खुला दीवां मेरा तो शोरे तहसीं बज्म में उट्ठा
मगर सब होगये खामोश जब मतबे का बिल आया।"

खैर मतबे के बिल की तो फिक्र नही है, किसी तरह लिखा भी जा सके। ये लिखने पढने के झझट तो थे ही एक और समस्या उपस्थित हो गई है। छोटे लडके चि० रामनाथ का विवाह इसी पौप मे होने की चर्चा चल रही है। मैं वैशाख तक टालना चाहता था। पर घरवाले और बेटीवाले नही मानते। वह कहते हैं अभी हो। यदि ऐसा हुआ तो और परेशानी होगी। ऐसी हालत मे समझ मे नही आता, क्या करूँ ? बाण को निपटाऊँ, सस्मरण[१] लिखूं या अकबर का सकलन करूँ या विवाह की तैयारी मे लगूं—

'यक दिल व खैले आरज़ू दिल व कुजा कुजा निहम।
क्या हँसे इन्सान और क्या रो सके,
दिल ठिकाने हो तो सब कुछ हो सके।"

जो कुछ होगा, हो रहेगा। आप जब कलकत्ते पहुँचे तो सूचना दे। हाँ, बिड़ला-मैगजीन प्रकाशित होगया या नही ? मेरे पास तो वह अभी पहुँचा नहीं। छप गया हो तो भिजवाइए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१ उर्दू के महाकवि अकबर के सस्मरण आचार्यजी ने 'विशाल भारत' में लिखे थे।

१४

गुरुकुल, कांगडी
१२-१२-२८

प्रियवर, नमस्कार।

वर्धा का पत्र और 'हर्ष-चरित' की भूमिका का अनुवाद मिल गया। धन्यवाद। आशा है, अब आप कलकत्ते आ गये होंगे। लेख-संग्रह के सम्बन्ध में निवेदन है कि जब लेखों का सब ध्यानपूर्वक पढ़कर सुसम्पादन करलें तभी प्रेस में दें। उनके पाप पुण्य की सारी जिम्मेदारी आप ही पर है। उनमें बहुत-से लेख व्यक्तिगत झगड़ों में भरे पड़े हैं। उन्हें अब उसी रूप में देना उचित न होगा। उनके अंश विशेषों का, जिनमें कुछ साहित्य का चमत्कार दीख पड़े, संकलन कर लिया जाय। जो लेख कुछ परिवर्तन से काम के बन सकें, उन्हें वैसा कर दिया जाय। जो सर्वथा अनुपयुक्त समझे जाय, उन्हें छोड़ दिया जाय। मतलब यह कि कहीं भी किसी प्रकार का अनौचित्य न रह जाय। किसी मृत या जीवित व्यक्ति को इन लेखों के प्रचार से किसी प्रकार का कष्ट न पहुंचे। यद्यपि किसी को कष्ट पहुँचाने के विचार से तो कोई भी लेख कभी नहीं लिखा गया था। परिस्थिति से विवश होकर ही व्यक्तिगत झगड़ों के लेख भी लिखने पड़े थे। पर अब वे बातें आई-गई हुई। "न वैरमुद्दीपयति प्रशान्तम्।" गड़े मुर्दे उखाड़ने में कोई लाभ नहीं। 'सर्वतः सारमादद्यात्पुष्पेभ्य इव षट्पदः' के अनुसार लेखों के संकलन में मधुकरी वृत्ति से काम लीजिए तो अच्छा होगा। किसी लेखक के सम्बन्ध में कहीं कोई बात मुझ से पूछनी हो तो पूछ लीजिए। राजेश्वर बाबू का आज पत्र आया है। उन्होंने क्रिसमस में कलकत्ते जाने को लिखा है। उनसे भी परामर्श कर लीजिए और लेखों के सम्बन्ध की चर्चा अपने तक और राजेश्वर बाबू तक ही रहने दीजिए। किसी 'बहिरंग सज्जन को राजदां' न बनाइए। मेरा विचार था कि एक बार आपसे मिल लेता तो सब बातें सोच-समझ ली जातीं। पर ऐसा मौका मिलना मुश्किल ही है। हाँ, लेखों में जो गु० कु० कांगड़ी या स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्दजी से सम्बन्ध रखते हैं, उन्हें विशेष ध्यान से देखिए। उनमें कोई बात ऐसी न रह जाय, जो नये सिरे से मनोमालिन्य का कारण बन जाय। उनमें से जो कुछ उपादेय समझिए, ले लीजिए। इतने पर भी यदि कोई बात ऐसी रह जाय जो किसी को खटकने वाली हो, उसका समाधान अपने तौर पर अपनी भूमिका में कर दीजिए। तीन-चार लेख और हैं, जो ५-७ दिन में नजरसानी करके भेजूंगा। हुएनसाँग की अंग्रेज़ी पुस्तक में हर्ष या बाण के सम्बन्ध में कुछ मसाला मिल सके, तो उसे भी देख डालिए। सुना है, उसका हिन्दी अनुवाद भी हो गया है। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५

गुरुकुल, कांगडी
२१-६-२९

प्रिय बा० पारसनाथसिहजो, नमस्ते।

आपने इतना परिश्रम करके लेखो का सकलन और सम्पादन किया, इसके लिए मै चिर-कृतज्ञ रहूँगा। वास्तव में यह काम आप ही के करने का था। भूसे के ढेर मे से दाने बीनना था। बडे धैर्य का काम था। इससे पार पाने पर आपकोसे बधाई देता हूँ। लेखो मे काट-छाँट का, छोडने और रखने का आपको पूरा अधिकार है। किसी लेख मे या उसके किसी अश से यदि किसी प्रकार के अनिष्ट की आशंका हो किसी व्यक्ति, सस्था या समाज से वैमनस्य की सम्भावना हो तो उसे निर्दयता-पूर्वक दूर कर दीजिए। ममता के मारे मै कुछ कहूँ तो भी न सुनिए। वही रखिए जिसमे कुछ सार हो, स्थायित्व हो। पर काट छाँट मे अनवधानतावश कही रग पर नश्तर न चल जाय, इसका ध्यान रखिए। जो लेख अधूरे है, बस वह अधूरे ही है। कभी पूरे नही हुए। स्वामी दर्शनानन्दजी की जीवनी भी नही लिखी गई थी। "वर्कर की मैं मैं" एक लेख का उत्तर था। उस पर मे परिशिष्ट शब्द उडाकर वैसे ही रहने दीजिए। वह मुझे पसन्द है। 'परीक्षार्थियो की राम-कहानी' लेख मुझे और कई साहित्यिक मित्रो को, साहित्याचार्य प० शालग्रामजी शास्त्री तथा प्रो० रामदासजी गौड इत्यादि को बहुत पसन्द आया था। उसे पृथक् पुस्तकाकार छपाने के लिए अनुरोध भी हुआ था। कम से कम उसके लिखने का ढग, उसकी भाषा मुझे अच्छी मालूम हुई थी। दिली जोश मे लिखी गई थी। इसलिए उसे तो रखिए ही। भले ही उसमे स्थायित्व न रहा हो पर भाषागत चमत्कार उसमे है। प्रश्न-पत्रो के उद्धरण या अनावश्यक अश चाहे तो कम कर दीजिए। समालोचना-भाग में अनधिकार चर्चा और लेखो मे आक्षेप योग्य अश न रहे तो अच्छा। उसमें ऐसा सशोधन कर दीजिए, जिससे कोई खुली चोट किसी पर न रह जाय। सस्था या व्यक्ति विशेष का नाम जहाँ हो, वह निकाल दिया जाय ऐसे (⊥ ⊥) चिन्ह रहने दिए जायें। 'ज्ञान-मडल के स्वार्थ' मे भी कोई ऐसी बात हो तो दुरुस्त कर दी जाय। 'मनोरमा' और 'हर्ष-चरित' वाले लेखो मे भी तीव्र वाक्य धीमे कर दिये जायँ या छोड दिए जायँ। यदि आक्षेप योग्य हो। प० भीमसेनजी वाले सस्मरण मे जो अश एक जगह मैने बढाया है, 'दोनो मित्रो का मातम अकेले मुझे ही करना पडेगा" इत्यादि वह सन्दर्भ-पूर्ति के लिए जरूरी जान पडता है। उसके बिना वाक्य कुछ अधूरा-सा रह जाता है। इसलिए

उतना तो रहने ही दीजिए, बाकी न बढ़ाइए, छोड़ दीजिए। संस्मरणात्मक लेख, लेख-नायकों की मृत्यु के क्रमानुसार रहें। और जीवनी-सम्बन्धी लेख पात्रों के काल-क्रमानुसार हों तो कैसा? गौड़जी (श्री रामदास गौड़) की ऐसी ही सम्मति है। मैं आपकी राय पर छोड़ता हूँ। सभापति के दोनों भाषण 'साहित्य-दिग्दर्शन' या ऐसे ही किसी हैडिंग के नीचे दिये जायें। "स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध में महाकवि अकबर के विचार' शीर्षक लेख अकबर के संस्मरण के अन्त में रहे तो कैसा? राजेश्वर बाबू पुस्तक-प्रकाशन की एक संस्था खोलना चाहते थे, क्या उनका वह विचार शिथिल हो गया? जैसा वह उस समय कहते थे, यदि उनका विचार अब भी वैसा ही हो तो मैं उस कार्य में सहयोग कर सकता हूँ। यह बात अभी अपने तक ही रखिए। मैं यह स्थान छोड़ना चाहता हूँ। सम्भवतः अब यहाँ न लौटूँ। दो-एक पुस्तकें और लिख सकूँ तो अच्छा है। यहाँ महाकवि अकबर की कविता का संग्रह करूँगा या कुछ और लिखूँगा। पर दिक्कत यह है कि मकान पर बैठकर यह काम हो नहीं सकता। वहाँ और झंझट घेर लेते हैं। कहाँ बैठूँ? क्या करूँ? यह अभी निश्चित नहीं कर सका। आप कोई तरकीब सोचिए। क्या किया जाय? लेख-संग्रह प्रेस में देने से पहले मैं चाहता था कि उसे आपके पास बैठकर मैं एक बार देख लूँ। मैं डरता हूँ कि कहीं कोई बात ऐसी-वैसी न रह जाय। प्रेस में कब तक देने की सम्भावना है? आप अब कलकत्ता छोड़कर जाने वाले तो नहीं? लेख-संग्रह पूरा कितने दिन में छापकर प्रेस दे सकेगा? काम जल्दी और वक्त पर हो जाय तो मैं उतने समय के लिए कलकत्ते आ जाऊँ, जिसमें प्रूफ स्वयं देख सकूँगा। सोच-समझ कर उत्तर घर के पते पर दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६

नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर) २-७-२६

प्रियवर, नमस्कार।

अमोड़े से कल ही लौटा हूँ। बरात वापस आई है। २८, ६ का कृपा-पत्र मिला। मैं शटाऊ-सिद्धान्त का मानने वाला तो हूँ, पर एकान्त भक्त नहीं। पर यही ठीक है कि विभक्ति मिलाकर छपाया जाय। इसी में लाभ है। यही नियम रहना चाहिए। 'गयी', 'गई' इनमें से जो आप पसन्द करें। ऐसी बातों में मैं 'टॉलरेशन' से काम लेता हूँ। सिद्धान्त रूप में तो 'गयी' ही ठीक है। पर मैं लिखना

अक्सर 'गई' ही हूँ । स्वामी दयानन्द विषयक लेख अधूरा ही है । उसका अन्तिम अंश कुछ कम करके पूरा कर दीजिए । यानी जिससे अपूर्णता असंगत न जान पड़े । 'नामानन्द' एक छपा हुआ लेख संग्रह में था । वह आपकी सूचियों में नहीं है । क्या वह बिलकुल ही काट दिया है ? लेख तो अच्छा था । 'विनयांजलि' एक पुस्तक की भूमिका थी । पर वह पुस्तक लेखक के नाम ही से छपी है । इसलिए उसे अब लेख-संग्रह में शामिल करना ठीक न होगा । छपने से पहले मैं एक बार सब लेखों को देखना चाहता हूँ । अब जब कि मैं कलकत्ते आने का विचार कर ही रहा हूँ तो क्या यह सम्भव नहीं है कि मेरे आने तक पुस्तक छपाई का काम स्थगित रहे । मैं १० ता० के बाद चल सकूँगा । चौ० रघुवीरनारायणसिंहजी के साथ मुझे एक काम से अजमेर जाना है । ५ ता० को शायद वहाँ जाना हो । वहाँ से लौटकर ही आ सकूँगा । वह यात्रा रुक गई या मुझे उससे छुट्टी मिल गई तो पहले भी चल सकूँगा । पर अभी १०-१२ दिन की देर है । इस समय बहुत व्यग्रता में हूँ । मैं यथाशक्ति शीघ्र ही आपके पास पहुँचने का प्रयत्न कर रहा हूँ । राजेश्वर बाबू से क्या निश्चय हुआ ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८

मध्यभारत हिन्दी साहित्य-समिति
इन्दौर, १-६-३०

प्रियवर, नमस्कार ।

२७, ५ का पत्र आज मिला । समाचार जानकर चिन्ता मिटी । आप पटने से अंग्रेजी दैनिक निकालने का प्रयत्न कर रहे हैं, यह जानकर चिन्ता हुई । आजकल तो पत्र बन्द हो रहे हैं । घोर संकट का समय है, कहीं पूँजी न डूब जाय । जो पत्र राष्ट्रीय न होगा, उसका बायकाट कांग्रेस वाले करा देंगे, फिर आपका पत्र कैसे चलेगा ?

आपको यह सुनकर हर्ष या खेद होगा कि (·····) पचास हजार के चारे की लीद करके बन्द हो रही है । वाजपेयीजी (श्री प० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी) की कतई राय नहीं है कि पारसनाथजी नौकरी छोड़कर इस नये झंझट में पड़ें । वाजपेयीजी की सम्मति से पारसनाथजी की 'डिस्ट्रिक्ट मुन्सी' इस नये व्यवसाय के मारे जायगी । इनकी यह आशंका निर्मूल नहीं है । बात विचारणीय जरूर है ।

मैं यहाँ से रवाना होकर मन्दसौर (कालिदास की जन्मभूमि), चित्तौड़ और उदयपुर की सैर करता हुआ आगरे होकर घर लौटूँगा । 'पद्म-पराग' के दूसरे भाग के

लिए कुछ सामग्री (लेख-सस्मरण) इसी यात्रा मे मिल जायगी। ऐतिहासिक तीर्थो के दर्शन के अतिरिक्त यह लाभ हो जायगा। भारत के वे ऐतिहासिक स्थान, खासकर, कालिदास, भोजदेव और विक्रम की जन्मभूमि देखने की बडी लालसा थी, यही यहाँ इस मौसम मे खीच लाई थी। मौसम तो प्रतिकूल है। गरमी यहाँ काफी पडती है। राते तो यहाँ ठडी है। हवा बहुत चलती है, इतनी कि असह्य हो जाती है। महँगी यहाँ कलकत्ते से कम नही। किसी अश मे ज्यादती है। कुल मिलाकर जगह इतनी बुरी नही।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

१८

मुजफ्फरपुर

प्रिय पारसनाथसिहजी, नमस्कार।

मै सम्मेलन के बन्धन से छूटकर अब श्री पुरुषोत्तमदासजी टडन के चक्कर में पड गया हूँ। टडनजी बिहार मे ५-६ दिन सम्मेलन के लिए घूमना चाहते हैं। मुझे भी रोक लिया है। साथी तो आज चले गये। वैशाली देखने की इच्छा तो बहुत हुई पर अब प्रोग्राम टडनजी के हाथ में है। आपसे तो अभी बातें हुई ही नही। मौका मिला तो मै अभी घटे-भर के भीतर आता हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२

श्री वियोगी हरिजी को लिखे गये पत्र

१६

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)

प्रिय वियोगी हरिजी, सप्रेम प्रणाम।

आपका ३-१२-२७ का कृपा-पत्र यथासमय पहुंचा था, पर उसका उत्तर मैं बहुत विलम्ब से दे रहा हूं। इस अपराध के लिए लज्जित हूं और क्षमा चाहता हूं।

बहुत दिनों में आपका पता चला। इस बीच में कई सज्जनों से पूछा, पर किसी ने न बतलाया कि आप कहां हैं? अन्त में श्री गुरुप्रसाद टंडन ने मेरे पत्र का उत्तर दिया, फिर आपका कृपा-पत्र आया। यह जानकर खुशी हुई कि आप 'वीर भवन' में बैठकर वीर रस की सामग्री जुटा रहे हैं, ब्रजभाषा का एक कलंक मिटा रहे हैं। 'वीर सतसई' में आपने खूब बांकापन दिखलाया है। मैं उस पर एक छोटी-सी समालोचना लिख रहा हूं। आज ही प्रारम्भ की है। ब्रजभाषा में भी वीर रस की सुन्दर कविता हो सकती है, यही उद्देश्य सामने रखकर लिख रहा हूं। 'विशाल भारत' में भेजूंगा। 'विशाल भारत' को आप भी अपना कुछ प्रसाद भेजिये तो अच्छा हो। श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है कि इसके लिए मैं आपसे प्रार्थना करूं।

ब्रजभाषा के प्राचीन कवियों के काव्यों से वीर रस की कविता का एक संग्रह आप कर दें, तो बहुत बड़ा काम हो। इस ओर अवश्य ध्यान दीजिये।

हां, एक याद आया। कवीन्द्र रवीन्द्र बुन्देलखण्ड के एक कवि की बहुत प्रशंसा किया करते हैं। नाम इस समय विस्मृत हो गया है, आप शायद जानते हों। क्या रवीन्द्र-प्रशंसित उस कवि की कविता प्राप्य है? कहीं मुद्रित हुई है? उसे प्रकाशित कराने का प्रयत्न आप उचित समझते हैं? रवीन्द्र तो उसके सर्वाधिक प्रशंसक हैं। भरतपुर-सम्मेलन में रवीन्द्र ने अपने भाषण में हिन्दी वालों को उपालम्भ दिया था कि अपने ऐसे रत्नोपम कवि का हिन्दी वाले नाम भी नहीं जानते। उक्त विस्मृत कवि का कुछ पद आप मुझे लिखा सकेंगे?

बहुत दिन हुए आपने भक्ति रस के ऊपर एक बडा ग्रन्थ लिखने का विचार किया था, उसका क्या हुआ ?

'बिहारी सतसई' वही है जहाँ छोडी थी, आगे कुछ नही हुआ। आशा भी नही। मैं इस समय कुछ ऐसी परिस्थिति मे आ पडा हूँ। चिन्ताओ ने चित्त को इस तरह बेचैन कर रक्खा है कि लिखने-पढने का उत्साह दरिद्र के मनोरथ की तरह नष्ट हो गया। मेरी दशा जौक के इस पद्य के सर्वथा अनुरूप है—

"किताबे-मुहब्बत से ऐ हजरते दिल !
बताओ कि तुम लेते कितना सबक़ हो?
कि जब आनकर तुमको देखा तो वो ही
लिये दस्ते-अफसोस के दो वरक हो।"

आपसे मिले बहुत दिन हो गये हैं, देखिए कब दर्शन होते हैं। कृपा-दृष्टि रखिये। कभी-कभी कुशल-समाचार लिखते रहिये।

आपका
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च

उक्त कवि का नाम शायद ज्ञानचन्द है, जो कुछ भी हो, आप उस पर एक निबन्ध 'विशाल भारत' में लिखें तो अच्छा हो। प्रयत्न कीजिये।

२०

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
माघ कृ० १०, १९८४

प्रिय वियोगी हरिजी, सप्रेम प्रणाम।

९-१-२८ का कृपा-पत्र पाकर कृतार्थ हुआ। आपके पहले पत्र का उत्तर मा० कृ० १ को भेज चुका हूँ। आशा है पहुँचा होगा। उसमे पत्रोत्तर के विलम्ब का कारण लिख चुका हूँ। वही 'प्रमादालस्यनिद्राभि'।

पत्र लिखने के पश्चात मैं कई दिनो तक 'वीर सतसई' को थोडा-थोडा देखता रहा। जिस दिन आपका यह दूसरा पत्र मिला है, उससे पहली रात मे 'वीर सतसई' पढते-पढते भावोद्रेक से अधीर-सा हो उठा। चित्तौर और गठेरवा आदि का वर्णन बडा ही उत्तेजक प्रतीत हुआ। वास्तव मे आपने बडा सजीव वर्णन किया है। हृदय निकाल कर रख दिया है। 'कागज़ पै रख दिया है कलेजा निकाल के।' मैंने पहले पत्र में भी प्रार्थना की थी, अब फिर अनुरोध करता हूँ, वीर रस की जितनी भी कविता मिल

सके, बुन्देलखण्ड से, राजपूताने से, उसका एक संग्रह आप कर दीजिए। इधर हमारे रुहेलखण्ड में आल्हा का बहुत प्रचार है। अब कुछ दिनों में कम है, पहले बहुत था। बरसात-भर आल्हा की धूम रहती थी। एक बार, कोई ४० वर्ष हुए, मेरे बचपन की बात है, आपके बुन्देलखण्ड से बाज जाति के नट आये थे। उन्होंने जो बुन्देलखण्डी भाषा का आल्हा सुनाया था, वह बहुत ही मधुर, रोचक और उत्तेजक था। वैसा फिर कहीं नहीं सुना। इधर आल्हा-चरित अनेक तुकबन्दों ने अपने-अपने ढंग पर गढ़ रक्खा है। आल्हा-चरित की कोई प्राचीन पुस्तक उधर मिल सके या गाने वालों से संग्रह की जा सके, तो उसका एक संशोधित संक्षिप्त संस्करण प्रकाशित होना चाहिए। आल्हा-चरित में क्षेपकों, अत्युक्तियों और इतिहास-विरुद्ध घटनाओं का समावेश बहुत हो गया है। संग्रह में इसका विशेष रूप से ध्यान रक्खा जाय। इसका कुछ उद्योग आप कीजिए।

'वीर सतसई' का साइज मुझे पसन्द नहीं। पॉकिट साइज होना चाहिए था या १६ पेजी। आपने सतसई में विरह वीर की नई कल्पना की है। बात अच्छी है, सूझ नई है। पर, उसमें साध्वी, वीर विधवाओं की गणना आपने क्यों नहीं की? मैं तो समझता हूँ विरहिणी व्रजाङ्गनाओं से हिन्दू विधवाएँ वीरत्व में कुछ कम नहीं हैं।

'वीर सतसई' पर मैं संक्षिप्त समालोचना लिखना चाहता था, जैसा कि पहले पत्र में लिखा था पर, अब देखता हूँ समालोचना लम्बी हो जायेगी। व्रजभाषा में 'वीर रस' शीर्षक रक्खा है। मुख्य उदाहरण 'वीर सतसई' होगी। व्रजभाषा की पुरानी कविता से कुछ चुने हुए, फड़कते हुए उदाहरण आप और भेज दें, तो बड़ा अच्छा हो। क्या 'छत्रसाल-ग्रन्थावली' जिसका सम्पादन आपने किया है उसमें कुछ ऐसे उदाहरण मिलेंगे? उदाहरण ऐसे हों जिनमें कविता भी हो। कोरी कांग्रेसी वीरों की-सी कार्यँ-कार्यँ न हो।

'सतसई' के [illegible]वें पृष्ठ पर 'सती प्रताप' शीर्षक दोहे पर जो फुट नोट है, वह समझ में नहीं आया। दोहे में वर्णित घटना और इन्द्रजीत पद तो सुलोचना के पति की ओर इशारा करते हैं, लक्ष्मीबाई की ओर नहीं। 'दुवन' शब्द जिसका प्रयोग कई बार 'सतसई' में हुआ है, 'दिपन' शत्रु ही के अर्थ में है न? [illegible] पृष्ठ पर जो [illegible]वाँ दोहा है, उसका तीसरा चरण यदि यों बदल दिया जाय 'वृद्ध रोगि सन्यासि द्विप' तो हाल की दिल्ली के भी इस्तहाल हो जाय। खैर यह तो सदाक्रिया समझता हूँ।

रवीन्द्र-प्रशंसित जिस कवि के विषय में मैंने पहले पत्र में लिखा था, पीछे मालूम [illegible] वह बुन्देलखण्डी नहीं [illegible] था। नाम [illegible] है। 'सजीवन भाष्य' पर [illegible] नहीं होगा। [illegible] हो रहा है, [illegible] ही नहीं होता।

बहुत दिन हुए आपने भक्ति रस के ऊपर एक बड़ा ग्रन्थ लिखने का विचार किया था, उसका क्या हुआ ?

'बिहारी सतसई' वहीं है जहाँ छोड़ी थी, आगे कुछ नहीं हुआ। आगा भी नहीं। मैं इस समय कुछ ऐसी परिस्थिति में आ पड़ा हूँ। चिन्ताओं ने चित्त को इस तरह बेचैन कर रक्खा है कि लिखने-पढ़ने का उत्साह दरिद्र के मनोरथ की तरह नष्ट हो गया। मेरी दशा जौक के इस पद्य के सर्वथा अनुरूप है—

"किताबे-मुहब्बत से ऐ हज़रते दिल !
बताओ कि तुम लेते कितना सबक़ हो?
कि जब आनकर तुमको देखा तो वो ही
लिये दस्ते-अफसोस के दो वरक़ हो।"

आपसे मिले बहुत दिन हो गये हैं, देखिए कब दर्शन होते हैं। कृपा-दृष्टि रखिये। कभी-कभी कुशल-समाचार लिखते रहिये।

आपका
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च

उक्त कवि का नाम शायद ज्ञानचन्द है, जो कुछ भी हो, आप उस पर एक निबन्ध 'विशाल भारत' में लिखें तो अच्छा हो। प्रयत्न कीजिये।

२०

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चाँदपुर (बिजनौर)
माघ कृ० १०, १९८४

प्रिय वियोगी हरिजी, सप्रेम प्रणाम।

९-१-२८ का कृपा-पत्र पाकर कृतार्थ हुआ। आपके पहले पत्र का उत्तर मा० कृ० १ को भेज चुका हूँ। आशा है पहुँचा होगा। उसमें पत्रोत्तर के विलम्ब का कारण लिख चुका हूँ। वही 'प्रमादालस्यनिद्राभि'।

पत्र लिखने के पश्चात् मैं कई दिनों तक 'वीर सतसई' को थोड़ा-थोड़ा देखता रहा। जिस दिन आपका यह दूसरा पत्र मिला है, उससे पहली रात में 'वीर सतसई' पढ़ते-पढ़ते भावोद्रेक से अधीर-सा हो उठा। चित्तौर और गठेरवा आदि का वर्णन बड़ा ही उत्तेजक प्रतीत हुआ। वास्तव में आपने बड़ा सजीव वर्णन किया है। हृदय निकाल कर रख दिया है। 'कागज़ पै रख दिया है कलेजा निकाल के।' मैंने पहले पत्र में भी प्रार्थना की थी, अब फिर अनुरोध करता हूँ, वीर रस की जितनी भी कविता मिल

सके, बुन्देलखण्ड से, राजपूताने मे, उसका एक सग्रह आप कर दीजिए। इधर हमारे रुहेलखण्ड मे आल्हा का बहुत प्रचार है। अब कुछ दिनो मे कम है, पहले बहुत था। बरसात-भर आल्हा की धूम रहती थी। एक बार, कोई ४० वर्ष हुए, मेरे बचपन की बात है, आपके बुन्देलखण्ड मे बाज जाति के नट आये थे। उन्होंने जो बुन्देलखण्डी भाषा का आल्हा सुनाया था, वह बहुत ही मधुर, रोचक और उत्तेजक था। वैसा फिर कही नही सुना। इधर आल्हा-चरित अनेक तुकबन्दो ने अपने-अपने ढग पर गढ रक्खा है। आल्हा-चरित की कोई प्राचीन पुस्तक उधर मिल सके या गाने वालो से सग्रह की जा सके, तो उसका एक सशोधित सक्षिप्त सस्करण प्रकाशित होना चाहिए। आल्हा-चरित में क्षेपको, अत्युक्तियो और इतिहास-विरुद्ध घटनाओ का समावेश बहुत हो गया है। सग्रह में इसका विशेष रूप से ध्यान रक्खा जाय। इसका कुछ उद्योग आप कीजिए।

'वीर सतसई' का साइज मुझे पसन्द नही। पॉकिट साइज होना चाहिए था या १६ पेजी। आपने सतसई मे विरह वीर की नई कल्पना की है। बात अच्छी है, सूझ नई है। पर, उनमे साध्वी, वीर विधवाओ की गणना आपने क्यो नही की ? मै तो समझता हूँ विरहिणी व्रजाङ्गनाओ से हिन्दू विधवाएँ वीरत्व मे कुछ कम नही हैं।

'वीर सतसई' पर मै सक्षिप्त समालोचना लिखना चाहता था, जैसा कि पहले पत्र में लिखा था पर, अब देखता हूँ समालोचना लम्बी हो जायेगी। व्रजभाषा मे 'वीर रस' शीर्षक रक्खा है। मुख्य उदाहरण 'वीर सतसई' होगी। व्रजभाषा की पुरानी कविता से कुछ चुने हुए, फडकते हुए उदाहरण आप और भेज दें, तो बडा अच्छा हो। क्या 'छत्रसाल-ग्रन्थावली', जिसका सम्पादन आपने किया है उसमे कुछ ऐसे उदाहरण मिलेगे ? उदाहरण ऐसे हो जिनमें कविता भी हो। कोरी कांग्रेसी वीरो की-सी कायँ-कायँ न हो।

'सतसई' के १३वे पृष्ठ पर 'सती प्रताप' शीर्षक दोहे पर जो फुट नोट है, वह समझ में नहीं आया। दोहे मे वर्णित घटना और इन्द्रजीत पद तो सुलोचना के चरित की ओर इशारा करते है, लक्ष्मीबाई की ओर नही। 'दुवन' शब्द जिसका प्रयोग कई बार 'सतसई' में हुआ है, 'द्विपन' शत्रु ही के अर्थ में है न ? ५१ पृष्ठ पर जो १८वाँ दोहा है, उसका तीसरा चरण यदि यो बदल दिया जाय 'वृद्ध रोगि सन्यासि वधि' तो हाल की दिल्ली के भी हस्वहाल हो जाय। खैर, यह तो मजाकिया मशवरा है।

रवीन्द्र-प्रशसित जिस कवि के विषय मे मैने पहले पत्र मे लिखा था, पीछे मालूम हुआ, वह बुन्देलखण्डी नही, बघेलखण्डी था। नाम ज्ञानदास है। 'सजीवन भाष्य' अब पूरा नही होगा। चित्त नितान्त निर्विण्ण हो गया है। उत्साह ही नही होता।

बहुत दिन हुए आपने भक्ति रस के ऊपर एक बडा ग्रन्थ लिखने का विचार किया था, उसका क्या हुआ ?

'बिहारी सतसई' वही है जहाँ छोडी थी, आगे कुछ नही हुआ। आशा भी नही। मै इस समय कुछ ऐसी परिस्थिति मे आ पडा हूँ। चिन्ताओ ने चित्त को इस तरह बेचैन कर रक्खा है कि लिखने-पढने का उत्साह दरिद्र के मनोरथ की तरह नष्ट हो गया। मेरी दशा जौक के इस पद्य के सर्वथा अनुरूप है—

"किताबे-मुहब्बत से ऐ हजरते दिल !
बताओ कि तुम लेते कितना सबक हो?
कि जब आनकर तुमको देखा तो वो ही
लिये दस्ते-अफसोस के दो वरक हो।"

आपसे मिले बहुत दिन हो गये हैं, देखिए कब दर्शन होते हैं। कृपा-दृष्टि रखिये। कभी-कभी कुशल-समाचार लिखते रहिये।

आपका
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च

उक्त कवि का नाम शायद ज्ञानचन्द है, जो कुछ भी हो, आप उस पर एक निबन्ध 'विशाल भारत' में लिखे तो अच्छा हो। प्रयत्न कीजिये।

२०

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
माघ कृ० १०, १९८४

प्रिय वियोगी हरिजी, सप्रेम प्रणाम।

९-१-२८ का कृपा-पत्र पाकर कृतार्थ हुआ। आपके पहले पत्र का उत्तर मा० कृ० १ को भेज चुका हूँ। आशा है, पहुँचा होगा। उसमे पत्रोत्तर के विलम्ब का कारण लिख चुका हूँ। वही 'प्रमादालस्यनिद्राभि'।

पत्र लिखने के पश्चात मै कई दिनो तक 'वीर सतसई' को थोडा-थोडा देखता रहा। जिस दिन आपका यह दूसरा पत्र मिला है, उससे पहली रात मे 'वीर सतसई' पढते-पढते भावोद्रेक से अधीर-सा हो उठा। चित्तौर और गठेरवा आदि का वर्णन बडा ही उत्तेजक प्रतीत हुआ। वास्तव मे आपने बडा सजीव वर्णन किया है। हृदय निकाल कर रख दिया है। 'कागज पै रख दिया है कलेजा निकाल के।' मैने पहले पत्र में भी प्रार्थना की थी, अब फिर अनुरोध करता हूँ, वीर रस की जितनी भी कविता मिल

सके, बुन्देलखण्ड से, राजपूताने मे, उसका एक सग्रह आप कर दीजिए। इधर हमारे रुहेलखण्ड मे आल्हा का बहुत प्रचार है। अब कुछ दिनो मे कम है, पहले बहुत था। बरसात-भर आल्हा की धूम रहती थी। एक बार, कोई ४० वर्ष हुए, मेरे बचपन की बात है, आपके बुन्देलखण्ड से बाज जाति के नट आये थे। उन्होने जो बुन्देलखण्डी भाषा का आल्हा सुनाया था, वह बहुत ही मधुर, रोचक और उत्तेजक था। वैसा फिर कही नही सुना। इधर आल्हा-चरित अनेक तुकबन्दो ने अपने-अपने ढग पर गढ रक्खा है। आल्हा-चरित की कोई प्राचीन पुस्तक उधर मिल सके या गाने वालो से सग्रह की जा सके, तो उसका एक सशोधित सक्षिप्त सस्करण प्रकाशित होना चाहिए। आल्हा-चरित मे क्षेपको, अत्युक्तियो और इतिहास-विरुद्ध घटनाओ का समावेश बहुत हो गया है। सग्रह मे इसका विशेष रूप से ध्यान रक्खा जाय। इसका कुछ उद्योग आप कीजिए।

'वीर सतसई' का साइज मुझे पसन्द नही। पॉकिट साइज होना चाहिए था या १६ पेजी। आपने सतसई मे विरह वीर की नई कल्पना की है। बात अच्छी है, सूझ नई है। पर, उनमे साध्वी, वीर विधवाओ की गणना आपने क्यो नही की ? मै तो समझता हूँ विरहिणी व्रजाङ्गनाओ से हिन्दू विधवाएँ वीरत्व में कुछ कम नही हैं।

'वीर सतसई' पर मै सक्षिप्त समालोचना लिखना चाहता था, जैसा कि पहले पत्र मे लिखा था पर, अब देखता हूँ समालोचना लम्बी हो जायेगी। व्रजभाषा मे 'वीर रस' शीर्षक रक्खा है। मुख्य उदाहरण 'वीर सतसई' होगी। व्रजभाषा की पुरानी कविता से कुछ चुने हुए, फडकते हुए उदाहरण आप और भेज दें, तो बडा अच्छा हो। क्या 'छत्रसाल-ग्रन्थावली', जिसका सम्पादन आपने किया है उसमे कुछ ऐसे उदाहरण मिलेगे ? उदाहरण ऐसे हो जिनमें कविता भी हो। कोरी कॉंग्रेसी वीरो की-सी कायँ-कायँ न हो।

'सतसई' के १३वे पृष्ठ पर 'सती प्रताप' शीर्षक दोहे पर जो फुट नोट है, वह समझ में नही आया। दोहे में वर्णित घटना और इन्द्रजीत पद तो सुलोचना के चरित की ओर इशारा करते है, लक्ष्मीबाई की ओर नही। 'दुवन' शब्द जिसका प्रयोग कई बार 'सतसई' में हुआ है, 'द्विपन' शत्रु ही के अर्थ में है न ? ५१ पृष्ठ पर जो १८वां दोहा है, उसका तीसरा चरण यदि यो बदल दिया जाय 'वृद्ध रोगि सन्यासि वधि' तो हाल की दिल्ली के भी हस्बहाल हो जाय। खैर, यह तो मजाकिया मशवरा है।

रवीन्द्र-प्रशसित जिस कवि के विषय मे मैंने पहले पत्र मे लिखा था, पीछे मालूम हुआ, वह बुन्देलखण्डी नही, बघेलखण्डी था। नाम ज्ञानदास है। 'सजीवन भाष्य' अब पूरा नही होगा। चित्त नितान्त निर्विण्ण हो गया है। उत्साह ही नही होता।

हिन्दी में अब बड़े-बड़े महारथी पैदा हो रहे हैं। 'महारथी' के नवीन अंक में, जिसमें आपका कडखा छपा है, एक महारथी ने बिहारी और दास के एक दोहे की तुलनात्मक समालोचना लिखी है। कितना अत्याचार और अज्ञान है। दास का दोहा बिहारी की बिल्कुल नकल है। फिर भी 'भाव-साम्य बिल्कुल नहीं' और दास का दोहा अच्छा है। हिन्दी मे तुलनात्मक समालोचना का रोग सक्रामक होकर फैल रहा है। दूसरे महारथी 'समालोचक' के नवीन अंक मे फर्माते हैं 'मतिराम सतसई' के प्रकाशन मे बिहारी का आसन छिन गया।" जहाँ ऐसे विवेचक हों, बस साहित्य का बेड़ा पार है। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
मार्गशीर्ष कृ० ११, १९८४

श्री माननीय प्रिय वियोगी हरिजी महाराज, प्रणाम।

'बिहारी सतसई' (सयुक्त भाग) सेवा में समर्पित कर रहा हूँ। रजिस्टर्ड पार्सल द्वारा भेज रहा हूँ। स्वीकार करके अनुगृहीत कीजिए।

'कवि-कीर्तन' में इसका उल्लेख करके आपने इसे भी अमर कर दिया। अनेक धन्यवाद। 'कवि-कीर्तन' मुझे यथासमय मिल गया था, पर इस बीच में बराबर अस्वस्थ रहा, उस पर कुछ लिख न सका। अब १०-१२ दिन हुए हरदुआगज गया था, शकरजी (स्व० नाथूराम शकर शर्मा) को 'कवि-कीर्तन' सब सुनाया। बहुत पसन्द किया, खूब दाद दी। उसी वक्त यह पद्य बनाकर सुनाया—

"योगधार तज भोग ताप तप का सहते हैं,
बस तेरा दिन-रात ध्यान धरते रहते हैं।
चल सकोच विसार मुक्ति राधा! अब खिलजा,
'शकर' प्रेम पसार 'वियोगी हरि' से मिलजा।"

इसी प्रकार कई पद्यो मे 'कवि-कीर्तन' की समालोचना में वे अपनी सम्मति प्रकाश करना चाहते थे, पर अस्वस्थता के कारण रह गये। शकरजी आजकल बहुत रुग्ण हैं। दिन में कई बार दौरा पडता है। एक आँख से दीखना भी बन्द हो गया है। शकरजी की ब्रजभाषा की पुरानी कविता आपके पास भिजवाना चाहता था, पर इस बार न हो सका। हरिशकरजी से कह आया हूँ। ब्रजभाषा का प्राचीन साहित्य जो

अब दुर्लभ हो चला है, उसका उद्धार कीजिए। सम्मेलन को या किसी समिति को इस काम में लगाइये। आप सम्पादन करें और कोई समिति प्रकाशित करे तो हो सकता है। बड़ा ज़रूरी काम है।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

२२

'सुधा'
[साहित्य-संख्या]
सम्पादक—प० पद्मसिंह शर्मा

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर, (बिजनौर)
ता० ३-३-१९२८

श्री वियोगि हरये नम.।

क्यो महाराज, यह आप एकदम चुप क्यों हो गये? "ऐसा गुनाह मुझसे क्या हो गया कबीरा?" पहले पत्र के उत्तर मे विलम्ब अवश्य हो गया था सो उसके लिए मैंने क्षमा मांग ली थी, प्रायश्चित्त कर लिया था। आपके दो पत्र आये थे, उनका उत्तर मैंने दे दिया था। उत्तर मे दो पत्र भेजे थे। इनकी सूचना अपने पिछले कार्ड मे दे चुका हूँ। क्या मेरा कोई भी पत्र आपको नही मिला? मैंने अपने पहले पत्रो में कई बाते पूछी थीं। ख़ैर, उनका उत्तर रहने दीजिए, अपने मौन का कारण बतलाने की कृपा कीजिए, यदि नो गोप्यम्। "को लैहै सिर विपत को भूखी बाघिन पालि।" आपकी इस आशका के विरुद्ध मैंने इस भूखी बाघिन को पालकर सिर पर विपत ले ली है। लोगो से भी इसके पालने की सिफारिश कर रहा हूँ, देखिए कोई तैयार होता है कि नही।

इस कागज पर छपी पक्तियो से आप जानेंगे कि मेरे सिर पर यह एक और विपत आ पड़ी है। यार लोग ठोक-पीट कर वैद्य बना रहे हैं। 'सुधा' की साहित्य-सख्या का मुझ से सम्पादन करा रहे हैं। इसमें हाथ बटाइये। एक छोटी या बड़ी कविता और एक गद्य काव्य इस सख्या के लिए दिलवाइए। कहने का साहस तो नही होता पर, कहना ही पडता है, आपका चित्र और चित्र के साथ जो होना चाहिए वह भी—थोडे-से नोट या हिंट्स। भक्त-जनो के अनुरोध से श्री हरि नाना रूप में अवतार ग्रहण करते हैं। आप इतना ही कष्ट स्वीकार कीजिए, भक्तो का मनोरथ पूरा कीजिए। इसका पाप-पुण्य मेरे सिर डालिए। यदि आपने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली तो साहित्य-सख्या में एक विशेषता आ जायगी। श्री टडनजी से भी प्रार्थना की है, उनसे भी एक लेख मिलने की आशा है।

मै ५-७ दिन में लखनऊ पहुँच जाऊँगा। २०-२५ दिन वहाँ रहूँगा। लेख

तैयार रखिए। वहाँ पहुँचते ही आपको सूचना दूँगा। मेरी सूचना पहुँचने पर इस पत्र का उत्तर और लेख भेज दीजिए। आशा है, आप निराश न करेंगे। 'माधुरी' में नेत्रों पर आपके कवित्त पढ़े थे, वीर रस को आपने अपना लिया है।

आज इतना ही। अधिक अगले पत्र में।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३

गुरुकुल, कांगड़ी
ज्येष्ठ सुदि, ३, १९८५ मंगलवार

प्रिय वियोगी हरिजी, प्रणाम और बधाई।

१६, ५ का पत्र पाकर परम प्रसन्नता हुई। पारितोषिक-समिति का निर्णय बहुत ही उचित हुआ है। इस पर मुझे हार्दिक हर्ष है। इस औचित्यवेदिता पर सम्मेलन को बधाई मिलनी चाहिए। मुझे तो 'डबल' खुशी है। आपको ही नहीं, अपने को भी बधाई दे सकता हूँ—'अहो अहं नमस्तुभ्यम्'। मेरा निर्णय लक्ष्य-वेध करने में सफल हुआ, 'महानयं प्रमोदावसरः'।

ऋषिकुल (हरिद्वार) का बाईसवाँ वार्षिकोत्सव गंगा दशहरे पर हो रहा है। हिन्दी सम्मेलन और कवि-सम्मेलन का भी आयोजन किया है। कवि-सम्मेलन के सभापतित्व के लिए वहाँ से मेरे परामर्शानुसार आपकी सेवा में निमन्त्रण पहुँच रहा है, स्वीकार करके अनुगृहीत कीजिए। दर्शन दीजिए और गंगा-स्नान का पुण्य लूटिए।

कल 'प्रताप' (कानपुर) में यह पढ़कर बड़ी चिन्ता हुई कि श्री टंडनजी (श्री पुरुषोत्तमदास टंडन) को निमोनिया हो गया था। परमात्मा उन्हें शीघ्र ही चंगा करे। इस बीच में वह पूर्ण स्वस्थ हो जायँ तो सम्मेलन पर चलने के लिए उनसे भी प्रार्थना की जाय।

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२४

गुरुकुल, कांगडी (बिजनौर)
अगहन वदि ५, १६८५ रविवार

प्रिय वियोगी हरिजी महाराज, नमोनमस्तेऽस्तु सहस्र कृत्व ।

आखिर आपकी निद्रा टूटी, अज्ञातवास मे प्रकाश मे आना ही पडा । मै हैरान था कि किस कन्दरा में जा छिपे ! क्या बात हुई जो इस तरह एकदम मौनी बाबा बन गये ! खुशी की बात है, इस चुप का फल मीठा निकला। 'प्रेमयोग' आपने लिख डाला । बडा अच्छा किया । १५ जनवरी तक की कैद क्यो लगाते है, जब तक ठीक हो जाये लिखिए । किसी प्रदर्शनी मे थोडे ही पेश करना है । देर आयद् दुरुस्त आयद् । मेरी क्या पूछते है, वही "लिये दस्ते अफसोस के दो वरक हूँ", जो पुस्तक लिखनी है, उसकी सामग्री-सम्पादन मे ही अभी लगा हू । दिल्ली अभी दूर है, फिर भी वक्त पर पहुँचना जरूरी है । जैसे बनेगा पहुँचूंगा ही ।

इस बीच मे दो लेख 'विशाल भारत' मे छपे है । एक जो अभी नवम्बर के अक में छपा है, (अकबर पर) भेजता हूँ । वीर हम्मीर और नकछेदीजी का वह सग्रह दोनो ही मेरे पास नही है । 'भारत जीवन' प्रेस मे कभी छपे थे, वही मे शायद मिल सके । काशी में किसी परिचित को लिखिए । किसी पुरानी दूकान से ढूंढ-भालकर भेज देगा।

'विशाल भारत' आपके पास पहुँचता है कि नही ?

कभी-कभी पत्र तो देते रहिए । इधर आते-आने तो आप रह गये । टडनजी (श्री पुरुषोत्तमदास टडन) को समय-समय पर कई पत्र लिखे, पर उनके दरबार से एक का भी जवाब न मिला । कुछ कारण इस बेरुखी या रुखाई का समझ मे न आया । शायद काम-काजी आदमी है, व्यर्थ के पत्र-व्यवहार को समय न हो । जो कुछ हो, मुझे उनके इस व्यवहार पर ताज्जुब जरूर है । मेरा प्रोत्साहन भी कभी-कभी काम कर जाता है, यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुई।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२५

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
चैत्र व० १३, १९८५, रविवार

प्रिय श्री वियोगी हरिजी, प्रणाम।

कृपा-पत्र मिला। आपकी चिन्ता का कारण जानकर चिन्ता हुई। हिन्दी-संसार मे ऐसा प्रकाशक मिलना दुर्लभ है जो अच्छी चीज की कद्र करे और पेशगी पुरस्कार भी दे दे। प्रकाशक प्राय अर्थ-पिशाच है। उनके यहाँ सब धानो का भाव १२ पंसेरी है। लोक-रुचि को भ्रष्ट करने वाले माल के खरीदार है। हिन्दी मे अश्लील किस्से-कहानियो की भरमार है। अच्छे साहित्य को कोई पूछता भी नही। "जातेति कन्या महतीह चिन्ता कस्मै प्रदेयेति महान् वितर्क। दत्ता सुख प्राप्स्यति वा नवेति, कन्या पितृत्वं खलुनाम कष्टम्।" यही बात आजकल अच्छी रचना के विषय में भी लागू हो रही है। एक प्रकाशक मेरे लेख-संग्रह के लिए बहुत लालायित थे, जब पुरस्कार की बात चली तो पहले ॥) पेज कहा, फिर १) पेज पर आकर ठहर गये और वह भी बाद को पुस्तक बिकने पर। मजफ्फरपुर में जो प्रकाशन का आयोजन हो रहा था, वह लोग भी ढीले पड गये। मेरा लेख-सग्रह लिया था, वह भी अभी खटाई मे पडा है। पूछूंगा। यदि सौदा पट गया, तो लिखूंगा। पुस्तक कितने पृष्ठो की होगी।

इडियन प्रेस में हिन्दी-विभाग के इंचार्ज प० लल्लीप्रसाद पाण्डेय है, जो बनारस ब्राच मे काम करते है। आपसे शायद परिचय हो, उनसे भी मालूम करूँगा। और तो कोई नजर नही आता, जिससे बात की जाय। 'कॉपीराइट' देगे या 'रायल्टी' पर ! सब बातें लिखिए, तो लिखा-पढी करूँ। उत्सव पर आप आ जाते तो मिलना-भेंटना हो जाता। मुख्य उद्देश्य यही था, वरना कवि-सम्मेलन मे क्या होता है ? अब की बार कोई और प्रसग ऐसा आया तो फिर निवेदन करूँगा। एक बार इधर हो जाइए, अब मौसम अच्छा आ रहा है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च :

पत्र लिख चुकने के बाद मुजफ्फरपुर वाले सज्जन का पत्र मिला, जिसमें उन्होने पुस्तक-प्रकाशन की चर्चा चलाई है। मै आपकी पुस्तक के बारे में उन्हे लिख रहा हूँ। उत्तर आने पर सूचना दूंगा। 'प्रेम-योग' की सक्षिप्त विषय-सूची और पृष्ठ सख्या का अनुमान लिख भेजिए, शायद वह पूछें तो उन्हे लिख सकूं। यह भी सम्भव है वह पुस्तक की पाण्डुलिपि देखने को मँगाएँ। ५००) पेशगी पुरस्कार की बात भी लिख दी है।

पद्मसिंह शर्मा

२६

गुरुकुल, कांगडी
आषाढ कृ० ७, १९८५

प्रिय वियोगी हरिजी, प्रणाम।

कृपा-पत्र यथासमय पहुँचा। उत्तर मे कुछ विलम्ब हो गया। आपने जो लक्ष्य-वेध पर मतवाले निशानेबाज की बात कही है, उस पर एक शेर दाग का याद आ गया। कितना मौजूं है—

"गश खाके दाग यार के कदमो पे गिर पडा
बेहोशी में भी काम किया होशियार का।"

सो इस तरह कभी-कभी मतवाले भी मतिमत्ता का परिचय दे देते है।

अभिभाषण अभी नही लिखा जा सका। कल ही से शुरू किया है, पहले कुछ लिखा था, वह २९-५ के आंधी और मेह के तूफान मे नष्ट हो गया। मै ऋषिकुल के उस उत्सव पर हरिद्वार गया था, पीछे आंधी ने मकान की टीन उड गई। सब सामान भीगकर खराब हो गया। उसी मे भाषण के पन्ने भी थे। व्रजभाषा में वीर रस पर कुछ लिखा है। छायावाद पर भी लिखूंगा। भाषण छप नही सकेगा। प्रूफ कहाँ से भेजूंगा? टडनजी की तरह लिखकर ही ले जाऊँगा। सम्मेलन में श्री टडनजी (श्री पुरुषोत्तमदास टडन) को जरूर ले चलियेगा। मै भी लिखूंगा। यहाँ जो उत्सव होने वाला था, वह सम्मेलन के बाद जुलाई के प्रथम सप्ताह मे होगा। सम्मेलन से सीधे आप यहीं आवेंगे, यह प्रोग्राम बना लीजिए।

बाकी मिलन पर। आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२७

गुरुकुल, कांगडी
१३-१२-१९

प्रिय वियोगी हरिजी महाराज, नमोनम.।

८-१२-२८ का कृपा-पत्र मिला। मेरे "दस्ते-अफसोस के दो वरक" वाले फिकरे से मालूम होता है आप नाराज हो गये, पर बात बिलकुल ठीक है। जब 'वही दस्ते अफसोस के दो वरक' हो तो उन्हे मुराद का गुलदस्ता कैसे कहा जाय?

हाँ, कवि हरिनाथजी को उनके अनुरोध पर पदक देने का वादा मैने जरूर

किया था। यहाँ तो पदक का कोई साधन नही। इसका भार मै आप पर छोडता हूँ। आप अपने प्रबन्ध से तैयार करा दीजिए। उसके लिए कम-से-कम कितने रुपयो की जरूरत होगी, यह मुझे लिखिए। रुपये आपके पास भेज दूँगा। कविजी से मेरा नमस्कार कह दीजिए।

बहुत अच्छा जनाव, 'प्रेमयोग' को प्रेमियो के दिलो की नुमाइश में भेजिए। मै कब कहता हूँ कि न भेजिए। मेरे पास भी तो प्रेमी का दिल है, वह भी उस नमाइश में होगा। 'प्रेमयोग' कहाँ छपेगा ? आशा है, आप प्रसन्न है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२८

गुरुकुल, कांगडी (बिजनौर)
वैशाखी १३-४-२६ शनिवार

प्रिय वियोगी हरिजी महाराज, प्रणाम।

११, ४ का कृपा-पत्र आज मिला। लक्षण अच्छे है। पुस्तक-प्रकाशन के प्रबन्ध की आशा हो चली है। आज आपके पत्र के साथ ही श्रीयुत् बा० राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह, बी० ए० का पत्र भी आ पहुँचा। उस दिन जब आपको पत्र लिखा था, उन्हे भी लिखा था। उसी का उत्तर है और आशाजनक है। वह पत्र आपके पास भेजता हूँ। पढकर लौटा दीजिए और पुस्तक उनके पास रजिस्ट्री से भेज दीजिए। वह देख लें तो जल्दी फैसला हो जाय। आदमी सहृदय, सज्जन, कुलीन और विद्वान् है। साहित्य-सेवा की सदिच्छा से प्रेरित होकर ही पुस्तक-प्रकाशन के झंझट मे पडने का साहस कर रहे है। अच्छा है दो-चार अच्छी-अच्छी पुस्तके इनके द्वारा प्रकाशित हो जायँ।

आपका मन भला क्यो दबा जा रहा है ? ऐसी तो कोई बात नहीं है। 'मनस्विता' की कमी मुझ मे भी नही है। इसके पीछे मैने भी अपने को तबाह कर लिया है, पर किसी मित्र के लिए तो भीख माँगने मे भी मुझे संकोच नही, फिर यह तो एक व्यवहार की बात है, अपना कर्तव्य है। इसमें सोच-सकोच की क्या बात है ? आप उन्हे पुस्तक भेज दीजिए। मैने अपनी सम्मति उन्हे पहले ही लिख दी है। कुछ पूछेगें तो फिर लिख दूँगा। मै उन्हे लिख रहा हूँ कि पुस्तक आ रही है, देखकर शीघ्र निर्णय कीजिए। उधर वह बा० पारसनाथसिंह को भी बुला रहे है। उन्ही की सम्मति से निर्णय होगा। पुस्तक भेजने की सूचना मुझे भी दे दीजिए।

पुस्तक का विषय और आकार-प्रकार जानने के लिए (जैसा कि उन्होने जानना चाहा है) मै आपका पत्र ही उनके पास भेज रहा हूँ, और इस अपराध की क्षमा चाहता हूँ। पुस्तक मेरे पास भेजने की ज़रूरत नही, (जैसा कि उन्होने लिखा है) इसमे व्यर्थ का विलम्ब होगा। यह मै उन्हे लिख रहा हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३

श्री हरिशंकर शर्मा को लिखे गये पत्र

२६

पजावी क्षेत्र, कलकत्ता
जेठ सुदि १-१६८२
२३-५-२५

प्रिय हरिशकरजी, नमस्ते ।

आपका २०, ५ का कृपा-पत्र पाकर जहाँ मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ वहाँ साश्चर्य खेद भी हुआ । आप मुझे अपने से अप्रसन्न या नाराज समझें, इससे अधिक भयकर अभियोग मुझ पर नही लगाया जा सकता । मै अपनी ज़िदगी से बेज़ार हो सकता हूँ, पर आपसे अप्रसन्न नही हो सकता । जिस दिन ऐसा विचित्र परिवर्तन मेरे स्वभाव में दिखलाई दे तो समझ जाइए कि "दिन किनारे आ लगे है" ।

मुझे स्वयं पत्र लिखने में तो अब प्राय प्रवृत्ति नही होती । आज लिखूँ कल लिखूँ में ही कभी-कभी महीनो हो जाते है । पर ऐसा बहुत कम होता है कि मै किसी के उत्तरणीय पत्र का उत्तर न दूँ । फिर आपके पत्र तो मेरे लिए मसर्रत का बाइस है । आपसे 'अपराध' हो सकता है । "कही ऐसा भी हो सकता है । ऐसा हो नही सकता ।" जिन दो-चार अज़ीज़ दोस्तो की इज्ज़त मेरे दिल में है उनमें से एक आप भी है, यह मै बडे दावे और हलफ से ईश्वर को हाज़िर-नाज़िर जानकर कह रहा हूँ, इसमें जरा भी बनाकर नही । मुझे आपके इस मानसिक कष्ट पर खेद है और 'सहानुभूति' भी है । आप इस वहम को धो डालिए कि मै आपसे नाराज हूँ ।

दो-एक दिन से कुछ गरमी पडने लगी है । जी में तो आया था कि आपको यहाँ बुलाऊँ, यह लिखकर कि "मै आप से नाराज हूँ, यहाँ आकर क्षमा-प्रार्थना करने पर राज़ीनामा होगा' । इसी बहाने से आप यहाँ आकर दो-चार दिन आनन्द लूटते । हो सके तो आइए ।

श्री कविजी की दशा सुनकर चिन्ता हुई । मै बडा अपराधी हूँ कि अब तक कविजी की सेवा में हरदुआगज न जा सका । देखिए, कब जाता हूँ । आजकल हरिद्वार में रत्नाकरजी दल-बल समेत डटे है । महाप्रभुजी भी विराजमान है । प० ज्वालादत्तजी मसूरी से आने वाले है । मै इस बार पजावी क्षेत्र में ठहरा हूँ । पत्र रसशाला के पते ही भेजिए ।

आपका
पद्मसिह शर्मा

३०

नायक नगला, विजनौर
भादो वदि २-१६८३
६-६-२६

प्रिय प० हरिशकरजी, नमस्ते ।

३, ६ का कृपा-पत्र परसो पहुँचा । पढकर हर्ष भी हुआ और विषाद भी । चतुर्वेदीजी भारतीय हृदय है, इसमे यह हालत होनी ही चाहिए। अकवर ने कहा है—

"शिकम होता तो मैं इस अहद में फूला फला होता,
सरापा दिल वना हूँ इस सवव से कुश्तए गम हूँ।"

जौक ने ठीक ही कहा है—

"यो फिरें आशुफ्ता हाल अहले कमाल अफसोस है,
ऐ कमाल अफसोस है, तुझ पर कमाल अफसोस है।"

ढोंगी लीडरो का जमाना है, मौज है उनकी। चतुर्वेदीजी और कविजी जी की कद्र करने वाले कहाँ है ? जिधर देखिए यार लोगो ने अखाडे वना रक्खे हैं, उनमे खुशामदी, स्वार्थी और मक्कार पडे डंड पेलते है। भले आदमियो को कौन पूछता है। विहारी ने झूठ नही कहा,

"वसे वुराई जासु तन ताही को सनमान।
भलो-भलो कहि छोड़िए खोटे ग्रह जप दान।"

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन वालो को मैंने अनेक वार अनुरोध और आग्रहपूर्वक प्रेरणा की कि चतुर्वेदीजी से कुछ काम लो। प० रामजीलाल शर्मा ने वादा भी किया, फिर भी कुछ न किया । इसे सम्मेलन वालो की अज्ञानता और सम्मेलन के दुर्भाग्य के अतिरिक्त क्या कहा जाय ।

ये सम्मेलन-वाले भी गुरु लोग है ! अभी की नई घटना है । प० रामजीलालजी ने मंसूरी का प्रोग्राम वनाया कि वहाँ सम्मेलन का डैप्यूटेशन चले । मुझे लिखा, प० ज्वालादत्तजी को लिखा, और ज़ोर देकर कई वार लिखा । मैं यहाँ वीमारी और तीमारदारी में उलझा था । प० ज्वालादत्तजी भी काम-काजी आदमी है। पर वार-वार के तकाजो से तग आकर हम लोग किसी तरह मंसूरी चलने को तैयार हुए। मैं यहाँ से डैप्यूटेशन में योग देने के लिए महाविद्यालय पहुँच गया। प० ज्वालादत्तजी अल्मोडे से मुरादावाद उतर आए। प्रस्थान की तिथि नियत हो चुकी थी, पर प्रधान मन्त्रीजी ने झट प्रोग्राम कैंसिल कर दिया और इसकी सूचना कार्ड

द्वारा दी। प० ज्वालादत्तजी को यह व्यवहार बहुत ही दुर्व्यवहार प्रतीत हुआ। कुछ लिखा-पढी भी हुई, पर प्रधान मन्त्रीजी ने अपनी भूल स्वीकार नही की। ऐसी दशा मे चतुर्वेदीजी के सम्बन्ध मे सम्मेलन वालो से क्या कहा जाय और क्या आशा रक्खी जाय।

मेरठ का कवि-सम्मेलन पढे-लिखे हुरदंगो का हुल्लड था। कविताएँ भी फोर्थ क्लास थी। ढाल कालिज के एक महाब्राह्मण विद्यार्थी को मिली। उसकी रचना अपेक्षा-कृत कुछ अच्छी थी। कविजी (शंकरजी) के न जाने से रग फीका रहा। दर्शनार्थी बहुत निराश हुए।

राजा लक्ष्मणसिहजी की जन्म-शताब्दी पर हो सका तो मैं "बिना पाथेय पधारूंगा।" चतुर्वेदीजी सचमुच मुर्दों मे जान डालने वाले 'मसीहा' हैं। ऐसा कर्मयोगी किसी सभ्य देश और समुन्नत देश में जन्म लेता तो कद्र होती। यहाँ तो ढोंगियो और धूर्तों की पूजा होती है। शरद पूनो पर प० रामजीलाल शर्मा को भी बुलाइए।

'कमनीय कीर्ति भूभर में भरने' की खूब रही। अच्छा लतीफा है। कभी-कभी बडे विचित्र वाक्य देखने मे आते हैं। गुदा या 'गोदाम' शब्द पुल्लिग है। पूरब वाले इसका स्त्रीलिग में प्रयोग करते है। ६ सितम्बर के 'स्वतन्त्र' में एक हैडिग है 'चमडे की गुदा में'। लिंग प्रत्यय से यहाँ कितना अनर्थ हो गया है। यानी चमडे के गोदाम। सैयद इन्शा इस प्रयोग को सुनते तो दरियाए लताफत का एक अध्याय लिख डालते।

श्री शंकराचार्यजी को उनकी "शिक्षा-मीमासा" भिजवाई या नही। हाँ, रत्नाकरजी का पोथा 'बिहारी रत्नाकर' निकल गया। पाठ-भेद की विस्तृत मीमासा है। प० सत्यपालजी की लिखित 'बिहारी सतसई' मिल जाय तो पाठ-भेदो का मुकाबला किया जाय। पर वह शायद उसे देना पसन्द न करें। मालूम तो कीजिए यदि कुछ दिनो के लिए दे दें, आपकी जमानत पर। मुकाबला करके पुस्तक लौटा दी जायगी।

आशा है, आप 'गृह की जनता' समेत सानन्द है।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

३१

नायक नगला (बिजनौर)
आश्विन सुदि १४, बुधवार १९८३
२०-१०-२६

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

आपका कार्ड, चतुर्वेदीजी का लिफाफा और कार्ड और महेन्द्रजी का लिफाफा ये सब मुझे कल मंगल की रात में ९ बजे मिले। महेन्द्रजी ने मेघदूत

के दो फार्म भेजे थे, उनके साथ कोई पत्र न था, न भेजने वाले का चिट पर नाम ही था, जिससे कुछ पता चलता कि क्यो आये, कहाँ से आये। आज वह भूमिका लौटती डाक मे माँगते हैं। यह तो आप लोगो को मालूम ही है कि गाँव मे डाक वक्त पर नही पहुँचती, कभी ४-५ दिन तक चिट्ठियाँ डाकखाने मे पडी रहती हैं। ऐसी हालत मे वक्त पर तामील करना मेरे लिए मुश्किल हो जाता है, और उसका सबब मेरे ऐमाल नामे में काहिली लिखा जाता है।

आपका, चतुर्वेदीजी का, महेन्द्रजी का और स्वय मेरे मन का भी आग्रह और अनुरोध है कि इस अवसर[1] पर मैं आगरे पहुँचूँ। मैं अभी तक, बुधवार प्रात काल ८ बजे तक, यही सोच रहा हूँ कि चलूँ। पर जिस स्थिति मे हूँ, आशा नही पडती कि चल सकूँ। स्थिति के उल्लेख का इस पत्र मे अवकाश नही है, जल्दी-जल्दी पत्र घसीट रहा हूँ कि एक महाशय के हाथ, जो चाँदपुर जा रहे हैं, इसे डाक मे भेज दूँ। वहाँ से यह कल २१, १० को पोस्ट होगा। शायद २४, १० तक आपको मिल जाय। और मेरे न पहुँचने का हाल आपको मेरी जबानी मालूम हो जाय। श्री चतुर्वेदीजी से और महेन्द्रजी से मेरे न पहुँच सकने के लिए क्षमा माँग कर खेद प्रकट करदे। चतुर्वेदीजी ने जो छपे हुए निवेदन और कीर्ति-रक्षा का उपाय भेजे हैं, उनसे मैं पूरी तरह सहमत हूँ, और यथाशक्ति सहयोग करने के लिए तैयार हूँ चतुर्वेदीजी मेरा नाम सहायको मे नोट करले। उन पर विस्तृत सम्मति इस समय नही दे सकता। यदि इस पत्र से पहले वहाँ आ पहुँचा तो सब बाते हो जायेगी, अन्यथा आप लोग उदारतापूर्वक मुझे क्षमा करे।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३२

महाविद्यालय, ज्वालापुर
ज्येष्ठ वदि ७, १९८४

प्रियवर प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

आपका विस्तृत पत्र पाकर हृदय विकसित हो गया। भई खूब लिखते हो, बहुत अच्छा लिखते हो। शाबाश, पढकर तबीयत खुश हो जाती है। अनुप्रास मे तो पूज्य कविजी को भी पीछे छोड जाते हो। पत्र कई बार पढा, फिर काशीनाथ को दिखाया। यह भी आपके लेखो का बहुत प्रेमी है, इसे आपकी शैली बहुत पसन्द

---

१ सन् १९२६ ई० मे आगरे मे स्व० राजा लक्ष्मणसिंहजी की स्मृति में एक समारोह किया गया था। उसके लिए आचार्यजी को साग्रह निमंत्रण था। उसी अवसर की ओर यहाँ सकेत है। —सम्पादक

है। हाँ, फिर शायद याद न रहे, 'आर्यमित्र' का वह अंक या उसकी कटिंग जरूर भेज दीजिए, जिसमे काशी-यात्रा का वर्णन है । उसे काशीनाथ ने नही पढा। काशीनाथ (आचार्यजी के ज्येष्ठ पुत्र शास्त्री, काव्यतीर्थ) मुझ से ज्यादा खुश हुआ, आपके पद्य उसे बहुत भाए। यानी प्रसन्न करते भये। पद्य बहुत ही उत्तम है। "आजकल आगरे में आग बरसत है" बडी सुन्दर और सजीव रचना है। आप प्रमाद, सकोच, आलस्य और उपेक्षा छोड दे और बराबर कुछ न कुछ लिखते रहे तो कविजी की जगह सम्हाल ले। फिर जो कभी कुछ लिखते हैं तो उसे छपाते नही छिपा देते है। शिवाजी की प्रशसा वाले पद्य भी मार्के के है । इतने जोर के पद्य मैंने इस विषय पर इस वर्ष नही देखे। हाँ, मतवाले मे प० मदनलाल चतुर्वेदी के पद्य भी शिवाजी पर अच्छे हुए है। ठेठ व्रजभाषा का यह उदीयमान कवि अच्छा लिखता है। "स्वजाति को जगायेगी जयन्ती श्री शिवाजी की" इसे पढते हुए कुछ धचका लगता है, ध्वनि-भग प्रतीत होता है, यानी ठीक नही पढा जाता । सम्भव है, आप ठीक ढग से पढ देते हो, पर यह भेद जबानी पढना सुनकर ही खुलेगा, या फिर ग्रामोफोन का रिकार्ड हो।

अस्तु, गरमी यहाँ भी गजब ढा रही है। ज्वालापुर की ज्वालाएँ जलाए डालती है। हाँ, यहाँ का 'जीवन' जीवनप्रद है। वहाँ का तो पानी भी जलाता होगा।

दस-पाँच दिन के लिए इधर आजाइए तो बहार रहे। आप आजायँ तो मसूरी चलें । मुरादाबाद वाले बा० रामचन्द्रजी गुप्त कई साल से मसूरी बुला रहे है। प० ज्वालादत्तजी भी जाने वाले है। बडा लुत्फ रहे यदि आप भी आजायँ। हो सके तो आ जाइए। इरादा हो तो पक्की बात लिखिए, प्रोग्राम बनाया जाय । भरतपुर के बारे में जो बातें आपने इस पत्र में लिखी है वह इतनी मनोरजक है कि कई बार पढने पर भी जी नही भरा। यह तो प्रकाशित होने योग्य पत्र है । 'ठौर-ठौर ठडक के ताईं तरसत हैं' का अर्थ मै पहले नही समझा। मै इस वाक्य के कर्ता को आगे-पीछे देखने लगा। काशीनाथ ने यह ग्रन्थि यह कहकर सुलझाई कि 'ठौर ठौर' ही यहाँ कर्तृ पद है। यही बात है न। अच्छा भाव है।

'भूषण ग्रन्थावली' पर कोई अच्छी टीका कही छपी है कि नही। दो-एक टीका-टिप्पणी जो मैंने देखी है, वह और भी भरमाने वाली है। श्री 'अध्यापक रत्न' जी से पूछिये वह भी हिन्दी का एक सूचीपत्र है।

"क० स० या भडौआ बाजी" अच्छा नोट है।

पत्र का उत्तर शीघ्र भेजिए। काशीनाथ का प्रणाम।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३३

काव्य-कुटीर, नायक नगला
भादो सुदि ६, १९८४
२-९-२७

प्रियवर हरिशंकरजी, नमस्ते।

२०-८-२७ का कृपा-पत्र कल मिला, आप पत्रोत्तर मे वडी वेपरवाई करते है, इसकी मुझे सदा शिकायत रहती है। माफी, क्षमा की तो कोई वात नही, पर आपकी यह आदत अच्छी नही। अक्सर जरूरी वातो को भी आप टाल जाते है, यह कुछ अच्छी वात नही। खैर, चतुर्वेदीजी के आगरा छोडने का मुझे इतना दु ख, सताप और क्षोभ है कि लिख नही सकता।

अपील[1] का प्रस्ताव सेठजी का है। उन्होने सब ऊँच-नीच सोच लिया होगा, अपील कुछ कविजी की ओर से तो प्रकाशित नही हो रही। प्राय ऐसी अपीले और स्कीमें निकलती ही है, इसमे अपमान की वात क्या है? सफलता और असफलता की दुविधा तो सभी कामो मे रहती है। मैं यदि अच्छी अपील लिख सकता तो फौरन सब काम छोडकर लिख डालता। आप लोगो को कभी कष्ट न देता, फिर भी आप लोगो ने इस जरा-से काम में अक्षन्तव्य उपेक्षा से काम लिया, यह मुझे सचमुच वुरा मालूम हुआ। इसमें सारा अपराध आप ही का है, चतुर्वेदीजी का नही। चतुर्वेदीजी तो घर चले गये होगे, मैंने उन्हे इस वीच में दो लिफाफे गोकुलपुरा के पते पर लिखे थे, न मालूम मिले कि नही। उत्तर नही आया।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

पुनश्च :

दूसरा पत्र श्री महेन्द्रजी को दे दीजिए।

---

१ आचार्य पद्मसिंह शर्मा ने आर्यसमाज के नेताओ को इस वात के लिए तैयार किया था कि वे कविवर श्री प० नाथूराम शकर शर्मा को पाँच सहस्र रुपये की एक थैली भेंट करें। इस कार्य के लिए आर्य नेताओ की ओर से धन-सग्रहार्थ एक प्रभावपूर्ण अपील प्रकाशित करने की आवश्यकता हुई। अपील लिखने का कार्य आचार्य श्री प० पद्मसिंह शर्माजी को सौंपा गया। आचार्यजी ने श्री वनारसीदास चतुर्वेदी और श्री हरिशकर शर्मा से अपील की पाण्डुलिपि तैयार करने का आदेश दिया। हरिशकरजी ने शकरजी के पुत्र होने के कारण इस कार्य के करने में सकोच किया। इसी सकोच के लिए आचार्यजी की यह मीठी फटकार है। अन्तत. अपील न लिखी गई और उक्त कार्य न हो पाया। —सम्पादक

३४

काव्य-कुटीर, नायक नगला
असौज अमावस, १९८४, रविवार

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

२०, ९ का कार्ड और २०, ९ का ही पत्र परसों दोनों एक साथ पहुँचे। बेशक आपने पहले ही कह दिया था कि अपील में भाग न लूँगा, पर अपील में भाग लेने को तो आपसे किसी ने नहीं कहा। आपके नाम से अपील नहीं छपेगी। दस्तखत करने वालों में भी आपका नाम नहीं होगा। 'आर्यमित्र' में इस बारे में कुछ लिखने को भी आपसे किसी ने नहीं कहा। हाँ, अपील का मसविदा तैयार करने को आपसे ज़रूर कहा गया था, सो इसमें तो कुछ हर्ज न था। ऐसी बेगार तो अक्सर कर दी जाती है। असहयोगी वकीलों को भी ज़रूरत पड़ने पर दूसरों के लिए अर्जी और दरख्वास्तें तैयार करते देखा गया है, और उसी 'रावणशाही' शैतान 'नौकरशाही' के हुजूर में पेश करने के लिए। फिर यदि आप भी अपील लिख देते, प्रस्ताव से लाख असहमत होने पर भी, तो इसमें क्या बुराई थी? इस बारे में सिर्फ आपसे यही शिकायत है। यह तो मैं अपना काम आपसे कराना चाहता था। यह बात कई बार खोलकर लिख भी दी गई थी। आपने ही या शायद चौबेजी ने लिखा था कि चौबेजी आपके मत से असहमत होकर ही इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि इस प्रकार की अपील बेकार है। इसी से मैंने चतुर्वेदीजी में शिथिलता लाने का अभियोग आप पर लगाया था। अब आप उन पर अपनी बला टाल रहे हैं। खैर, यह भी सही। वह भी इस 'जुर्म में शरीक' सही। चौबेजी को तो मैं ढिल्लड न समझता था। यदि सचमुच वे ऐसे ही ढिल्लड हैं जैसा आप लिखते हैं तो मुझे उन पर भी उतना ही अफसोस है, जितना आप पर। अगर्चे मैं खुद भी कम ढिल्लड नहीं हूँ, पर मैं आप लोगों को इतना बेपरवा, इतना ढिल्लड कभी न समझता था। मुझे अपनी इस समझ पर भी कम अफसोस नहीं है। आगे के लिए मैंने इबरत पकड़ी—"जो अपना साया भी हो तो उसको तसव्वुर अपना न कीजिएगा।"

सबब चाहे जो हो, पर नतीजा एक ही है कि अपील रह गई। यह दुर्घटना मुझे सदा खटकेगी। अस्तु!

आपको एक बात 'सुझाता' हूँ, यदि आप उससे कुछ लाभ उठा सकें। स्वर्गीय महात्मा प० ईश्वरचन्द्रजी विद्यासागर की जीवनी आपने न पढ़ी, ज़रूर न पढ़ी होगी, भला आप ऐसे पढ़ने वाले कहाँ हैं? हाँ तो तबीयत पर जब्र करके ढिल्लडपन से एक हफ्ते की छुट्टी लेकर, अपने शौक से न सही मेरे कहने से ही सही 'तफन्नुनतबा' के तौर

पर ही सही, आप उसे आद्यन्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक अवश्य पढ जाइए, यह मेरा सर्वात्मना अनुरोध है। पाण्डेय रूपनारायणजी ने हिन्दी मे अनुवाद किया है। इडियन प्रेस में छपी है। पठनीय और मननीय पुस्तक है। मै आजकल उसे पढ रहा हूँ, ताजा अनुभव लिख रहा हूँ। सचमुच बडी अच्छी पुस्तक है। इसके अनुवाद से हिन्दी धन्य हुई है। हिन्दी में ऐसी एक भी जीवनी नही। इतने पर भी आप न पढे तो लानत है मेरे इस निवेदन पर।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३५

नायक नगला, चांदपुर, (बिजनौर)
ता० ८ ३-१९२८
चैत्र कृ० २, १९८४

प्रिय प० हरिशकरजी, नमस्ते।

इस बार आपने 'आर्यमित्र' मे खूब होली खेली है, कमाल किया है। मालूम होता है थोडी-सी पी ली थी, जिससे कपाट खुल गये। गद्य-पद्य सभी कुछ अच्छा है। इतना साफ-सुथरा साहित्यिक विनोद आज-कल के हास्य 'रसावतार' नही लिख सकते। कभी-कभी प० रुद्रदत्तजी इस रग मे लिखा करते थे, वरना आज-कल होलिकाको में भडौओ और अश्लीलता के अतिरिक्त होता ही क्या है ? 'होली आई' बडी सुन्दर कविता है। रगीले समाचार खूब है। नुसखे बडे बढिया है। अद्भुत समालोचना तो सचमुच अद्भुत ही है, बिलकुल नई उपज है। रामस्वरूप शास्त्री भी पढकर हँसे होगे। पशु-पक्षियो की पार्लामेट की रिपोर्ट पठनीय है। मुछमुण्ड मडल··· का भाषण अपूर्व है। गर्ज कि जो कुछ इस अक मे आपने लिखा है सभी एक से एक बढकर है। इस कलम को, जिससे यह लिखा गया है, सुरक्षित रखना। 'आर्यमित्र' की इस सख्या के लिए मै आपको बहुत-बहुत बधाई देता हूँ। 'विशाल भारत' की दूसरी सख्या में आपकी जो कविता निकली है वह भी बहुत सुन्दर है। अब तुम अपना स्वरूप प्रकट करने लगे हो।

एक पत्र उस दिन मैने हरदुआगज के पते पर भेजा था, मिला होगा। मै अभी लखनऊ नही जा सका। म० वि० के उत्सव पर भी नही आया। अब लखनऊ जाने वाला हूँ।

'सुधा' की साहित्य-सख्या के लिए एक लेख और एक कविता तुम्हे देनी होगी, तैयार कर रखो।

आशा है, आप आगरे आ गये है, और प्रसन्न है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३६

गुरुकुल, कांगडी
१-६-२८

प्रियवर, नमस्ते।

२७-५ का कृपा-पत्र मिला। समाचार जानकर प्रसन्नता हुई। सम्मेलन के सभापतित्व का पाश मेरे गले मे पड गया है, पर सम्मेलन की परिस्थिति विकट हो रही है इससे चिन्ता है कि कही भद्द न हो जाय। सम्मेलन का समय नि सन्देह ठीक नही है, पर अब शायद पीछे न हटे। कई वार हट चुका है, अब डर है कि कहीं हटते-हटते लाइन से न उतर जाय, अनिश्चित समय के लिए स्थगित न हो जाय। मैंने स्वा० स० का ध्यान आपके परामर्श की ओर दिलाया तो है। गरमी बेशक बेहद होगी। लम्बा सफर है, पर क्या किया जाय। देह धरे का दड समझकर भुगतना ही पडेगा। आप तो नही चल सकेंगे।

आप ग्वालियर की सैर कर आए, अच्छा हुआ। श्रावण की यात्रा भी कीजिए। पर मै शायद साथ न दे सकूं। यहाँ छुट्टियाँ आधे भादो से होती है। उसी समय कही आ-जा सकूंगा। बीच में सम्मेलन का पचड़ा न आ पडता तो छुट्टी ही ले लेता।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३७

गुरुकुल, कांगड़ी (विजनौर)
ज्येष्ठ पूर्णिमा, १९८५ रविवार
३-६-२८

प्रिय प० हरिशकरजी, नमस्ते।

परसो मैं आपके पत्र के उत्तर में एक कार्ड भेज चुका हूँ। उस दिन मुझे आठ-दस पत्र लम्बे लिखने पडे थे, जल्दी में था, आपके पत्र की जो बाते ध्यान में रह गई थी उन्ही का उत्तर सक्षेप में दे दिया था। बाद में पत्र पढने पर मालूम हुआ कि दो-एक बातें रह गईं। आपने जीवनी[1] के लिए लिखा है इसका मै इस दृष्टि से अनुमोदन करता हूँ कि किसी बहाने आपसे मिलना हो जायगा। आप आवें तो फिर क्या बात है। अभी किश्ती चलती है, आप चाहे तो यहाँ भी आ सकते है, वर्ना मै

१. आचार्यजी की जीवनी के नोट्स और उनका फोटो प्राप्त करने के लिए श्री-हरिशकरजी ने प्रार्थना की थी। —सम्पादक

कनखल में आ जाऊँगा । यहाँ सोमवार को छुट्टी होती है। उस दिन प्राय मैं कनखल जाया करता हूँ, और भी बहुत लोग वहाँ जाते हैं । अक्सर रविवार की शाम को ही कनखल पहुँच जाते हैं, वर्ना सोमवार को प्रात काल ८ बजे तक। आप जब आवें मुझे सूचना दीजिए । मैं अगले रविवार को कनखल आ जाऊँगा, आज भी कार्यवशात् मैं कनखल जा रहा हूँ। कल शाम को या परसों मगल को प्रात लौटूंगा। चि० काशीनाथ ने भी इधर आने को लिखा है। उस पाठशाला में एक महीने की छुट्टी है उसने घर होकर यहाँ आने का विचार प्रकट किया है ।

फोटो की माँग कई जगह से आई पर मेरे पास कोई फोटो नहीं । यहाँ ब्रह्मचारियों ने दो बार खीचा पर ठीक न उतरा । जब मैं लखनऊ गया था तो दुलारेलालजी ने खिंचाया था, न मालूम वह कैसा उतरा।

मैंने स्वागत-समिति के मन्त्री को लिखा है, आपके प्रस्ताव की ओर उनका ध्यान दिलाया है । पर अब समय शायद ही बदलें। क्या यह सम्भव नहीं कि आप मुजफ्फरपुर चल सकें। रहे तो बडा मजा, वैद्यजी और प० ज्वालादत्तजी शर्मा भी चलने को कहते हैं। प० ज्वालादत्तजी सपरिवार हरिद्वार आये थे। कई दिन रहे। बडा आनन्द रहा। आप कई बार याद आये, 'वह तो थोडी पी थी' बार-बार दोहराया गया।

नये 'विशाल भारत' मे सिन्धी भाषा और साहित्य पर श्रीयुत् प्रो० भभानी का एक पठनीय लेख निकला है। उसे पढकर सिन्धी भाषा पढने की इच्छा पैदा हो गई है। क्या यह वही भंभानीजी हैं जो आगरे में प्रोफेसर हैं ? इनसे तो शायद आपके साथ तब आगरे में मिला भी था । यदि यह वही भंभानीजी हैं और आपसे परिचित हैं, तो किसी दिन उनसे मिलकर पूछिए कि सिन्धी भाषा सीखने के लिए पहले कौनसी पुस्तकें पढनी चाहिएँ, क्या सिन्धी भाषा का सूफी-साहित्य कहीं नागराक्षरों में भी छपा है ? यह उनसे याद करके पूछ देखिए।

दशहरे के दिन शाम को ५ बजे इधर ऐसा भयंकर तूफान आया कि बस कुछ न पूछिए। हजारों वृक्ष उखड गये, छतें उड गईं। गुरुकुल में हम लोगों के रहने के मकान टीन के हैं, करीब सब की टीन उस दिन उड गई। मैं उस समय हरिद्वार में था, पीछे तूफान आया। सब सामान खराब हो गया। भाषण के कुछ नोट्स लिये थे, कुछ लिखा था वह भी नष्ट हो गया। पुस्तकें भी भीग गईं। आँधी के साथ ओले और वर्षा भी थी। आज चाँदपुर से पत्र आया है। उधर भी यही दशा रही। वहाँ के एक गाँव में ऐसी आग लगी कि ३०-३५ आदमी जल मरे। खलियानों में रक्खे हुए अनाजों का भूसा-दाना सब हवा हो गया। उधर आगरे में तो इसका जोर नहीं था ?

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

३८

गुरुकुल, कांगडी (बिजनौर)
१५-६-२८

प्रियवर, नमस्ते।

१३-६ का कृपा-पत्र अभी मिला। समाचार जानकर प्रसन्नता हुई।

आप मुजफ्फरपुर[1] अवश्य चलिए यही उचित है। जीवनी के नोट वहीं लिख लीजिए, इतना समय वहां अवश्य मिल जायगा। और भी बहुत-सी बातें होंगी। अवश्य चलिए। इरादा पक्का रखिए। आप चलेंगे तो मुझे सन्तोष रहेगा।

खेद है कि भाषण अभी तक तैयार नहीं हो सका। पहले जो लिखा था वह उस तूफान की नजर हो गया। यहाँ कोई पुस्तक भी काम की नहीं मिली। घर में पुस्तकें मँगाई थी वह आज ही पहुँची है। काशीनाथ (आचार्यजी के ज्येष्ठ पुत्र) को बुलाया था कि लिखने में, भाषण की तैयारी में, कुछ सहायता मिलेगी, वह भी न आये। कल तार दिया है। कल तक आ गये तो शायद कुछ हो जाय, नहीं तो भद्द होगी। दो दिन निमन्त्रणपत्रादि भेजने में लग गये। मैंने आपको तीन-चार दिन के लिए बुलाने का विचार किया था, पर मुकदमे के झंझट का ख्याल करके न लिखा और अब तो वक्त ही नहीं रहा। २४ ता० को यहाँ से चल देना है। तब कहीं २६ को पहुँच सकेंगे, आप भी २६ को वहाँ पहुँचिए, श्री गोस्वामी व्रजनाथजी चलने को कहते थे। अध्यापकजी कहाँ हैं? आगरे में निमन्त्रण-पत्र तो जितने नाम याद आये मैंने भेज दिए हैं, बाकी आप जबानी मेरी ओर से सबसे निवेदन कर दीजिए। प० अनूप शर्मा का पता लगाकर उन्हें निमन्त्रण जरूर भेजिए, घर का पता मुझे भी मालूम नहीं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

---

१ सन् १९२८ ई० में मुजफ्फरपुर में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ था। आचार्यजी सभापति निर्वाचित हुए थे। उसी के लिए भाषण आदि का उल्लेख है। —सम्पादक

३९

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
३-२-२९

प्रियवर प० हरिशकरजी, नमस्ते ।

इस वार तो आपने 'विनोद-विन्दु'[1] नही विनोद की वर्षा कर दी है। वास्तव मे विनोद-लेखन-कला मे आप कमाल करने लगे है । गौडजी (श्री अध्यापक रामदास गौड) आपकी इस कला पर लट्टू है। बहुत प्रशसा करते है। अनुप्रास की बहार ऐसी होती है। वे अख्त्यार तारीफ करने को जी चाहता है । यह गौडजी की सम्मति है, मै भी इस पर स्वाद करता हूँ । सस्कृत का नही अरबी का

अपनी सगृहीत और सम्पादित वे पुस्तके आपने न भिजवाई । कई दिन मे इधर बहुत सरदी पड रही है, प्रलय युग का दृश्य उपस्थित है। यज्ञदत्त शर्मा का लेख भी पढा अच्छा लिखा है। यक्ष्मा की चिकित्सा मे प्रमाण वाक्य (सस्कृत) अशुद्ध छपे है। चरक का श्लोक तो बहुत ही अशुद्ध छपा है, मुश्किल से समझ मे आया । यज्ञदत्तजी को सशोधन करना सिखला दो । सस्कृत वाक्यो का प्रूफ उनसे ठीक करा लिया करो ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४०

गुरुकुल, कांगडी
१७-२-२९

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते ।

पत्र मिला था, मेरा कार्ड भी पहुँचा होगा । असौडे के कवि-सम्मेलन में तुम्हे जरूर ही आना पडेगा । यह याद रखखो और वहाँ 'दुम दबाने' से काम नही चलेगा । 'खौरु खोदकर' भिडना पडेगा । कुछ कविता तैयार कर रक्खो, और कविजी की कविताओ में से भी अच्छे-अच्छे नमूने चुन रक्खो, सुनाने पडेंगे । यह सब अनिवार्य है । दो-एक 'समस्या' श्री काशीनाथ के पास भेज देना, कुछ स्वतन्त्र विषय भी होगे ।

इस वार के विनोद-विन्दु सबसे बढिया रहे । घासलेटी पर तो भई कमाल किया है। गौड (श्री रामदास गौड) जी पढकर फडक गये ।[1] कमी की फहरिस्त मे

---

१ श्री हरिशकरजी उन दिनो 'आर्यमित्र' के सम्पादक थे। वे उसमें प्रति सप्ताह व्यग्यात्मक विनोद-विन्दु लिखा करते थे। इन्ही विन्दुओ की ओर आचार्यजी का सकेत है । —सम्पादक

कुछ बाते बेजोड-सी भी है । जैसे 'गगाप्रसादजी मे ट्रैक्टो की न० दे० में फैक्टो की' पहले साहब के पास तो ट्रैक्टो का ढेर है और दूसरे के पास फैक्टो का पता भी नही। फिर यह क्या बात हुई। ऐसी ही दो एक बातें और है, फिर भी सूची है मजेदार।

हजरत (बेताल) ने आतिथ्य का रोना रोया है, यानी तर रोटियाँ नही मिलती। इस पर कुछ लिख डालो । अब तक तो सुयश-मधु की ही भूख थी अब रोटियो की भी लग गई । इस दुहरे मतालबे को पब्लिक कैसे पूरा करेगी। इसे प्रकाश में लाइए, जनाब! बेताल का मतलब तो यह है कि उनका जिक्रे खैर किसी न किसी रूप मे होता रहे, नाम आगे आता रहे।

"हम तालिबे शोहरत है हमें नंग से क्या काम,
बदनाम भी गर होगे तो क्या नाम न होगा।"

यह मोटो है उस शख्स का। इसके ऊटपटाँग लेखो को जगह देकर तुम इसकी ख्याति-लिप्सा को व्यर्थ बढाते रहते हो, ऐसा न किया करो।

विनोद-विन्दुओ की कटिंग्स रखते जाओ। काम की चीज है। विनोद-विन्दुओ के तुम पीयूषवर्षी पयोद हो, या सहस्र धारा फव्वारा। मश्क बराबर जारी रक्खो।

"हो जिस तरफ़ तबीयत लाजिम है शौके कामिल,
हर बात में असर है हर रग मे मजा है।"

हाँ, तो असौड़े की बात याद रखना। दो-चार फडकती हुई कविताएँ चाहे जिस विषय पर हो जरूर बना रखो, 'समस्या' भेज दो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४१

गुरुकुल, कांगड़ी
३-५-२६

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

बहुत दिनो से पत्र नही मिला। कुशल तो है। आजकल तो आगरे मे आग बरसती होगी। यहाँ भी गरमी खब पड रही है, फिर वहाँ तो गजब ढा रही होगी।

जीती-जागती पुस्तको[1] की समालोचना की नकल और लोग भी करने लगे

---

१. श्री हरिशंकरजी शर्मा ने 'आर्यमित्र' में सजीव पुस्तको की 'अजीब आलोचना' शीर्षक स्तम्भ खोला था। इसमे वे प्रसिद्ध व्यक्तियो को पुस्तक मानकर पुस्तक की तरह ही उनकी आलोचना करते थे। यह एक नवीन और अनोखी आलोचना-शैली थी। इसी से अभिप्राय है आचार्यजी का। —सम्पादक

है। 'प्रताप', लाहौर, के सडे एडीशन मे मैंने कल रवीन्द्रनाथ, मोतीलाल आदि की ऐसी ही समालोचना पढी पर वह बात कहाँ, इसकी ईजाद का श्रेय तुम्हे ही है।

प० भास्कर भालेरावजी का पत्र-व्यवहार आपके साथ हो तो उन्हे लिखिए। उन्होने मेरे पत्र का उत्तर नही दिया। एक मराठी पुस्तक बाणभट्ट के लिए उन्हे लिखा था। यह पुस्तक आजकल अप्राप्य है। शायद उनके पास हो, मुझे जरूरत थी, उन्होने उत्तर नही दिया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९२

गुरुकुल, कांगड़ी
११-६-२६

प्रियवर, नमस्ते।

८, ६ का कार्ड अभी मिला। कई दिन से पत्र लिखने का विचार कर रहा था। इधर भी गर्मी इस साल बेहद पड रही है। काफिया तग है, फिर आगरे मे तो आग बरस रही होगी।

हाँ, चि० रामनाथ का विवाह २६ जून को है। काशीनाथ बार-बार लिख रहे है कि इस मौके पर आपको नायक नगले जरूर बुलाया जाय। इसी सम्बन्ध मे स्वय भी अनुरोध करने वाला था, उस पर काशीनाथ का सत्याग्रह है। क्या आ सकोगे ? तुम्हारे ढिल्लडपन से आशा नही होती, वक्त पर कोई न कोई बहाना बना दोगे। पर इस बार चिराभ्यस्त 'बहाना प्रणाली' को छोडकर आ सको तो मेरा सर्वात्मना अनुरोध है कि जरूर आओ। गरमी का मौसम है, यात्रा में कष्ट तो होगा ही, पर इन दिनो आगरे की स्थिति में जितना कष्ट होता है उससे बहुत कम होगा। २७ जून को नायक नगले पहुँचने का प्रोग्राम पक्का बनालो, और काशीनाथ को स्वीकृति की सूचना दे दो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च:

श्री कविजी भी विवाह में आने का विचार तो प्रकट कर रहे है, पर उन्हें कष्ट देने का साहस नही होता, पर तुम न आये तो शिकायत गैर मामूली होगी।'

४३

कलकत्ता
१२-६-२६

प्रियवर हरिशंकरजी, नमस्ते ।

मैं अभी यहाँ अटका हूँ । कल पुस्तक की छपाई शेष हुई है, अब दफ्तरी के चक्कर में हूँ । १०-१५ दिन कम से कम और लगेंगे । पुस्तकें कुछ साथ लेकर जाना चाहता हूँ । मैं यहाँ आकर शुरू से आखीर तक बीमार ही रहा । अब भी तबीयत अच्छी नहीं । बड़ी मुश्किल से 'पद्मपराग' का पहला भाग छप सका है, मिलते ही भेजूंगा । मुख्याध्यापकजी का ब्लॉक गोस्वामीजी का भेजा हुआ ऐन वक्त पर मिल गया था । काम आ गया । पुस्तक में आठ चित्र हैं । कागज भी अच्छा है, पर छपाई अच्छी नहीं हुई, खैर । हाँ, सरोज के विशेषांक में एक छायावादी महाशय का 'आधुनिक खड़ी बोली की कविता की प्रगति' पर लम्बा लेख है । उसमें श्री शंकरजी को 'सरस्वती'-काल का कवि कहा गया है, यानी द्विवेदीजी के प्रोत्साहन से ही उन्होंने खड़ी बोली में नये ढंग की कविता लिखनी शुरू की । पर यह बात तो इतिहास-विरुद्ध है न । शंकरजी तो बहुत पहले से ही खड़ी बोली में और देश-भक्ति पर कविता करते आ रहे थे । 'दई मारे भारत होरी है' यह तो कोई ३५ वर्ष पुरानी रचना है । 'शंकर-सरोज' का प्रथम संस्करण भी मैं समझता हूँ 'सरस्वती' निकलने से पहले निकला था । उसकी समालोचना भी 'सरस्वती' में निकली थी ।

इस पर सरोज' में एक नोट देने की जरूरत है । नोट या हिंट्स फौरन भेजो, जिससे इसी अंक में निकल जाय ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४४

कलकत्ता
६-१०-२६

प्रियवर हरिशंकरजी, नमस्ते ।

मालूम होता है महात्माजी[1] की मदहसराई करके अब तुम मामूली आदमियों

---

१. इन दिनों हरिशंकरजी ने महात्मा गांधी की प्रशंसा में एक कविता लिखी थी, जो सन् १९२९ में उनके आगरा पधारने पर स्वागत में पढ़ी गई थी । यह कविता बहुत पसन्द की गई और कई समाचारपत्रों में प्रकाशित हुई । इसी ओर आचार्यजी का व्यंग्य है । —सम्पादक

से बात करना शान के खिलाफ समझने लगे हो। खत का जवाब भी नही देते। २०-२५ दिन हुए एक जरूरी कार्ड लिखा था, आज तक जवाब मिलता है। महात्माजी भी लोगो के पत्रो का जवाब देते है और वक्त पर देते है। जैसा कि प० बनारसीदासजी कहते है। जो कुछ हो यह पत्र हजम करने की आदत अच्छी नही, डकार तक नही लेते।

'आर्यमित्र' के ऋष्यक मे एक विज्ञापन देने का विचार है, जो विज्ञापन 'विशाल भारत' अक्टूबर के शुरू मे ५वे पेज पर सतसई और पद्मपराग का छपा है वही ज्यो का त्यो 'आर्यमित्र' के ऋष्यक मे दिया जाय तो क्या चार्ज होगा? यदि किसी अच्छी जगह दिया जा सके और चार्ज इतना किया जाय कि आसानी मे दिया जा सके तो सूचना दो। आशा तो नही है कि वक्त पर जवाब दोगे फिर भी मुमकिन है इधर कान हो जायँ, जवाब मिल जाय। हिन्दू सगठन पर एक छोटा-सा लेख 'स्वतन्त्र' २६, ९ मे मैने लिखा था, उसे ऋष्यक मे उद्धृत कर दो तो अच्छा है, उद्धरणीय है। मै १५-२० दिन यहाँ और रहूँगा। हृषीकेश भट्टाचार्य शास्त्री के सस्कृत निबन्ध छपा रहा हूँ। पद्मपराग की जिल्दे भी अभी दफ्तरी के यहाँ से नही मिली, इस हफ्ते में मिल जायँगी। प० बनारसीदासजी आज रवाना हो रहे है। इस कार्ड का उत्तर मिल जाय तो बडी बात हो। सिर्फ जो बात पूछी है उसी का, दो हर्फी हो, ज्यादा न सही।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

४५

कलकत्ता
१०-१०-२९

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

८, १० का पत्र मिला। ढिल्लडता छोडने के लिए आप कमर कस रहे है, यह जानकर खुशी हुई।

'विशाल भारत' की अक्टूबर की संख्या पहुँची होगी। उसमें एक विस्तृत समालोचना है, उसे जरा पढ लीजिए। सितम्बर में भी एक लेख म० वि० पर निकला था।

चतुर्वेदीजी (श्री बनारसीदास चतुर्वेदी) से तो भेंट होगी ही। शायद आज फ़ीरोज़ाबाद पहुँच जायँ।

पद्मपराग की समालोचना 'आर्यमित्र' मे पढी थी। यह आपने अच्छी उस्तादी की, बेचारे चतुर्वेदीजी इतज़ार में ही रह गये कि 'विशाल भारत' के लिए समालोचना आ रही

है। पुस्तक के फर्मे इसीलिए उन्होने भेजे थे। आपने अमानत में खयानत कर डाली। समालोचना का पहला चास खुद ने ले लिया। चतुर्वेदीजी टापते ही रह गये। पद्मपराग में सबसे पहला लेख 'आर्यमित्र' से ही उद्धृत है इसलिए पहले समालोचना निकालने का उसे हक तो था। हाँ, मैंने काँगडी छोड दी। सतसई पूरी करने का विचार तो है, पर यह काम होता नही दीखता। कोई सहायक नही मिलता। देखिए क्या होता है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४६

गांगेय भवन
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
६-१२-२६

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

तुम्हारा पत्र कई दिन हुए यथासमय मिला था। कार्य-व्यग्रता के कारण उत्तर में विलम्ब हुआ। इस बीच में दो दिन के लिए मैं रवीन्द्रनाथ का शान्ति-निकेतन देखने चला गया था। वहाँ से आकर ज्वर आ गया, यह भी विलम्ब का हेतु हुआ। चतुर्वेदीजी की शिकायत जो तुमने लिखी है, ठीक है। उन्होने शायद अपनी सफाई भी भेजी है। मैंने उन्हे इस पर कुछ फटकारा भी था। बात यह है कि चतुर्वेदीजी कुछ 'हौलू' तबियत के आदमी हैं, और प्रोपेगेंडिस्ट हैं। जिस लाइन में पड गये हैं यह इनकी तबीयत और आदत के खिलाफ है। इन्हे एक और सनक है—अपनी निष्पक्षता दिखाने का खपत है। इसमे अक्सर अनर्थ कर डालते हैं और फिर फब्तियाँ कहते हैं—"अरे साहब, मैंने उनका लेख नही छापा, उनकी समालोचना नही की, उनके पत्रो का उत्तर नही दिया। यद्यपि उनसे मेरी घनिष्ठता, मित्रता है, मैं उनका सम्मान करता हूँ, पर जिस बात में मत नही मिलता उसमें मैं किसी का लिहाज नही करता।" यह ससार में बस दो आदमियो पर लट्टू हैं, गाधीजी और मि० एड्रूज़ पर। इनकी गुण-गाथा गाते-गाते नही थकते। फिर भी आदमी अच्छे हैं, 'ये और बात है कि ज़रा ··'

'चाँद' के मारवाडी अक की समालोचना 'आर्यमित्र' में आज पढी, खूब लिखी है। 'चाँद' बडा ही नारकीय पत्र है, मुझे तो इससे शुरू ही से घोर घृणा रही है। इसका बायकाट होना चाहिए। खैर जाने दो दोजखी जन्तू को।

श्री ठाकुर माधवसिंहजी की मौत का हाल पढकर वडा दुःख हुआ। शुद्धि-संगठन का एक स्तम्भ जाता रहा, अपनी जगह हमेशा के लिए खाली छोड गये। ऐसे लगन के आदमी अब कहाँ पैदा होते हैं। पं० नन्दकिशोर देव शर्मा भी चल बसे।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४७

गांगेय भवन
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
११-२-३०

प्रिय हरिशंकरजी, नमस्ते।

वहुत दिन हुए एक पत्र तुम्हारा आया था। उत्तर मे वडा विलम्ब हो गया। कई कारण ऐसे ही हुए, उत्तर न दे सका।

यह सुनकर सन्तोष हुआ कि श्री कविजी की कविताओ का सग्रह समाप्त हो गया। अब एक काम करो, दुर्बोध शब्दो पर टिप्पनियाँ दे डालो। एक क्रम-विभाग भी वना लो। सब कविताओ को ध्यान से देख जाओ, यानी सम्पादन का 'रिहर्सल' कर जाओ, फिर मैं देखूंगा। यहाँ से छुटकारा पाकर मैं उधर ही आने का प्रोग्राम वना रहा हूँ। विचार ऐसा है कि 'पद्म-पराग' का दूसरा भाग आगरे के शांति प्रेस में छपाऊँ, यदि छपाई के रुपये का किसी तरह प्रवन्ध हो गया तो ऐसा ही करूँगा। दूसरा भाग किसी को देने का विचार नही है। इसी चेष्टा में हूँ कि स्वय ही प्रकाशित करूँ और आगरे में ही छपाऊँ। शाति प्रेस मुझे पसन्द है। यदि कुछ प्रवन्ध ऐसा हो गया तो आगरे आना ही पडेगा, तभी शकर-सूक्तियो का सम्पादन हो जायगा। नही तो इसी काम को १०-५ दिन को उधर आ जाऊँगा। इतने में तुम सम्पादन का 'रिहर्सल' जरूर कर डालो। ऐसा हो जाने से मेरा काम हल्का हो जायगा। मै १०-१२ दिन मे यहाँ से छुट्टी पा जाऊँगा। संस्कृत पुस्तक का टाइटिल पेज, शुद्धि-पत्र, सम्मति आदि छपाना वाकी है।

कभी-कभी तुम वडी अत्युक्ति कर डालते हो। म० ······ का 'इण्टरव्यू' क्या है ·· · प्रशसा का पुलिंदा है। क्या सचमुच अमरीका में मूर्खता का ही साम्राज्य है जो ··· मे मियाँ मिट्ठू जिन्हे किसी भाषा पर भी अधिकार नही, न अंग्रेज़ी शुद्ध बोल सकते है, न 'ससकीरत' का ही अच्छर जानते है, न सुवक्ता है, न सुलेखक है, किसी भी विषय के विशेषज्ञ क्या साधारणज्ञ भी नहीं हैं, फिर भी अमरीका वाले कहते है कि

इतना बडा विद्वान् उपदेष्टा इससे पहले अमरीका मे नही आया । श्री स्वामी विवेकानन्द, श्री स्वामी रामतीर्थजी महाराज, लाला हरदयालजी, लाला लाजपतरायजी क्या इतने भी विद्वान् नही जितने मिस्टर ···· या मास्टर · · · जिन्होंने दो-चार व्याख्यानों की कापियाँ बना रक्खी है, ग्रामोफोन की तरह उन्हे ही सुना देते हैं । अमरीका के अखबारो की कतरन देखकर ही फैसला करना चाहिए था । तुम्हारे सामने तो · जी खुद मौजूद थे, इन्हे पहले से जानते भी थे । अमरीका के अखबारो की कतरनो के बारे मे एक बार स्वर्गीय प० रामचन्द्र ने अमरीका मे लिखा था कि अमरीका के अखबारो को कालम भरने के लिए कुछ चाहिए । परदेश से कोई गधा भी आता है तो जहाज से उतरते ही उसका फोटो ले लिया जाता है । रिपोर्ट छप जाती है, किसी का भी व्याख्यान हो बहुत-सी आवारागर्द औरतो की भीड सुनने पहुँच जाती है, तालियाँ पिट जाती हैं । इन बातो को हिन्दुस्तान वाले बडा महत्त्व दे डालते हैं, इत्यादि । खैर, मतलब यह है कि ऐसे मौको पर जरा अहतियात से काम लिया करो। किसी आत्म-प्रशसक के दम-झाँसे मे न आजाया करो । बहुत-से आदमी इस प्रकार प्रसिद्धि प्राप्त कर पीछे पूरे ठग बन जाते हैं ।

आशा है, तुम प्रसन्न हो ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४९

c/o मध्य भारत हिन्दी सा० समिति
इन्दौर

प्रियवर हरिशकरजी, नमस्ते ।

कार्ड मिला । इससे पहला कार्ड नही मिला, न जाने कहाँ बहककर चला गया । आगरे की गरमी का अनुमान तो मै यहीं से कर रहा हूँ । सचमुच ये दिन आप पर बडे सकट मे हैं । अकेले पडे गरमी में भुन रहे हैं । 'आजकल आगरे में आग बरसत है' का पाठ कर रहे हैं । वर्षा के स्वागत में कविता लिखिए । वर्षा की आराधना कीजिए तो शायद दैव का दिल पसीज जाय । यहाँ तो वर्षा शुरू हो गई है । दो-एक बार बूँदा-बाँदी हो गई है । अब मेह में आग लगने ही वाली है, बादल मँडरा रहे हैं, बरसात की बहार है, ठडी बयार बह रही है, आप भी हवा खा जाइए ।

आपके सहवासी 'पुरुफेसरान्' साहबान कब तक वही रहेंगे । आप यह नियम क्यो नही बना देते कि हर साल छुट्टियो में बारी-बारी से एक-एक प्रोफेसर पडोसी

आपके पास रहा करे । सारे के सारे एक साथ भाग जाते हैं । यह तो बेशक आपके साथ इन्तहायी जुल्म है। इसके खिलाफ सदाए एहतजाज् बुलन्द कीजिए।

जब से इंदौर आया हूं 'आर्यमित्र' नहीं देखा। यहाँ के पुस्तकालय में और 'वीणा' के परिवर्तन में भी नहीं आता । मैंने 'वीणा' वालों से कह दिया है, वीणा पहुँचेगी, 'आर्यमित्र' पिछले चार अंको समेत मुझे लौटती डाक से भेजिए बल्कि परिवर्तन में आने वाले उर्दू अखबारों के पिछले महीने के जितने अंक रद्दी में आसानी से मिल जायें वे भी भेज दीजिए, तो अच्छा हो। यहाँ सिवाय 'स्वाधीन भारत' और 'भारत' के कोई अखबार ही देखने को नहीं मिला, तरस गये। 'आर्यमित्र' 'वीणा' के परिवर्तन में जारी करा दीजिए। 'समिति का वाचनालय' यहाँ काम की चीज है। अखबार पढ़ने बहुत आ जाते हैं। 'वीणा' के परिवर्तन में आने वाले पत्रों से वाचनालय का काम चलता है।

हम शायद हफ्ते के अन्त तक इन्दौर छोड़ के जहाँ जायँगे और जब जायँगे, सूचना देंगे। तुम इस बीच में कहीं दूर पर जाओ तो लिखना। तुम्हारी अनुपस्थिति में आगरे न उतरेंगे।

— भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४६

C/O ठाकुर कन्हैयालालजी भाटी
होल्कर कालेज-होस्टल, इन्दौर सिटी

प्रिय हरिशंकरजी, नमस्ते।

मैं यहाँ ६ ता० के अधिकार-प्राप्ति-महोत्सव में निमन्त्रित होकर आया था। मालवा के ऐतिहासिक तीर्थों के दर्शन, जिसकी चिरकाल से इच्छा थी, मुख्य प्रयोजन है। भोजदेव की धारा नगरी और माडू का महा किला देख चुका हूँ। उज्जैन कालिदास की जन्मभूमि 'मदसौर', चित्तौर और उदयपुर भी जाऊँगा। इस यात्रा के संस्मरण लिखे गये तो पठनीय होंगे। पर अपने हृदय की निर्बलता से डर है कि लिखने दे या न लिखने दे। शोक-संस्मरण लिखने से अत्यन्त कष्ट होता है। ऐसी घटनाओं की निरन्तर स्मृति ने हृदय को निर्बल बना दिया है। खैर, प्रयत्न करूंगा। सम्भव है, वापसी में आगरे भी आ निकलूं।

यहाँ के प्रधान मन्त्री मिस्टर बापना ने मुझे बुलवाया था। बड़े ही उदार और सज्जन हैं। हिन्दी का इस राज्य में सर्वाधिक प्रचार है। यानी ऐसा किसी

भी हिन्दू-राज्य में नहीं। म० भा० हि० सा० समिति की इमारत जो अभी बनकर तैयार हुई है, बड़ी ही शानदार है। मैंने कहीं किसी बड़ी से बड़ी संस्था का भी ऐसा भव्य और विशाल मन्दिर नहीं देखा। देखकर जी खुश हो गया। सम्भवतः इसका उद्घाटन अभी दो-चार दिन में श्री महाराज के हाथों होने वाला है। यह समिति का उत्सव होगा। मैं अभी १०-१५ दिन यहाँ और हूँ। आपका पत्र चलते वक्त मिल गया था। उत्तर देने का अवकाश न मिला। मौका मिला तो मिलूँगा। पत्रोत्तर दीजिए और ढूंढ-भालकर हरिदत्तजी को शीघ्रातिशीघ्र यहाँ भिजवाइए।

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४

श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे गये पत्र

५०

सेवा उपवन, नगला काशी
१८-६-१६१६

प्रिय चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम ।

पहले कार्ड में मैंने आपको विस्तृत पत्र लिखने की बात लिखी थी, पर इस बीच मे बराबर बीमार रहा, आपको पत्र लिखने के बाद में प्रयाग चला गया। ६-७ दिन वहाँ रहा। यहाँ लौटने पर और भी तबीयत खराब हो गई। इसी सिलसिले मे ६-६-१६ की रात को प्राणहारिणीविसूचिका ने आक्रमण करके 'न रहे बाँस न बजे बाँसुरी' को चरितार्थ करना चाहा। पर ऐसा न हो सका। 'हमने चाहा था कि मर जाये सो वह भी न हुआ' इसी झमेले मे आपको पत्र न लिख सका। जो लिखना चाहता था, वह बहुत कुछ याद भी न रहा।

प्रयाग मे प० श्रीधर पाठक बडी बेसब्री से आपका इन्तजार कर रहे है। परसो उनका पत्र आया है कि चतुर्वेदीजी बिना मिले न चले जायँ। प्रयाग अवश्य आवें। आप उन्हे लिख दीजिए और कह दीजिए। ऐसा कीजिए, आप प्रयाग पधारिये। मुझे सूचना दीजिए कि किस तारीख को आते है। यदि मुझे अचानक घर जाना पडा, तो मै प्रयाग में पाठकजी को इसकी सूचना देता जाऊँगा।

बिहारी के सम्बन्ध में जयपुर की नई जाँच का पता लगाना चाहिए। बा० जगन्नाथदास रत्नाकर, बा० श्याममुन्दर के मित्र, ने एक आदमी जयपुर भेजा है। यह बहुत दिन हुए मालूम हुआ था। प० गिरिधर शर्माजी को मैंने लिखा था कि इस खोज का पता चलावें। पर उन्होने उत्तर नही दिया। गुलेरीजी से भी प्रार्थना की थी वह भी चुप है। देखिए क्या होता है? यह किश्ती किसी किनारे पर भी पहुँचेगी या बीच में ही डगमगाती रहेगी? 'प्रथम दृष्टि में ही प्रेमोद्भव' की भी एक ही रही। केवल 'लीडरता' पर ही नही और बातो पर भी मुझे बहुत कुछ वक्तव्य देना है, कभी फुर्सत में कहूँगा। इन स्वाँगधारी लीडरा से परमात्मा ही देश की रक्षा करे। प० सत्यनारायणजी की जीवनी कितनी लिखी गई?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५१

c/o 'भरत-मन्दिर' हृषीकेश
६-४-२४

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम ।

आखिर आप समुद्र-यात्रा कर ही आये । कल 'अभ्युदय' मे आपकी यात्रा का हाल पढकर अत्यन्त दुख हुआ, आप तीसरे दर्जे की डैक मे असह्य कष्ट झेलते हुए यात्रा करे, और 'श्रीमती मूर्तिमती मुस्लिम संस्कृति', फर्स्ट क्लास में जायें, जिन्होने प्रवासी भारतवासियो के सम्बन्ध मे आपके मुकावले मे कुछ भी नही किया। इस अनर्थ और अधेर-खाते का कुछ ठिकाना है ! इमी पाप का फल हम लोग भोग रहे है । जी खोलकर इस अनर्थ के विरुद्ध आन्दोलन करने को जी चाहता है । मुझे आपका यह भोलापन, निरीहता, आत्म-विस्मृति और स्वार्थ-त्याग पसन्द नही । आप क्या किसी से कुछ कम हैं ? प्रवास-विज्ञान मे तो आपका प्रतिद्वन्द्वी लीडरो में कोई भी नही । यह आपके व्यक्तित्व का प्रश्न नही है, सिद्धान्त की वात है, क्या धृष्टता और धूर्तता के अतिरिक्त न्याय्य सम्मान-प्राप्ति का अन्य उपाय नही है । आप चाहे इसकी परवा न करे, पर आपको जानने वाले इस अन्याय को सहन नही करेंगे । मैं इस पर कुछ लिखने वाला हूँ । 'अभ्युदय' में आपका लेख पढकर अत्यन्त क्षोभ, दुख और मनस्ताप है । पिछले साल आपका विचार इधर आने का था, समुद्र-यात्रा का प्रायश्चित्त करने के लिए भी अब आपको गंगा-स्नानार्थ यहाँ आना चाहिए । आजकल जलवायु और ऋतु आदि यहाँ सब स्वास्थ्यवर्द्धक और अनुकूल है । अवश्य आइए । चि० रामनारायण (पटे) को भी साथ लाइए । कुछ दिन यहाँ हरद्वार, कनखल, ज्वालापुर मे या हृषीकेश में, जहाँ आप पसन्द करे, आकर रहिए । आप आयेंगे तो मैं भी आपका 'गाइड' और 'स्वयसेवक' वनकर साथ रहूँगा। मै १५ दिन से इधर ही हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५२

नायक नगला
सोमवार, दीपमालिका, १९८१

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम ।

आपका १७-१० का पत्र और 'लीडर' की कटिंग का लिफाफा परसों यहाँ पहुँचे, धन्यवाद । आपके पहले पत्रो के उत्तर में एक कार्ड भेजा था, शायद पहुंचा हो । आप सचमुच चतुर्वेदी है, खूब चौमुखा-चौतरफा आन्दोलन करना जानते

है। अच्छा किया जो एक नोट 'लीडर' मे लिखकर 'हक्के आन्दोलन' अदा कर दिया। साहित्य-सम्मेलन पोलिटिकल लीडरो के हाथ का खिलौना बन रहा है। इस बार बडी कोशिशो से प० गोस्वामीजी सभापति बन पाये हैं। देखिये वह भी क्या फरमाते हैं। खद्दर और चर्खे की महिमा का राग अलापते हैं या साहित्य का तराना छेडते हैं। माफ कीजिए मुझे इस वक्त एक पुराना लतीफा याद आ गया। भागलपुर के बाद लखनऊ का सम्मेलन होने को था। सभापति-निर्वाचन के लिए घोर आन्दोलन छिडा हुआ था, बडी ले-दे हो रही थी। उस वक्त मुझे इलहाम हुआ था, बात पुरानी है, पर लुत्फ से खाली नही, सुनिए—

"फिर बहार आई चमन में बुलबुलों की धूम है,
लखनऊ वालो का देखें कैसा कुछ मकसूम है।
छेडती दिलकश तराना बुलबुले नालां है वाँ,
याकि भागलपूर की मानिन्द बोले बूम है।"

सचमुच हिन्दी-साहित्य मे कुछ भी नही हो रहा। सब अच्छे-अच्छे आदमी पालिटिक्स के पीछे पडे हैं। बचा-खुचा वक्त मरे-मरे 'कृष्णार्पणम्' साहित्य को देते हैं। यदि देते है—मै एक आप ही की मिसाल लेता हूँ। मेरा विश्वास है कि आप बहुत ही अच्छी चिर-स्मरणीय साहित्य-सेवा कर सकते हैं, पर आपके पीछे प्रवास का रोग लिपटा है। नि सन्देह आपका यह काम भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस क्षेत्र में भी आप जो कुछ कर रहे हैं, वह आप ही का काम है। पर मै चाहता हूँ आप सब छोडकर साहित्य-सेवा में लगते। गगा, यमुना का तट छोडकर आप भी कहाँ काले कोसो दूर साबरमती के किनारे जाकर बैठे हे। वहाँ बैठकर साहित्य-सेवियो की जीवनियाँ लिखना चाहते हैं, अचम्भे की बात है। हर वक्त चर्खे की चरख चूँ, बापूजी की दिन-चर्या का विवरण, सुनते-सुनते दिन बीतता होगा। न कोई हिन्दी जानने वाला आपसे मिलता होगा 'केम शूं', के सिवा शुद्ध हिन्दी का एक शब्द भी सुनने को न मिलता होगा। मुझे डर है कि गुजराती हिन्दी का रग आपकी जुबान और कलम पर न चढ जाय। भई, साहित्य-सेवा करो, और इधर आसन जमाओ। बोलपुर का 'शान्ति-निकेतन' और साबरमती का 'सत्याग्रह आश्रम' हिन्दी साहित्य-सेवा के लिए उपयुक्त स्थान नही है। सम्पादकाचार्य प० रुद्रदत्तजी की जीवनी के लिए जैसा कि मैंने पहले कार्ड में लिखा है 'भारतमित्र' आदि पत्रो की पुरानी फाइले टटोलनी पडेंगी। 'आर्यमत मार्तण्ड' नाटक आजकल अप्राप्य है, कही किसी के पास आगरे में शायद मिल सके। बाकी स्वर्ग में 'सब्जेक्ट कमीटी', 'स्वर्ग में महासभा', 'कटी-जनेऊ का व्याह', ये ट्रेक्ट हे, आपने भी देखे होंगे, न देखे हो तो मेरे पास है, भेज दूँगा। एक कागज पर उनके हाथ की एक हिन्दी कविता है। दो पर्चे 'भारत-रत्न' तथा 'सरपंच'

साप्ताहिक पत्र के हे। एकाध कार्ड होगा। यही सामग्री मेरे पास है। वह धामपुर, जो जिले बिजनौर मे एक कस्बा है, के रहने वाले थे। उनकी विधवा पत्नी अभी जिन्दा है। छोटे भाई दामोदरदास सस्कृत के और हिन्दी के अच्छे पण्डित थे। उनके सामने ही मर चुके थे। सन्तान दोनो भाइयो के नही, उनका कुनबे का एक भतीजा छोटेलाल कही किसी प्रेस मे कम्पोजीटर है। कुछ बाते उससे मालूम हो सकेगी। प० रुद्रदत्तजी के पिता प० काशीनाथ सस्कृत के बडे पण्डित थे। तन्त्र-शास्त्र मे उनका अच्छा परिचय था। पण्डित रुद्रदत्तजी सुलेखक तो थे ही, सुवक्ता भी थे। बहुत अच्छा बोलते थे। प्रत्युत्पन्न-मति और प्रतिभाशाली थे। आर्यसमाज की ओर से बगाल-बिहार मे उन्होने बहुत दिनो तक प्रचार का काम किया है। साहित्याचार्य प० अम्बिकादत्तजी व्यास उन दिनो उनके प्रतिद्वन्द्वी थे। प्राय शास्त्रार्थो मे व्यासजी को उन्होने खूब छकाया है। इसी से उनकी शास्त्रार्थ-पटुता का परिचय मिलता है। लेखक तो वह अपने ढग के एक ही थे। मुझे उनका ढग बहुत ही पसन्द था। उनके सम्पादित 'आर्यावर्त' और 'भारतमित्र' के बहुत से अक मेरे पास थे, जो खेद है कि नष्ट हो हो गये। अफसोस है उनकी साहित्य-सेवा की किसी ने कद्र न की। ऐसा बहुगुणी आदमी हिन्दी ससार मे इस समय तो है नही। हिन्दी के रद्दी-रद्दी लेखको के चित्र और चरित्र (··· · ······) आदि वृथा पुष्ट पोथो में प्रकाशित हो गये, पर पण्डित रुद्रदत्त को किसी ने न पूछा। ससार अन्धा है और क्या कहा जाय! आशा है, आप सानन्द है। हमारा गाँव तो बाढ मे बचा रहा, पर इधर गगा-किनारे के अनेक गाँव, और असख्य पशु बह गये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५३

नायक नगला
भाद्रपद सुदि ८, १९८१ वि०

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, नमस्ते।

कई दिन हुए आपका रजिस्टर्ड कृपापत्र मिला था। जिस दिन पत्र आया, उस दिन मैं बीमार था। बुखार चढ रहा था। आपका करुणाजनक पत्र पढकर मुझे बेअख्त्यार रोना आ गया। आँसुओ के प्रवाह में बुखार बह गया। जिसकी सहृदयता की सराहना 'शेष' और 'शारद' भी नही कर सकते। आश्चर्य है गाधीजी के आश्रम में रहकर और प्रवास के रूखे-सूखे विषय में पडकर भी आपकी यह सहृदयता कैसे बची रह गई!

यह जानकर बडा हर्ष हुआ कि आपने कविरत्नजी की जीवनी लिख डाली। आपकी मधुर भाषा में भला क्या इसलाह दूंगा ? "गुल को क्या बागवां सँवारेंगे !" फिर भी मै जीवनी की कापी इस लोभ से देख लूंगा कि छपने से पहले मुझे देखने का सौभाग्य प्राप्त हो जायगा। जैसी बन पडेगी भूमिका भी लिखने की चेष्टा करूँगा, अपना कर्तव्य समझकर, वरना अब तो मैं लिखना भूलता जा रहा हूं। वर्षों से कुछ भी नही लिखा, कुछ लिखा ही नही जाता। खैर, जहाँ कहिए जब कहिए हाज़िर हूं। प० हरिशकरजी के पत्र से और 'आर्यमित्र' से मालूम हुआ कि आप घर आ गये हैं। मेरा इरादा कई महीने से हरदुआगज (कविजी) के पास जाने का हो रहा है। वह बार-बार बुला रहे हैं। यदि वहाँ आप भी चले तो कैसा हो ? यदि यहाँ नायक नगले मे आप पधारे तो यह स्थान भी आपके पदार्पण से पवित्र बन जाय। पर इस मौसम में यहाँ आने में आपको कष्ट होगा। आप फीरोजाबाद कब तक ठहरेंगे ? महीना-बीस दिन वही ठहरने का इरादा हो तो हरदुआगज होता हुआ वही पहुँचूं। इस बारे में जैस आपका विचार हो, जिसमें सुगमता समझे, वैसे ही 'बिला तकल्लुफ' आज्ञा कीजिए। आपका पत्र आने पर वैसा ही प्रोग्राम बना डालूंगा। कविरत्न (सत्य-नारायणजी) के स्मारक के सम्बन्ध में आपका प्रस्ताव बहुत ही समुचित है, सभी पत्र इसका अनुमोदन कर रहे हैं। मै भी हृदय से उसका अनुमोदन पत्रो मे करूँगा। साहित्य-सम्मेलन के आगामी अधिवेशन पर भी इस प्रस्ताव को खूब जोश से उठाया जाय। कविरत्नजी की जीवनी से निपटकर आप कुछ काम हिन्दू-सगठन के सम्बन्ध में भी करें, तो अच्छा हो। "इस कौम के भी मुर्दे मोहताज है कफन के।" हिन्दू-मुस्लिम मेल की मोह-मदिरा ने हिन्दुओ का सत्यानाश कर दिया। इस विषय पर आप से बहुत-सी बातें करनी है। गांधीजी को न जाने क्या हो गया है, जो बराबर हिन्दुओ को ही दबाते जा रहे हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५४

नायक नगला, चांदपुर (बिजनौर)
कार्तिक कृ० ६, १९८१

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

८-१०-२४ का कृपा-पत्र और कार्ड कल मिले। अपने पत्रो का उत्तर न मिलने से मै चिन्तित था। इधर जल-प्रलय ने गज़ब ढा दिया। इधर-उधर जाने के सब मार्ग बन्द है, वरना मै अब से बीस-पच्चीस दिन पहले हरदुआगज पहुँच गया

होता। इस आशा से कि वही तार देकर आपको बुला लूं। खैर, अब तो आप चले ही गये। सत्यनारायणजी की जीवनी छपने से पहले मैं ज़रूर सुनना चाहता हूँ। जीवनियाँ लिखने का आपका संकल्प बहुत ही उत्तम है, इस सूझ के लिए धन्यवाद है। आपकी सूची में महाकवि शंकर का नाम न देखकर मुझे खेद और आश्चर्य था। आपको लिखने वाला था। शंकरजी अद्भुत पुरुष हैं, आप मिलेंगे तो अत्यन्त प्रसन्न होंगे। वह अब 'कूलद्रुम' हो रहे हैं। जल्दी मिल लीजिए। बेचारों के अब हाल ही में बड़े पुत्र का वियोग हो गया। व्याकुल हैं। लाइन खुलने पर हरदुआगंज जाने वाला हूँ। आप एक पत्र पं० हरिशंकरजी को उनकी जीवनी का मसाला संग्रह करने को और लिख दीजिए। मैं तो प्रयत्न करूंगा ही। सम्पादकाचार्य रुद्रदत्तजी की जीवनी के लिए 'भारतमित्र', 'आर्यावर्त', 'आर्यमित्र', 'भारत-रत्न' आदि पत्रों की फाइलें देखनी होंगी। 'आर्यमत मार्तण्ड नाटक', 'स्वर्ग में सब्जेक्ट कमेटी', 'स्वर्ग में महासभा', 'कण्ठी-जनेऊ का व्याह' ये तीन हास्य रस के ट्रैक्ट भी उनकी रचना हैं। सम्पादकाचार्य अद्वितीय लेखक थे। पुराण और तन्त्रशास्त्र के बड़े मार्मिक विद्वान् थे। उनकी जीवनी लिखने में आपको यथासाध्य सहायता दूँगा। शेष दूसरे पत्र में लिखूंगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५५

नायक नगला, चांदपुर
का० सु० १४, १९८२

प्रिय पण्डितजी, प्रणाम।

कहिये कुशल तो है? आपका स्वास्थ्य कैसा है? मैं तो अभी तक अस्वस्थ हूँ। घर में कई लोग बीमार हैं। चि० काशीनाथ दो महीने से रोगियों की परिचर्या में सन्नद्ध था, मेरे यहाँ आने पर मुझे परिचर्या का चार्ज देकर स्वयं बीमार पड़ गया। अब मैं बीमार भी हूँ और तीमारदार भी। भाष्यभाग पहुँचा होगा। पहुँच न पहुँचने से चिन्ता है। आशा है, बोलपुर शास्त्रीजी को आपने अपने सिफारशी पत्र के साथ पुस्तकें भेज दी होंगी। शास्त्रीजी से पुस्तकों पर संस्कृत में सम्मति मँगा दीजिये। सम्मति यथावकाश पूरी पुस्तक पढ़कर लिखें, ऐसी प्रार्थना उनसे कीजिये। किसी बंगला पत्रिका में वह समालोचना लिखें तो और भी अच्छा। अफसोस है कि वृन्दावन आना न हो सकेगा। कृपा-दृष्टि रखिये। कुशल समाचार लिखते रहिये। पूज्य पिताजी, पटेजी और अमृतलालजी से प्रणाम-नमस्कार कहिये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५६

काव्यकुटीर, नायक नगला, (बिजनौर)
फाल्गुन बदि ८, १९८२

चौबेजी, पालागन।

कहिये क्या समाचार है? किस धुन मे मग्न है? क्या बिल्कुल प्रवासियो और परदेशियो ही के हो रहे? मैं भी सापेक्ष परदेशी ही हूँ। प्राय प्रवास मे रहता हूँ। इस कारण आपकी कृपा का किसी अश मे भी अधिकारी पात्र हूँ। इस बीच मैं मैंने दो-एक पत्र भी भेजे, पर उत्तर न मिला, न आपका कुशल समाचार मालूम हुआ। प्रयाग भी शायद आप अभी तक नही आये। क्या प्रोगाम बदल गया? आजकल क्या कर रहे हैं? अगले प्रोग्राम क्या है? और तो सब कुशल मगल है। शकरजी के यहाँ कब जाने का विचार है? मैं अभी दस-बारह दिन हुए दो दिन के लिए हरदुआगज हो आया हूँ, आप भी हो आइये या फिर साथ चलने का प्रोग्राम बनाइए। शान्तिनिकेतन के बडे दादा चल बसे। आपसे ही उनकी गुण-गरिमा सुनी थी। भले लोग थे। काल का चक्र बडी तेजी से चल रहा है। बडे-छोटे सबको पीस रहा है। जीवन क्षण-भगुर है। दुनिया के झगडो का अन्त नही। तूफानी अनन्त सागर में तिनके की तरह मनुष्य बह रहा है। किनारे का पता नही। "बहा जाता हूँ बेमकसूद बहर जिन्दगानी में।" पूज्य पिताजी, प० देवीप्रसादजी, अमृतलालजी आदि सहृदय महानुभावो से प्रणाम कहिये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५७

नायक नगला (बिजनौर)
६-२-२५

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

तीन महीने के बाद मैं कल ही मकान पर लौटा हूँ। जैसा कि आपने पत्रो में पढा होगा मैं कलकत्ते गया था। आपके पत्र मेरे पीछे यहाँ आये इसलिए तामील न हो सकी। कलकत्ते से लौटता हुआ प्रयाग ठहरा था। वहाँ सम्मेलन में 'सेफ' से निकलवाकर सत्यनारायणजी की जीवनी देखी। उसमे तो अभी 'कच्चा मसाला' सगृहीत है, प्रेस में देने लायक नहीं। उसे ठीक कब कीजिएगा? जल्दी दुरुस्त करके प्रेस में दिलवाइए। यह काम कब कीजिएगा? आप उसे मुकम्मल कर दें तो मैं उस पर भूमिका लिखूं या फिर छपने पर। जीवनी 'सेफ' ही में बन्द पडी न रह

जाय । शीघ्र प्रकाशित होनी चाहिए । उसका सम्पादन आप स्वय करे । मै भी सहायक हो सकता हूँ । सम्पादन का काम सम्मेलन पर न छोडिए ।

स्व० प० रुद्रदत्तजी की जीवनी के सम्बन्ध मे आप यह सुनकर प्रसन्न होगे कि उनका चित्र मिल गया है और 'भारत मित्र' तथा 'हिन्दी वगवासी' की पुरानी फाइलो से लेख सग्रह करने का काम श्रीयुत प० नन्दकुमार देव शर्मा जी के सुपुर्द कर आया हूँ । उनकी दो-एक पुस्तको का और पता चला है, तलाश मे हूँ । सम्मेलन मे रखने के लिए प० रुद्रदत्तजी का एक तैलचित्र भी तैयार कराया जायगा और जीवनी के लिए चित्र का ब्लाक बन जायगा । प० नन्दकुमार देवजी से इस काम मे अच्छी सहायता मिलेगी । साहित्य-सेवियो की जीवनी के सम्बन्ध मे उनसे अच्छी सहायता मिल सकती है । इस काम के वह छोटे विश्वकोष है । आजकल आप और क्या लिख रहे है ? आपकी निर्दिष्ट जीवनियो की सूची मे से प० बालकृष्णजी भट्ट की जीवनी तो टडनजी लिखना चाहते है । कहते थे सत्यनारायणजी की जीवनी को शीघ्र प्रकाशित कराइए । उसे इलतवा मे न डालिए । जीवन का भरोसा नही, कौन जाने कल क्या हो । हमारे जीवन मे प्रकाशित हो जाय तो, अच्छा है । प्रवासी भारतवासियो का झगडा तो कभी खत्म होने वाला नही । उसे छोडकर साहित्य-सेवियो को जीवन-दान दे डालिए और कही इधर पास आकर डेरा डालिए । साबरमती का मोह छोडिए । यही आपसे बार-बार प्रार्थना है । मेरी नही सब लोगो की यही राय है । आशा है, आप सानन्द है । कुशल समाचार लिखिये ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५८

c/o आर्यमित्र, आगरा
ता० २९-७-१९२५

श्री चतुर्वेदीजी, प्रणाम ।

उस दिन आप बिना मिले चले गये । बहुत-सी बाते रह गई । अगले दिन प० नन्दकुमारदेव शर्मा मथुरा से यहाँ आये थे । आज उनका पत्र आया है, वह भी हरदुआगज कविजी के दर्शनार्थ चलना चाहते है और आपसे मिलना भी । वह अभी पाँच-सात दिन शायद और रहे, फिर कलकत्ते चले जायँगे । आपका और उनका सामना हो जाता तो सम्पादकाचार्यजी की जीवनी की कई बाते ठीक हो जाती । फिर न मालूम कब उनसे मिलना हो । परसो शायद मै मथुरा जाऊँ । आप तो वहाँ न चलेंगे ? शकरजी के पास चलने का विचार कब है ? प० नन्दकुमारदेव शर्माजी

चाहते हैं कि सब साथ चलें तो अच्छा हो। उन्हें क्या लिख दूँ। कल यहाँ तुलसीदासजी की जयन्ती (वर्षी) मनाई गई। श्री नमगादाजी के व्याख्यान हुए। आज भी उनका व्याख्यान होगा। आप बहुत याद आये। प्रिय पटेजी को नमस्कार। प० हरिशंकरजी प्रणाम कहते हैं। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५६

काव्यकुटीर, नायक नगला, चांदपुर
वैशाख कृष्णा २, १९८३

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

२५-४ का कार्ड, कृपा-पत्र और चांद का अंक सत्यनारायणजी का फोटो, सब कुछ पहुँचा। अनेक धन्यवाद। सत्यनारायणजी का फोटो देखकर जी भर आया। मनुष्य-जीवन की क्षणभंगुरता, संसार की असारता का चित्र आँखों के सामने फिर गया। आज 'हिन्दू संसार' में सप्रेजी के स्वर्गवास का समाचार पढ़कर बड़ी वेदना हुई। मरने से पहले उनकी बीमारी का समाचार भी किसी हिन्दी पत्र में न छपा। नेहरूजी को जुकाम भी हो जाता है तो अखबारों के कालम रंगे जाते हैं, इस अकृतज्ञ, अविशेषज्ञ देश को स्वराज्य मिलेगा!

लीडरी पेशा राजनीतिक जन्तुओं के सम्बन्ध में जिस परिणाम पर आप पहुँचे हैं, मैं उससे भी कुछ आगे गया हूँ। लीडर-लीला लिखने का बहुत दिनों से विचार कर रहा हूँ। लिखी गई तो पढ़ने लायक चीज होगी।

आपके विचार एक 'भारतीय हृदय' के सर्वथा अनुरूप ही हैं। अकबर ने कहा है—

"शिकम होता तो मैं इस अहद में फूला-फला होता,
सरापा दिल बना हूँ इस सबब से कुश्तए गम हूँ।"

दिल बनने की सजा पाइए, प्रोग्राम बनाते रहिए। और उनके पूरा न होने पर अफ़सोस करते रहिए। फिर भी आपका साहस स्पृहणीय है। इस प्रतिकूल स्थिति में भी आपने बहुत कुछ कर डाला। साहित्य-सेवा भी कुछ कम नहीं की, पर ढोल नहीं पीटा। इतनी कमी रही। यह विज्ञापन-युग है, विज्ञान-युग नहीं। आगे चलकर भी यदि ऐसे ही, वर्तमान समय के जैसे ही, हृदयहीन मनुष्य उत्पन्न होते गये, कृतघ्नता और अविवेक ऐसे ही ज़ोरों पर बना रहा, तब तो मजबूरी है, वर्ना आपका काम बड़ी कद्र की निगाहों से देखा जायगा। सत्यनारायणजी की कीर्तिरक्षा और प्रवासी

भारतवासियो की रामकहानी थोडे महत्त्व की चीज़ नही है। मुझे तो सचमुच आश्चर्य होता है कि ऐसी परिस्थिति मे ऐसा ठोस और टिकाऊ काम आपने कैसे कर डाला! मुझे तो अब अपने सम्बन्ध मे यही सूझता है कि कुछ न हो सकेगा। बीमारी और तीमारदारी, यही दो काम हैं।

"किताबे मुहब्बत में ऐ हज़रते दिल,
बताओ कि तुम लेते कितना सबक हो।
कि जब आनकर तुमको देखा तो वेही,
लिये दस्ते-अफसोस के दो वर्क थे।"

इस बार जाडो में सतसई पूरी करने का पक्का विचार था। पर बीमारी ने कुछ न करने दिया। अब कनखल जाकर बैठने का सकल्प था। डेढ महीने बीमारी और तीमारदारी में निकल गया। अभी तक छुट्टी नही मिली। कभी-कभी अपनी इस दशा पर, बेबसी पर, बडा दु ख होता है। पर मीर का यह मिसरा तसल्ली देता है—

"रख तसल्ली कि यूं मुकद्दर था"

चगा हो जाऊँ तो कनखल पहुँचूं, इस चिन्ता मे हूँ। पहुँच गया तो सूचना दूंगा। आप भी आइए। जीवन मे दो-चार बार तो और मिल-भेंट लें। हाँ, सत्यनारायणजी की जीवनी का क्या हो रहा है? कोई फार्म छपा या नही? प्रूफ कौन देखता है? उसकी कुछ खैर-खबर है? आधी-तिहाई छप जाती तो उसकी भूमिका लिखता। जब तक मुझे यह निश्चय न होगा कि पुस्तक वास्तव मे छप रही है, भूमिका न लिखी जा सकेगी। स्वभाव ही कुछ ऐसा है, पेशगी नही लिखा जाता—

"कर गुज़रे ऐन वक्त पर जो कुछ भी हो सका,
पहले से कोई बात दिल में ठानते नहीं।"

बूढो की इज्जत के बारे में जो आपने श्री गोखले की उक्ति उद्धृत की है उस पर एक फारसी का सुन्दर शेर याद आया—

"शहरे कि दरो इज्जते पीरां न शवद,
आं शहर मुहालस्त कि वीरां न शब्द।"

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६०

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
आश्विन, अमावस्या १९८३

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, पालागन।

पहला कार्ड यथासमय मिल गया था, और आज लिफाफा भी पहुँच गया।

आप सचमुच हिन्दी लेखकों के 'मसीहा' हैं मुर्दों को जिन्दा कर रहे हैं, पर यह तो सारी जाति ही मुर्दा है, किसे-किसे जिन्दा कीजियेगा यहाँ तो जीते भी मुर्दा हैं। "क्या देखता है हाथ मेरा छोड़ दे तबीब, याँ जान ही बदन में नहीं नब्ज क्या चले ?" बिहारी के शब्दों में हिन्दी समाज अपने उद्धारकों से कह रहा है—"हठ न करौ अति कठिन है, मो तारिबो गोपाल" आप भी अपनी आदत से लाचार हैं, कुछ न कुछ किये ही जाते हैं। पर समस्या टेढ़ी है। बकौल बिहारी—"मोहि तुम्हें बाढ़ी बहस को जीतैं जदुराज। अपने-अपने बिरद की दुहूँ निबाहत लाज।"

क्या सचमुच शताब्दी मनाई जायगी ? राजा साहब का भाग्य इतने दिनों के बाद जागकर रहेगा। मैं तो कहता हूँ भाग्यशाली हैं वह हिन्दी लेखक जो आपके सामने मर जायँगे, मरने वालों को जल्दी करनी चाहिए। एक 'मसीहा' है और मरने वाले बहुत हैं। अकेला मसीहा हार जायगा। कह नहीं सकता जन्म शताब्दी पर मैं आ सकूँगा कि नहीं। कई ऐसे ही झंझट हैं। कोशिश, चेष्टा और प्रयत्न तो करूँगा, आगे जो हो। सम्मेलन वाले महारथियों में से भी कोई आवेगा कि नहीं ? भरतपुर में क्या हो रहा है यानी सम्मेलन के सम्बन्ध में ? माधुरी चाहती है कि द्विवेदीजी के 'चरण-रज' से सभापति का आसन पवित्र करा लिया जाय। क्या द्विवेदीजी चरण-रज देने की उदारता दिखा सकेंगे ? आजकल घुटनों तक जुराबें और फुल बूट पहनने वालों की चरण-रज होती भी तो नहीं। द्विवेदीजी को नंगे पाँव चलाना पड़ेगा, तब चरण-रज प्राप्त हो सकेगी। वृद्धावस्था में इतना कष्ट उन्हें क्यों दिया जाय ? फोटो से काम न चल जायगा ?

जीवनी के फार्म और होंगे ? जीवनी जल्दी निकलती मालूम नहीं होती। भूमिका तो मैं जब कहिये लिख दूँगा। आपकी कृपा से एक और काम मेरे सुपुर्द हो गया है—पूर्णजी के भतीजे ने उनका एक नाटक भेज दिया है कि इसकी एक विस्तृत भूमिका और समालोचना लिख दो। निशादिही में आपका नाम था। आशा है, आप सानन्द हैं। बातें तो बहुत हैं कभी मिलने पर ही होंगी।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६१

ज्वालापुर-महाविद्यालय,
चैत्र कृ० ११, ८३

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका कृपा-पत्र कल मिला। पुस्तक भी पहुँची। इस कृपा के लिए धन्यवाद। आपकी परिस्थिति को मैं कल्पना की दृष्टि से देख रहा हूँ। कोई

वात मुझसे छिपी नही है। समय थोडा है, काम वहुत है। साधनो का अभाव है, फिर उस पर आपका स्वभाव——

"गुलोगुलचीं का गिला वुलवुले-खुश लहजा न कर,
तू गिरफ़्तार हुई अपनी सदा के वाइस।"

सम्मेलन का सभापतित्व ओझाजी ने स्वीकार कर लिया। यह वात कल ही समाचारपत्रो से मालूम हुई। ओझाजी के सभापतित्व में सम्मेलन सफलता से समाप्त होगा। ओझाजी का सभापतित्व सम्मेलन के इतिहास मे महत्त्वपूर्ण घटना होगी। इसके लिए सम्मेलन विशेष रूप से वधाई का पात्र है। इस सम्मेलन में व्रजभाषा के प्राचीन साहित्य के सम्वन्ध मे कुछ होना चाहिए। कम से कम सूरसागर के उद्धार का प्रयत्न तो अवश्य होना चाहिए। इसके लिए यही उपयुक्त अवसर है। 'मनोरमा' के सम्मेलनाक मे इस विषय पर मेरा लेख आपने पढा ही होगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६२

चांदपुर, (विजनौर)
१५-८-२७

'ज़रा कान धरकर इधर ध्यान दीजिए।'
प्रणाम, चतुर्वेदीजी महाराज।

मैने प० हरिशकरजी को कई पत्र लिखे। बार-वार प्रार्थना की कि सेठजी के प्रस्तावानुसार एक अच्छा-सा ड्राफ्ट आप तैयार करके शीघ्र भेज दे, पर आपके कान पर जूं न रेंगी। प० हरिशकरजी का यह अपराध क्षन्तव्य हो सकता है, क्योकि ऐसे मामलो में वे पूरे 'स्लोथ' अर्थात् ढीले-पोले है। पर आप से तो मुझे ऐसी स्वप्न में भी आशा न थी। आप जैसा कर्मवीर-प्रोपैगैण्डिस्ट और सहृदय सज्जन मेरी प्रार्थना को सुनी-अनसुनी कर जाय! 'किमाश्चर्यमत परम्'। मै २३-७ को ज्वालापुर से चलकर (असौडा) हापुड आया था। वहाँ से व्रज-यात्रा को चला गया। अभी परसो वहाँ से लौटा हूँ। इस बीच में वरावर सफर में रहा। असौडे से और मथुरा से प० हरिशकरजी को मैने दो पत्र लिखे, उत्तर माँगा पर उनका मौन भग न हुआ। मेरी इच्छा थी कि मै आपसे आगरे आकर एक दिन मिलूँ, आपको और हरिशकरजी को भी मैने मथुरा वुलाने की धृष्टता की थी। वहुत-सी ज़रूरी बातें करनी थीं। पर आना तो एक ओर मेरे पत्रो का उत्तर भी न मिला। इस यात्रा में स्वतन्त्र न था, एक मोटरारूढ पार्टी के साथ नत्थी था, वर्ना आप लोगो की दिल दुखाने वाली

इस उपेक्षा की उपेक्षा करके भी आगरे पहुँचना और आपका नाचीज मेहमान बनना। आप लोगों के इस दुर्व्यवहार से मुझे बड़ा ही आश्चर्य और खेद हुआ है। कार्य की गुरुता और पुरानी ममता मुझे पत्र लिखने को विवश कर रही है, नहीं तो कभी आपको पत्र न लिखता। मैं जानता हूँ मेरे इस स्पष्ट निवेदन से आपको कष्ट पहुँचेगा। पर मै मजबूर हूँ—

"रखियो गालिब (चौबे !) मुझे इस तल्खनवाई में मुआफ,
आज कुछ दर्द मेरे दिल में सिवा होता है।"

यदि आप इस प्रस्ताव को अव्यवहार्य या व्यर्थ समझते हों तो ड्राफ्ट के विचार पर ड्रापसीन डालकर 'छिनी ईंट को गालियाँ' सुना दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६२

नायक नगला, चाँदपुर (बिजनौर)
२५-८-२७

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

मेरे पत्र के उत्तर में आपका १८-८ का प्राइवेट पत्र पहुँचा। पढ़कर अत्यन्त खेद हुआ, मुझे हर्ष हुआ था कि आगरे में रहने का आपका संकल्प सफल हुआ। पर वही होता दीखता है जो 'जौक' ने कहा है—

"अहले-जौहर को वतन में रहने देता गर फलक,
लाल क्यों इस रंग से आता बदख्शाँ छोड़कर।"

मथुरा की इस यात्रा में प० नवनीतजी चतुर्वेदी से भेंट हुई। वे बड़े अच्छे कवि हैं। वृद्ध पुरुष हैं। उनसे अनेक माथुर कवियों का समाचार मिला। अनेक अप्रकाशित ग्रन्थों का पता चला। आप उस समय साथ होते तो कई निबन्धों का मसाला मिल जाता। मुझे अवकाश कम था, फिर भी कुछ नोट्स लाया हूँ। आप मथुरा जायें तो मारुगली में नवनीतजी से अवश्य मिलिए और कई गुमनाम कवियों को प्रकाश में लाइए। नवनीतजी के दो शिष्य भी बड़े योग्य हैं, लाला कृष्णलालजी शतरंज मास्टर (शतरंज के अद्वितीय खिलाडी हैं) अच्छे कवि हैं। पुरानी कविता उन्हें बहुत याद है। दूसरे पुरुषोत्तमजी हैं। उनके पास ग्वाल कवि के कई अप्रकाशित ग्रन्थ हैं। नवनीतजी से कई चतुर्वेदी कवियों का समाचार आपको मालूम होगा। कभी उनसे मिलिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६४

नायक नगला (बिजनौर)
२६-८-२७

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

२०-८ की दूसरी चिट्ठी कल शाम मिली। कल ही मैंने आपको पहले पत्रो का उत्तर भेजा है। आपकी यह दूसरी पत्री पढकर और भी दूना दुःख हुआ। वह मुझे बहुत ही व्यथित कर रही है। पर क्या करूँ "दयालारसमर्थस्य दुःखायैव दयालुता" मन मसोसकर रह जाता हूँ। ससार की अकृतज्ञता और अविशेषज्ञता तथा दुर्दैव के दौरात्म्य को कोसकर ही रह जाना पडता है। "लाचारी परवत से भारी" किसी ने सच कहा है। 'सैदा' को यह जादू-भरा शेर शायद आप ही के लिए इलहाम हुआ था—

"निगह कीमत कहीं दिल की तू इस पर भी गरां समझे,
जो नकदे-जां से बिकता हो कहीं तो मुझको दिलवाला।"

मुझे यह शेर इतना पसन्द आ रहा है, इतना चमत्कृत और हृदयहारी प्रतीत हो रहा है, कि माला लेकर जप करने को जी चाहता है, "जो नकदे-जा से बिकता हो कहीं तो मुझको दिलवाला !" आप भी इसे याद कर लीजिए। आपके हस्बहाल है। इसीलिए मुझे पसन्द है।

आप जब हरदुआगज चल सके, मुझे भी बुला ले। दस-बीस दिन वहाँ रहकर कविजी (शकरजी) की जीवनी और कविता-सग्रह का मसाला जमा कर लावें और काम शुरू कर दिया जाय। यह काम जैसे हो जल्दी ही हो जाना चाहिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६५

गुरुकुल, कागड़ी
२१-१-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका १६-१ का कृपा-पत्र मिला। 'त्याग-भूमि' के लिए बिडलाजी इतना त्याग कर रहे हैं, यह उनकी 'सात्विक' रुचि का परिचायक है। वैसे तो 'त्याग-भूमि' एकागी पत्र है, उसमे कुछ विशेषता नही। 'विशाल भारत' उससे कही अच्छा निकल रहा है, फिर भी घाटा है। सहायक सम्पादक के बिना काम कैसे चलेगा ? यह तो सरासर अन्याय है। रामानन्द बाबू तो स्वय अनुभवी सम्पादक हैं। वह इतनी-सी बात क्यो नही समझते ? अकेला आदमी, फिर चाहे वह कितना ही

परिश्रमी हो, पत्र का सम्पादन कैसे कर सकता है ? आपने तो अपने सिर पर और बहुत-से फालतू काम भी ले रखे हैं। कलकत्ते का जलवायु और इतना परिश्रम, स्वास्थ्य का सहार हो जायगा। यह स्थिति वाञ्छनीय नही। आपके घासलेट-आन्दोलन का परिणाम तो उलटा हो रहा है। बडे बडे महात्मा घासलेटी का समर्थन कर रहे हैं ! जैसा कि उगजी ने 'चैलेन्ज' किया है, क्या सचमुच महात्माजी के वैसे ही विचार हैं ? फिर आप क्यो व्यर्थ मे वैर विसाह रहे हैं। यह तो घासलेटी साहित्य का अच्छा-खासा नोटिस हो रहा है ! लोकरुचि ही जब वैसी हो रही है, तो इसका उपाय क्या ? आप किस-किस से लडेगे ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६६

गुरुकुल, कागड़ी (बिजनौर)
२८-१-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्ते।

मेरे पूर्व पत्रो का आपने उत्तर नही दिया। एक बात पूछनी है। क्या आपने मेरे प्राइवेट पत्र··· ·· ··जी को दिखलाये थे ? इस रहस्योद्घाटन के सम्बन्ध मे प० · · का जो पत्र मुझे आज मिला है, वह भेजता हूँ। उसे पढिए। मुझे आप से ऐसी आशा न थी। इस बारे में मैंने आपको पत्र लिखकर 'सतर्क' भी कर दिया था। फिर भी आपने ऐसा किया। बार-बार सोचने पर भी मेरी समझ मे नही आता कि आपकी इस नीति का आधार क्या है ? मै आपको नितान्त विश्वसनीय आत्मीय समझता था, फिर यह तो सम्पादकीय नीति के भी विरुद्ध है। किसी भी लेख का रहस्य-भेद उसकी इच्छा के विरुद्ध इस प्रकार नही करना चाहिए। आपके इस अनीतिमूलक आचरण से अत्यन्त दु:ख हुआ है। मै इसका कारण जानना चाहता हूँ कि आखिर आपने ऐसा किस लिए किया, जब कि मैंने मना भी कर दिया था। आपके इस व्यवहार ने मेरी आँखें खोल दी है। 'हाली' ने सच ही कहा है—

"जहां में अपने सिवा किसी पै कभी भरोसा न कीजिएगा,
जो अपना साया भी हो तो उसको तसव्वर अपना न कीजिएगा।"

अस्तु, आपने जो किया अच्छा ही किया। इससे भी मुझे एक अमूल्य शिक्षा मिली, एक भ्रम टूट गया, आगे को आँखें हो गईं !

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६७

गुरुकुल, कागडी(बिजनौर)
२-५-२८

पालागन चौबेजी।

२६-४ का कृपा कार्ड अभी मिला, लौटती डाक से आपके आर्डर की तामील कर रहा हूँ। जब आपका कार्ड आया उस समय मैं 'जुगनू' की नकल कर रहा था। पहले पत्र में आपको धमकाने के लिए मैंने यो ही लिख तो दिया था कि मैं अब कुछ न भेजूंगा, पर मुझे ख्याल था कि तकाजा आया ही चाहता है कुछ लिख रखूं। इकबाल की यह कविता मुझे तो बहुत पसन्द है। औरो को भी इसकी तारीफ करते सुना है, आपको पसन्द आती है कि नही, यह देखना है। यहाँ मेरे पास कोई भी पुस्तक नही है। हाली का 'हुब्बे वतन मुसद्दस', यहाँ कहाँ मिले जो उसे भेजूं, नजीर पर जरूर कुछ लिखूंगा। गगावतरण की समालोचना लिखने के लिए पढ रहा हूँ।

नया विशाल भारत', पढा, बहुत अच्छा है, अवध उपाध्यायजी का लेख मुझे उनके अब तक के लेखो में बहुत पसन्द आया, अपने पविकार की सीमा के अन्दर उन्होंने यह एक लेख लिखा है। इसी विषय पर उनसे और लेख भी लिखाइये, अर्थात् गणित के इतिहास पर प्रसिद्ध गणितज्ञो की जीवनी। भारतीय गणित की महत्ता पर उनसे एक लेख लिखवाइये।

साहित्य-सम्मेलन पर आपने बहुत अधिक लिख डाला है। इसमें ज्यादती की बू आती है। क्या आपकी धारणा है कि दूसरी ओर से जो आन्दोलन की आँधी उठ रही है वह ईर्ष्या-द्वेष के दुर्भाव से रहित है? मैं किसी पक्ष का भी पक्ष नही लेता पर मुझे यह आन्दोलन विशुद्ध भावना, खालिस सम्मेलन की हित-कामना से उठाया हुआ प्रतीत नही होता, इसमे भी कुछ अधिकारलोलुप लोगो का हाथ दीखता है, जो कुछ हो, मुझे तो यह इस तरह की तू तू, मैं मैं बहुत बुरी मालूम देती है। जो मैं कभी-कभी कोई ऐसी बात पत्रो में आपको लिख देता हूँ वह सिर्फ आप ही को सुनाने के लिए होती है। आप लोगो के प्राइवेट पत्र भी प्रकाशित करने लगे है, कहीं मुझे भी किसी झगडे मे न फँसा देना।

आपने भला मेरा यह फोटो क्यो छाप दिया? इसकी क्या जरूरत थी! इस फोटो को तो मुझे इस समय के देखने वाले, कृत्रिम समझेंगे। यह जीवित अवस्था का चित्र है। खैर बहुत-सी फिजूल बाते लिख गया, आपको तो इन्हे पढने की भी फुर्सत न होगी। दोहे का (हाथ छुडाये ··) पाठ इस वक्त याद नही आता, याद आ गया तो पीछे लिख भेजूंगा, इसमें कुछ पाठ-भेद है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६८

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
ता० २६-४-१९२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

२६-४ का कृपा-पत्र और 'गगावतरण' वल मिल गया। नजीर की कविता का सग्रह भी रामप्रसादजी ने चार-पांच दिन हुए भेजा है। दोनों की समालोचना भेजूंगा। कई दिन से शरीर अस्वस्थ है, ज्वर है, इसलिए कुछ विलम्ब सम्भव है। गुरुकुल, कागडी पर भी एक छोटा-सा नोट भेजने का विचार है, कुछ चित्र भी होगे।

मालूम होता है अब आप पूरे सम्पादक बन गये हैं, तभी तो हमारी पसन्द की हुई कविता को नापसन्द करके छापने से इनकार कर दिया! यह सम्पादकीय मद प्राय आ ही जाता है। वह कविता जो आपको पसन्द नही आई, रत्नाकरजो को इतनी पसन्द आई थी कि 'काले पानी पर' न्योछावर हुए जाते थे, और भी कई भावुक कवितामर्मज्ञो ने उसे बहुत सराहा था। वह हम लोगो को इतनी पसन्द आई थी, तभी तो छपने के लिए भेजी थी। इसमें उसके लेखक कवि का आग्रह क्या इशारा भी नही था। मैंने ही बहुत आग्रह करके उनकी कुछ कविताएँ मँगाई थी, और स्वय ही बिना उनकी प्रेरणा के भेजी थी, जो आपको पसन्द न आई। अरे भई, यह कोई 'प्रवासी भारतवासी' का तो विषय न था फिर आपके पसन्द-नापसन्द का प्रश्न क्यो आड़े आ गया? सम्पादकीय अधिकार का अर्थ लोकमत का ठुकराना तो नही है। जब 'हम' कविता-मर्मज्ञो का लोकमत उस कविता के अनुकूल है तो फिर आपको अपना मत 'इसलिए उसे न छापूंगा' कहकर प्रकाशित न करना चाहिए था। आप भले ही उसे न छापे, इसके लिए हमे आग्रह नही, पर यह जरूर कहेगे वह कविता अच्छी है, कविता-मर्मज्ञो ने उसे बहुत पसन्द किया है। मै कुछ और उत्कृष्ट उर्दू कविताएँ प्रकाशनार्थ भेजना चाहता था, पर अब सकोच होता है। शायद आपको पसन्द न आवे मेरा परिश्रम व्यर्थ जाय। व्यर्थ कागज़ काले करने की मुझे आदत नही, अवकाश भी नही, जरूरत भी नही।

आप मेरी चिट्ठी की किन बातो का उत्तर शीघ्र देंगे? मुझे तो अब वह बातें याद भी नहीं रही कि आपको कब क्या लिखा था, जब कभी कोई बात पत्र लिखते समय सूझ जाती है, लिख देता हूँ। आप किसी बात का समय पर उत्तर देंगे, इसकी तो आशा ही नहीं करता। इसमें आपका अपराध नही कार्याधिक्य के दौरात्म्य का दोष है।

आशा है, आप प्रसन्न है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६९

गुरुकुल, कांगडी (बिजनौर)
५-५-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका १-५-२८ का कृपा-पत्र, आश्चर्य है, आज मिला। कविता का परीक्षक प० मदनलालजी को ही रखिए। वही ठीक है, कवि है, मार्मिक है। आपके पास है। कोई बहुत ही विवादास्पद कविता हो, उसे बाहर भी भेज सकते हैं। आपके पिछले पत्र के उत्तर मे मैंने डाक्टर इकबाल की एक कविता टिप्पनी सहित भेजी है, पहुँची होगी। गगावतरण पढ रहा हूँ। उसकी समालोचना भेजूंगा। गरमी यहाँ ज्यादा पडने लगी है। कई दिन ज्वर आता रहा, इसलिए कमजोरी भी है। कुछ लिखा-पढा नही जाता वर्ना मै इसी संख्या के लिए समालोचना लिख भेजता। फिर भी यथासम्भव शीघ्र भेजूंगा।

कल से मै एक और 'आगामिनी आपत्ति' से चिन्तित नही, सत्रस्त हूँ। मुजफ्फर सम्मेलन का सभापति मुझे चुना है। यार लोगो के दबाव में पडकर मैंने आत्मसमर्पण कर दिया है। देखिये कैसी बीतती है। इस अग्नि-परीक्षा मे पडने के लिए मै तैयार न था, पर यहाँ जिसने सुना, यही आग्रह और अनुरोध किया कि स्वीकार कर लो। प्रो० रामदेवजी ने गुरुकुल की ओर से पत्रो में इस सूचना का तार भी मुझ से बिना पूछे ही भेज दिया। इस प्रकार ठोक-पीटकर वैद्यराज बनने के लिए मुझे विवश कर ही दिया, स्वीकृति दिलवा ही दी। योग्यता, स्वास्थ्य और परिस्थिति, किसी दृष्टि से भी यह उचित प्रतीत नही होता। पर मेरा इसमें जरा भी दोष नहीं, मै सर्वथा इसमें निरपराध हूँ। मैंने इसके लिए जरा भी चेष्टा नही की। मैंने इस पद के योग्य कभी अपने को नही समझा। फिर इस वर्तमान आन्दोलन को देखते हुए तो और भी डर लगता है। आपकी क्या राय है?

हाँ, उस दिन जो दोहा आपने सूरदास के चित्र के बीच देने को पसन्द करके लिखा था, उसका पाठ वियोगी हरिजी के सक्षिप्त सूर-सागर मे इस प्रकार मिला है—

"अब तो बल करि तोरिकर चले निबलकर मोहि,
प मनते छूटो न जब तब देखौ प्रभु तोहि॥" (पृष्ठ २९८)

इससे पहले इसी प्रसग का एक दोहा और वही लिखा है—

"कहा भयो करते छुटे, कर्णधार भवसिन्धु।
मनते छुटेन कठिन जन भक्त कुमुद उरइन्दु॥"

पर आपने जिस रूप में लिखा था, वही पाठ अच्छा मालूम देता है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७०

ज्वालापुर-महाविद्यालय,
१८-८-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

पहले पत्र पहुँचे होगे, आज मुश्किल मे लेख समाप्त कर पाया हूँ, एक विमुक्त मित्र की स्मृति ने अधीर कर दिया। लेख लिखते समय किसी दिन घण्टो आत्मविस्मृति की-सी दशा मे बैठा रहा हूँ, दिल उमड-उमड आया है। लेखनी रुक-रुक गई है। लेख वहुत वढ गया, फिर भी वहुत-सी बाते छोडनी पडी।

"हाले दिल खूब कहा है यह जवां का दावा,
दिल से जो पूछिए कहता है कि कुछ भी न कहा।"

कल समाचारपत्र मे कविवर पाठकजी की मृत्यु का समाचार पढकर बडा दुःख हुआ। हिन्दी का एक महारथी महाकवि उठ गया। अफसोस! पाठकजी का चित्र और चरित्र आप देगे ही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७१

ज्वालापुर महाविद्यालय,
२२-८-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

२६-९ का कृपा-पत्र आज अभी मिला। सस्मरण आपको पसन्द आ गये, यह जानकर सन्तोप हुआ। पर यह देखकर चिन्ता हुई कि आपने इसमें कुछ थोडा-सा परिवर्तन कर दिया है। मुझे डर है कि कही रग पर नश्तर न मार दिया हो। मैंने जो कुछ लिखा था, उसमें कही एक मात्रा भी हटाने लायक न थी। मैंने नही लिखा था—दिल मे बैठकर किसी ने लिखाया था। जिस अश पर आपको शिकायत है, उस पर मैंने दो महीने विचार किया था। मुझे तो ताम्मुल था, पर दिल से बराबर यही आवाज आती थी कि लिखो और यही लिखो, इससे भी जोरदार इबारत में लिखो। यदि वह अश आपकी नीति के विरुद्ध था तो मुझसे पूछ लेते। न छपता, इसकी जल्दी न थी। पर अपने किसी लेख में ऐसा परिवर्तन मुझे सह्य न था। आपने मेरे साथ यह अन्याय किया है। मैंने स्पष्ट निवेदन किया था कि 'अविकल्प रूप' में छपे। 'कोई बात, कोई वाक्य, छूट न जाय' आपने मेरी इस प्रार्थना की अवहेलना की। आपको सब बाते मालूम होती, आपके हृदय मे भी वही प्रेरणा हो रही होती जो मेरे दिल में थी तो मै समझता

हूँ, आप ऐसी हरकत कभी न करते। मालूम नही आपने कहाँ काट-छाँट की है और क्या-क्या की है। आप मुझसे पूछ तो लेते। यदि मेरा यह पत्र वक्त पर पहुँच जाय और परिवर्तनीय अंश अभी न छपा हो तो उसे उसी रूप में रहने दीजिए, जैसा था। वह कलम की आवाज़ न थी, दिल की सदा थी। "कोई और बोलता है मेरी ज़ुबां नही है।" भारतीय हृदय दिल की आवाज को न समझे, आश्चर्य है अफसोस है, खैर।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७२

ज्वालापुर महाविद्यालय,
६-१०-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

३-१० का कृपा-पत्र कल मिला, आज पार्सल भी मिल गया। इस कृपा के लिए अनेक धन्यवाद। आपने जो काट-छाँट के बारे में अपने सिद्धान्तानुसार लिखा है, वह ठीक है और मैंने जो लिखा था वह मेरे सिद्धान्तानुसार ठीक था। दोनो पक्ष अपनी-अपनी जगह ठीक है। मै महात्मा गांधीजी का अनुयायी नही हूँ—यानी अहिंसावादी। मै लोकमान्य तिलक का भक्त हूँ। मुझे जो बात ठीक मालूम देती है और विशेषतया ऐसे प्रसंग पर उसे जोरदार शब्दो में प्रकट किए बिना नही रहा जाता। भाषा के संयम का मै बराबर ध्यान रखता हूँ, पर विषय के अनुकूल भाषा का प्रयोग उचित समझता हूँ। अमुक ने ऐसा काम इस नीयत से किया है, ऐसा कहना बेशक सब जगह ठीक नही है। किसी की नीयत पर हमला करना ठीक नही, यह मै मानता हूँ। पर जब नीयत साफ मालूम हो रही हो—तर्क-प्रमाण भी अनुकूल हो, तो नीयत पर भी आक्रमण करना ही पडता है। नीयत या भाव ही तो अपराध के लघुत्व या गुरुत्व में कारण है। जिस आदमी की नीयत साफ मालूम हो रही हो उस पर परदा डालना, बात छिपाकर कहना मसलहत भले ही हो, इन्साफ नही है। नीयत का अपराध है तो उसे दण्ड मिलना ही चाहिए। इस प्रसंग में जो कुछ किया गया है, वह बदनीयती और विद्वेष भाव से किया गया है। इसके पुष्ट प्रमाण है। इसीलिए वैसा लिखा था। खैर, आपने और तो जो कुछ किया क्षन्तव्य है पर एक जगह रग पर नश्तर मार दिया। 'इख़लाकी मौत' वाला वाक्य निकालकर रसभंग कर दिया। सारा मज़ा किरकिरा हो गया। वाक्य असम्बद्ध-सा हो गया। ज़रा पढकर देखिए। 'लाचारी है कोई नौहागर नही मिलता।' इसके आगे का वाक्य न रहने से चमत्कार ही जाता रहा, "हैराँ हूँ दिल को रोऊँ कि पीटूँ जिगर को मैं" का भाव तभी स्पष्ट और

सुसगत होगा जब दिन और जिगर के स्थानीय दो कोई हो। यहाँ इत्तफाक से दोनो आ गये थे और ऐसे आये थे कि न आये होगे कही। मुझे इस सारे प्रसग में यह वाक्य पसन्द था, 'इखलाकी मौत' का प्रयोग बिल्कुल फिट और यथार्थ था। यह तो ऐसे मौके पर बोला ही जाता है। इसके प्रयोग का इससे अच्छा और मौका हो ही नही सकता। बात बिल्कुल सच्ची है। जो आदमी अपने मित्र की और विपन्न मित्र की इतनी भी सहायता न करे क्या उसका इखलाक जिन्दा है। इखलाक की मौत इसी का तो नाम है। आपने इस वाक्य को निकालकर सारी इबारत की जान निकाल दी। कम से कम इतना ही रहने देते, "दोनो का मातम अकेले मुझे ही करना पडेगा···" तब भी मतलब खब्त न होता। रफ कापी मेरे पास नही है। पूरा वाक्य याद नही आ रहा है, पर बेतरह खटक रहा है। 'मित्र घात' भी इतना कठोर शब्द नही है, इसका अर्थ मित्रता की हत्या ही नही है। महावरे मे मित्र के साथ विश्वासघात या बदसलूकी भी इसका प्रचलित अर्थ है। पर इसके परिवर्तन में अधिक खटकने वाली बात नही है। ऊपर का वाक्य तो बहुत ही खटक रहा है। सचमुच रग पर नश्तर लग गया।

मुझ से अपने लेख की प्रेस कापी नही होती। कापी करने बैठ जाता हूँ तो सारा लेख ही बदल जाता है और बहुत बढ जाता है। मैं पैंसिल से लिखता जाऊँ, दूसरा कापी करता जाय, तो काम जल्दी हो सकता है। खैर, कई जरूरी काम रह गये और छुट्टियाँ खत्म हो गई। पर 'विशाल भारत' के लिए दो-तीन लेख लिखे जा सके, इससे सन्तोष है। वि० भा० के लिए एक लेख ग्वाल कवि पर मेरे पास आया पड़ा है। उसे अभी देख नही सका। शीघ्र ही देखकर भेजूँगा। नवनीतजी से कहकर लिखवाया था। 'माधुरी' वाले उनसे माँग रहे थे। मैंने वि० भा० के लिए माँग लिया। एक लेख श्रीयुत बाबू राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह, बी० ए० वीरसिंहपुर भेजें। उन्हे मैंने इसके लिए लिखा था, आज उनका पत्र आया है। लेख तैयार हो गया है, भेजने वाले हैं।

भवदीय

पदमसिंह शर्मा

७३

गुरुकुल, कांगड़ी

४-११-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

मैं २८-१० को यहाँ पहुँच गया था। श्री बा० राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंहजी, बी० ए० का एक लेख 'डिरोजियो' पर मैंने आपके पास भेजा था। उन्होने और भी

दो-एक लेख वि० भा० के लिए लिखे हैं। वह बराबर कुछ-न-कुछ लिखते रहेंगे। बहुत अच्छा लिखते है, उनसे लेख माँगते रहिए। बड़े सहृदय सज्जन हैं। मेरे लेखो के छपने का प्रबन्ध बा० राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंहजी मुजफ्फरपुर से कर रहे हैं। लेखो के सम्पादन का भार श्रीयुत बा० पारसनाथसिंहजी ने अपने ऊपर लिया है, कुछ दिन बाद लेख-सग्रह की सामग्री उनके पास भेजने वाला हूँ। फिर लेखो के सम्पादन का सवाल भी था। इसके लिए मैने पारसनाथसिंहजी को ही उचित समझा। मै स्वय यह काम न कर सकता था। आशा है, उनके सम्पादन मे लेख-सग्रह ठीक तौर पर प्रकाशित हो जायगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७४

गुरुकुल, कांगड़ी
७-१२-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका तिथि-रहित पत्र आज मिला, पर उसमें मेरे उस रजिस्टर्ड पत्र का उत्तर नही है, यहाँ तक कि उसकी पहुँच भी नही है। यह मै जानता हूँ कि अत्यधिक कार्य-व्यग्रता ही इसका कारण है। फिर भी जरूरी बात का कुछ-न-कुछ जवाब तो मिलना ही चाहिए, निरर्थक पत्र लिखने का रोग तो मुझे भी नही है।

हिन्दी-साहित्य-सेवियो की कीर्ति-रक्षा पर दिसम्बर के अक में मै कुछ नही लिख सकूँगा, मुझसे लिखवाना चाहते है तो जनवरी में रहने दीजिए। इस समय मुझे एक लेख 'सरस्वती' के विशेषाक के लिए भेजना है, वर्षों से तकाजा है। इस बार वादा कर लिया है।

'विशाल भारत' में घासलेटी साहित्य पर आपका नोट गौडजी को बहुत पसन्द आया। फाँसी अक की समालोचना भी खूब है। श्रीधरजी पाठक की जीवनी तो, सुना है, उनके पुत्र लिख रहे हैं। क्या आप भी लिखेंगे या उन्हे अपना मसाला दे दिया? जरूरी बातो का उत्तर दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७५

गुरुकुल, कांगड़ी
२१-११-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपके दोनो कृपा-पत्र यथासमय पहुँचे। उत्तर मे कुछ विलम्ब हुआ। मै आपकी कठिनाइयो को जानता हूँ और आपकी हिम्मत की तारीफ करता हूँ। यह

आप ही का हौसला है जो इन दिक्कतों मे इतना काम कर लेते हैं। लीडर तो [illegible] है पर फण्ड की कमी है। लीडर के लिए तीन चीजे जरूरी हैं फण्ड, अखबार और प्लेट-फार्म। इन चीजो की बदौलत लीडर [illegible] [illegible] [illegible] अच्छे पड रहते है। लीडरी बड़े नफे का सौदा है। [illegible] की सियासत से [illegible] ढग आना चाहिए। आपको वह ढग नहीं आता, आयगा भी नहीं। आपके हिस्से मे तो नुकसानात सहना ही है, खैर, कोई लीडर ऐसा भी चाहिए।

पसन्द आने की वात है, आपको अकवर के सस्मरण न जाने क्यो इतने पसन्द हैं, उनमें कोई ऐसी खास वात तो नही है। आपका मुद्दत से तकाजा था उनसे छुटकारा पाने के लिए कुछ फुटकर वाते जल्दी मे लिख दी थी। अपनी पसन्द की चीज पसन्द आती ही है। "वसन्तिहि प्रेमिण गुणान वस्तुति" अस्तु।

फुरसत हो तो खासा पोथा—सस्मरण-पुराण वन सकता है। पर काम वडा मुश्किल है। सवके रोने को किसका जिगर लाऊँ!

"कहाँ से लाऊँगा खूने जिगर इनके खिलाने को,
हज़ारो तरह के गम दिल के महमा होते जाते है।"

सूखे हुए ज़ख्म हरे होते है। पुरानी चोटे ताजा होकर दुखती है। कभी-कभी सोये संस्कार जाग पडते है और दिल को वेचैन कर देते है। प० भीमसेनजी के दु खप्रद संस्मरणो ने हिम्मत की कमर तोड दी। इस कूचे मे धँसते जी डरता है। ईश्वर का वडा अनुग्रह है कि मनुष्य का स्वभाव विस्मरणशील वनाया है, पूर्व-जन्मो के सम्वन्ध याद नही रहते, वर्ना आदमी एक दिन भी जिन्दा न रह सकता। पागल हो जाया करता या मर जाया करता। एक ही जन्म के सम्वन्धो की धुँधली-सी याद वावला वना देती है। सहृदय की तो मौत है, परम ज्ञानी या हृदयहीन की वात दूसरी है। कम से कम मै तो अपने हृदय की निर्वलता से वहुत तग हूँ। कभी-कभी तो ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि इस आफत से वचा—

"इलाही! है सकत[1] नेमुल्वदल[2] के तुझको देने की,
मुझे इसके एवज़ तू कुछ न दे, पर फेरले दिल को!"

कल यहाँ लाला लाजपतरायजी की शोक-सभा थी। वहुत-से व्याख्यान हुए, सव अपनी-अपनी कह गये, वेरुके निर्विकार भाव से सुना गये। मुझसे भी कुछ कहने को कहा गया। गला रुँधने लगा, जी भर आया, हारकर वैठ गया। सस्मरणो की ओर ध्यान दिलाकर आपने मुझे एक जजाल में फँसा दिया।

मै जान-वूझकर इस ओर से अनजान वन रहा था। कभी-कभी विमुक्त

---

१ सकत=शक्ति। २. नेमुल्वदल=वदले की चीज।

मित्रो की स्मृतियाँ व्याकुल करती थी, तो भुलाने की चेष्टा करता था। मन मारकर रह जाता था। प० भीमसेनजी के सस्मरण की लोग दाद देते है, और मेरे दिल पर चोट लगती है। रोता हूँ और पछताता हूँ कि यह क्या कर बैठा। दिल का दर्द दिल मे ही क्यो न छिपा रहने दिया। यद्यपि मुझे मजबूरी मे वह लिखना पडा। दो महीने तक बहुत टाला, पर न रहा गया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७६

किसरौल (मुरादाबाद)
अगहन सुदि १२,१९८६

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

कल जब मै प्रिय पटेजी को एक कार्ड पोस्ट कर चुका, तो आपका कृपा पत्र प्राप्त हुआ। समाचार जाने, चिन्ता मिटी। आपकी लम्बी 'चुप' ने मुझे चिन्तित कर दिया था। अपने पत्रो का उत्तर न पाकर मै हैरान था कि क्या मामला है। मै जानता हूँ कि आप अत्यधिक कार्य-व्यस्त रहते है, एक मिनट भी आपका वक्त बेकार नही जाता, फिर भी पत्रोत्तर न पाकर 'स्नेह पापशकी' के अनुसार व्याकुल हो जाता हूँ। ऐसा न किया कीजिए। मेरा हरदुआगज के पते पर भेजा हुआ पत्र आपको न मिला यह जानकर दु ख हुआ। उसमें कई बातें लिखी थी। अस्तु, जीवनी की भूमिका (चार आँसू) भेजे हुए आज डेढ महीना हो गया। या तो इतनी जल्दी थी या यह ढील है, मेरे 'चार आँसू' और आपके 'चार शब्द' देखिये, कब तक छपकर निकलते है! आशा है, आप मथुरा-वृन्दावन हो आये होगे। प० नन्दकुमारदेव शर्मा के सम्बन्ध में कुछ लिखकर सम्मेलन-पत्रिका को भेज दीजिए, उनका तकाजा है। आपका काम प्रतिदिन बढता जा रहा है। बिहार के प० राधाकृष्णजी, एम० ए० भी चल बसे। बडे ही सरल सौम्य विद्वान् थे। मेरे भी बडे प्रेमी मित्र थे। जब से उनकी मृत्यु का समाचार पढा है, हृदय अधीर हो रहा है। हिन्दी का एक सुलेखक और सेवक कम हो गया। मिश्रबन्धु-विनोद के लिए शकरजी की सक्षिप्त जीवनी आप अवश्य लिखिये। प० रुद्रदत्तजी और प० नन्दकुमारजी के सम्बन्ध में भी मि० ब० वि० के लिए कुछ जरूर लिख दीजिए। मै शीघ्र ही प्रयाग जाने की तैयारी में हूं। वृन्दावन पहुँचना कठिन दीखता है। हो सका तो वृन्दावन होता हुआ ही प्रयाग जाऊँगा, आपको सूचना दूँगा। आज अभी 'कवि' (गोरखपुर) मे बिहारीलाल पर कवि श्री मदनलाल चतुर्वेदी का लेख पढा, उन्होने श्रीअमरकृष्णजी के आपके द्वारा अनुमोदित

मत का खण्डन किया है। आपके 'चार शब्द' बहुत अच्छे हैं। एक ज़रूरी काम से यहाँ आया था, परसो घर लौट जाऊँगा। बड़े दिन के उत्सवो मे आप कही जायेंगे तो नही ? बिहारीलाल दो भिन्न व्यक्ति थे, सतसईकार बिहारीलाल थे, बिहारीदास नही। पर रत्नाकरजी ने अपनी टीका मे बिहारीदास ही लिखा है। यह एक नयी समस्या उपस्थित है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७७

नायक-नगला (बिजनौर)
५-२-२९

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका तार और कृपा-पत्र दोनो आगे-पीछे पहुँचे। आवेश में मैंने आपको पत्र लिखा था। मुझे खेद है कि उससे आपको अत्यधिक कष्ट पहुँचा। सन्देह निवृत्ति के लिए आप दो लाइन लिख देते उसी से मेरा सन्तोष हो जाता। ऐसी भयानक शपथ लेने की भला क्या ज़रूरत थी ? आपकी शपथ पढकर मेरा दिल दहल गया। सचमुच मैं काँप गया। आपकी आँखो मे आँसू आ गये। मै पछता रहा हूँ कि मैंने वैसा पत्र आपको क्यो लिखा। मेरे पत्र से जो वेदना आपको हुई उसके लिए क्षमा माँगता हूँ। मेरा आप पर यथापूर्व विश्वास है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७८

गुरुकुल, काँगड़ी
२६-२-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

१२-२-२९ का कृपा-पत्र आज मिला। मै आपको 'वुद्धू' नही समझता, आपकी सरलता से धोखा ज़रूर हो जाता है। यह कोई आश्चर्य की बात नही। आदमी के स्वभाव का पता बहुत दिनो में जाकर लगता है। आपके सादा चोले में 'धूर्तता' भी छिपी है, इसका कोई अनुमान भी नही कर सकता। अस्तु, मेरा भ्रम दूर हो गया। मैं आगे आपको वैसा ही समझूँगा, जैसा आप कहते हैं।

'विशाल भारत' को लोग पसन्द तो करते है, पत्र निकल भी अच्छा रहा है। फिर क्या बात है ? घासलेटी-विरोध ने हानि पहुँचाई, इसमें सन्देह नही। मैंने पहले

ही आपको पत्र लिखा था कि यह बला सिर पर न लीजिए। कोरे सिद्धान्तवाद से व्यापार में काम नही चलता। प्रारम्भिक अवस्था मे तो ऐसे अप्रिय प्रसग से बचने की और भी आवश्यकता होती है। आपने अपना कर्तव्य-पालन कर दिया, अब इसे ज्यादा तूल न दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७६

नायक-नगला
२७-२-२६

प्रिय चतुर्वेदीजी,

आपकी अन्तिम चिट्ठी जिस दिन मुझे मिली, उस दिन मैं इधर आ रहा था। उत्तर का अवकाश न मिला। आपने अपने इस पत्र में पत्र-व्यवहार पर जो शर्त या पाबन्दी लगाई है, उसके अनुसार कार्य करना मेरे लिए अशक्य है। अपना दुखडा रोना या प्राइवेट, गोपनीय बातें लिखना मुझे भी पसन्द नही है। इस बारे मे मैं आप से भी सख्त हूँ। आपने स्वय भी मेरे विषय मे लिखते हुए एक लेख में स्वीकार किया है कि मैं अपने सम्बन्ध मे बहुत ही कम बातें करता हूँ। फिर भी मनुष्य-स्वभाव सुलभ कोई ऐसी बात किसी 'मित्र' को पत्र लिखते हुए निकल ही जाती है, जो किसी कारण 'गोप्य' हो सकती है। जहाँ तक मनुष्य-स्वभाव का मुझे परिचय है, कोई 'सार्वजनिक' मनुष्य भी इस ऐब से बरी नही है। सार्वजनिक कार्यो के सम्बन्ध में भी प्राय ऐसी बातें होती ही है, जिनका सर्वसाधारण पर प्रकट करना उचित नही समझा जाता। बडे-बडे सार्वजनिक और ऑल इण्डिया लीडरो में भी परस्पर ऐसा पत्र-व्यवहार होता है, जिसका प्रकाशन इष्ट नही होता। फिर मैं तो 'सार्वजनिक' प्राणी ही नही हूँ, मै तो बिलकुल प्राइवेट' आदमी हूँ। मै किसी भी सार्वजनिक कार्य में आप से सहायता की आशा नही रखता। इसलिए आगे को आप से पत्र-व्यवहार नही करूँगा। कभी कोई बात आप पूछेगे तो अत्यन्त सक्षिप्त उत्तर कार्ड पर दे दिया करूँगा, जिसका भाव छिपाने मे आपको कष्ट न हो। अब तक जो हुआ उदारतापूर्वक क्षमा कीजिए। मेरे जितने पत्र आपके पास है उन्हे जला दीजिए, या सर्वसाधारण को—जिन्हे आप सुनाना पसन्द करें—सुना दीजिए, जिससे आपके दिल का बोझ हलका हो जाय। मै अपने किसी रहस्य-गोपन का भार आपके सुकुमार हृदय पर डालना नही चाहता। मै आपकी इस भ्रान्त धारणा का निराकरण कर देना भी उचित समझता हूँ कि मैंने आप पर विश्वासघात का अपराध नही लगाया। मैंने जब सावधान रहने के लिए आपको पत्र लिखा था उसके उत्तर मे आपने मुझे कुछ

भी नहीं लिखा। मैं समझा, सम्भव है, वह पत्र आपको न मिला हो या आप भूल गये हो। भूल की सम्भावना आपके बहुधन्धी स्वभाव से उस बारे में भी हो सकती थी, जिस पर आप बिगड रहे है। जब आपने मुझे लिखा कि आपने वैसा नहीं किया मैंने फौरन मान भी लिया, क्षमा भी मांग ली। पर इस घटना से आपको ऐसी शिक्षा मिली है कि उसे आप बार-बार दुहरा रहे हैं और मुझे सावधान और सचेत कर रहे हैं। मैं भी आपसे विनीत निवेदन करना चाहता हूँ कि मुझे ख्वाहमख्वाह प्राइवेट झींकना झींकने की आदत नहीं है। मैं आप से या किसी दूसरे मित्र से पत्र-व्यवहार करके 'सार्वजनिक' प्रसिद्धि प्राप्त करना नहीं चाहता। आपके साथ पिछले पत्र-व्यवहार से सिवाय सौहार्द या सद्भाव के और कोई भी प्रयोजन नहीं था। आप पत्र लिखते थे, मैं भी लिख देता था। अब आप नहीं चाहते, मैं भी न लिखूंगा। आप सर्वथा निश्चिन्त रहिए। मैं आपको किसी बात के 'छिपाने के लिए' कष्ट न दूंगा। मैं आपको अधिकार देता हूँ कि आप जिस प्रकार सन्तुष्ट हो सके, मेरे उन पत्रो के साथ जो आपके पास है, व्यवहार कीजिए। उसमे जो कुछ भी हानि-लाभ होगा मैं भुगतने के लिए सहर्ष तैयार हूं। मैं 'सार्वजनिक' जन होता तो आपके साथ पत्र-व्यवहार जारी रखता, पर मैं 'सार्वजनिक' नहीं हूँ और दूसरी दशा मे आप वास्ता रखना नही चाहते इसलिए मजबूरी है। यह मेरा अन्तिम पत्र है। यह पत्र भी मैं सिर्फ आप ही के लिए लिख रहा हूँ। पर यदि इसे भी आप अपने ऊपर 'बोझ' समझे, तो पढते ही फाड डालिए या जैसा उचित समझिए कीजिए। मैं कोई शिकायत न करूँगा। पहले अपराधो के लिए क्षमा चाहता हूँ और आगे के लिए तोबा करता हूँ। अस्तु, जो हुआ अच्छा ही हुआ। कौन जाने इसमे भी कोई भलाई छिपी हो। मुझे प्रसन्नता होगी यदि आप उन सब बातो को भूल जायँ, जो मेरी ओर से आपके कष्ट का कारण हुई हो। मैं आपको शपथपूर्वक विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने जान-बूझकर कभी आपको कष्ट देना नहीं चाहा। मेरे साथ पत्र-व्यवहार में आपका मनोरंजन होता है, इसी भ्रम में पडकर मैं आपको पत्र लिखा करता था। यदि आप जरा भी इशारा कभी कर देते कि आप पर 'बोझ' पड रहा है तो फिर मैं एक भी पत्र आपको लिखने का दुःसाहस न करता। मुझे दुःख और पश्चात्ताप है कि मैं अपनी भूल से आपको कष्ट पहुँचाता रहा। मैं अपनी उन भूलो के लिए आपसे फिर क्षमा चाहता हूँ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

८०

गुरुकुल, कांगड़ी
२१-४-२६

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

१५-४ का कृपा-पत्र मिला। आपने अपने बारे में जो कुछ लिखा है अक्षरशः सत्य है और यह अच्छा ही है, किसी विपद-ग्रस्त की सहायता करना बडे पुण्य का काम है। इस गुण का आजकल अभाव हो चला है। कही मिल जाय तो शतमुख से प्रशसनीय है। पर इसका निर्वाह कठिन है—साधारण व्यक्ति के सामर्थ्य मे बाहर की बात है। फिर बहुत से हज़रत इसका नाजायज फायदा भी उठाते है। जो कुछ हो, आदमी अपनी आदत से लाचार है। फिर भी चादर देखकर ही पॉव पसारने चाहिएँ। परमार्थ वही तक ठीक है जहाँ तक स्वार्थ मे कर्तव्य पालन बाधक न हो। आप परोपकार की झोक मे सीमा का उल्लघन कर जाते है।

श्रीरामानन्दजी चटर्जी का अग्रेजी भाषण मिला। इसका अविकल हिन्दी-अनुवाद पुस्तकाकार छपना चाहिए था। 'विशाल भारत' मे निकल जाय तो कैसा? 'आज' में निकल तो रहा है पर मुझे टुकडे-टुकडे पढने में मज़ा नही आता। रस-विच्छेद हो जाता है, सिलसिला टूट जाता है। अगला-पिछला सम्बन्ध भूल जाता है। यह भाषण तो स्थायी साहित्य मे स्थान पाने योग्य है।

पिछले 'विशाल भारत' में जिनका लेख हिन्दी-साहित्य के सम्बन्ध में निकला है, वे सज्जन कौन है? (प० ल० ना० मिश्र) 'घृताची' कहानी वाले परशुराम चतुर्वेदी कौन है? कहानी अच्छी है। अनुवाद पण्डिताऊ ढग का गड्डल है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८१

गुरुकुल, कांगड़ी
१-५-२६

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

पुरस्कार के रुपयो का मनीआर्डर मिल गया। धन्यवाद। पर 'विशाल भारत' की आर्थिक दशा को देखते हुए मुझे इसके लेने मे सकोच हुआ। पिछले दिनो 'सरस्वती' की जनवरी की सख्या के लिए मैने एक लेख लिखा था, जो उसकी दो सख्याओ में प्रकाशित हुआ था। 'सरस्वती'-सम्पादक ने लिखा था कि 'सरस्वती' की समालोचना करते हुए 'लीडर' ने एक मात्र आप ही के लेख की प्रशसा की है। कोई और

लेख भी भेजिये। वह लेख प० ज्वालादत्तजी शर्मा के अनुरोध से लिखा गया था। उन्होने उन्हे पुरस्कार की बात लिखी, पर वह टाल गये कि अब तो वक्त निकल गया, पहले से लिखते तो भिजवा देता, इत्यादि। 'सरस्वती' और 'माधुरी' पूँजीपतियो की पत्रिकाएँ है, पर उनके सम्पादक अपनी कारगुजारी दिखाने के लिए लेखको को कोरा टरका देते है। फिर भी लेख लेना अपना हक समझते है। इसी नीति का आप भी सहारा लीजिए। तब बात है। नये 'विशाल भारत' मे चटर्जी की चिट्ठी खूब रही। उसे पढकर मेरे मित्र राधाकृष्णजी बडे प्रसन्न हुए। उसके सुन्दर अनुवाद के लिए वह आपको बधाई देते है।

आशा है, आप सानन्द है। ब० पारसनाथसिहजी कलकत्ते पहुँच गये या नही ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८२

काव्य कुटीर, नायक-नगला
१२-३-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका १-३-३० का कृपा-पत्र मिला। मैने भी एक पत्र आज ही चाँदपुर मे भेजा है, जिसमें 'कलामे बिस्मिल' की भूमिका भी है। कलकत्ते में आपके सुखद सहयोग से ही इतने दिन कट गये। 'विशाल भारत' के लिए मै जो कुछ कर सकता था, उतना न कर सका, फिर भी आप उसे सराहते है, यह आपकी उदारता है। 'मतवाले' का नोट मैने प्रयाग में ही पढ लिया था. मतवाले के कहने का गिला क्या ?

जी का पत्र आपके पत्र के साथ मिला है, भेजता हूँ। इस भूमिकाबाजी की आपत्ति से मुझे बचाइये। मै इससे बेहद तग आ गया हूँ। ख्वाहमख्वाह भूमिका या सम्मति लिखने के लिए पुस्तक पढना मुझे बहुत ही अखरता है। मै ऐसी एक पक्ति भी नही पढना चाहता, जिसे पढने को जी न चाहता हो, लोग मार-मार कर गवाते है। इन कवियो से तो ईश्वर बचावे। ज़बरदस्ती दाद लेना चाहते है। जी का पत्र ज़रा ध्यान से, ऐनक साफ करके, पढिए। किस ढग से काम लेना चाहते है ? लोगो की ऊँची राय की धौंस देकर आतक बिठाना चाहते है। 'ठूँठ' के पास पँखुरियाँ भेज रहे है। मै तो पैकट वापस कर दूँगा। आठ महीने की मुसीबत के बाद ज़रा दम लिया है कि चढाई शुरु हो गई। कभी-कभी तो तबीयत करती है लिखने-पढने से तोबा कर लूँ। खैर, आप को समझा दीजिए। इस बेगार में किसी और को पकडें। बिस्मिलजी से मुश्किल से इधर-उधर के कुलाबे मिलाकर पिंड

छुडाया था कि जी लिपट गये। मैं जानता हूँ बिस्मिल उस भूमिका से खुश नही, नाराज ही होगे। उस दिन जब भूमिका लिखकर दी, वह थे नही। मुमकिन है, बिस्मिल उसे किताब के साथ देना भी पसन्द न करे। मुझे इसकी परवा नही, पर मेरे तो उसमे कई घण्टे नष्ट हुए। इलाहाबाद इसीलिए उतरना पडा। हाँ, उस दिन काशी मे रत्नाकरजी के पास हरिऔधजी मिल गये। उन्हे यह सुनकर बडा रंज था कि सम्मेलन मे घासलेटी प्रस्ताव पास हो गया। वह 'घासलेटी' का अर्थ शृगार-रस की कविता समझ बैठे थे। मैने उन्हे सब बाते समझाई तो उनकी जान मे जान आई, नही तो वे बेचारे बडे खिन्न थे।

'विशाल भारत' यहाँ आज आया है, दूसरी जगह मे भी अभी पहुँचा होगा। जब यह बात है तो मर-पच कर वक्त पर निकालने से क्या फायदा हुआ ? आप यह बात जी खोलकर और जोर देकर बा० रामानन्द चटर्जी से कहते क्यो नही ? बर्लिन डा० ताराचन्द के नाम 'पद्म-पराग' और 'प्रबन्ध-मजरी' भिजवा दीजिए, उनसे और भी कुछ पते पूछिए। शास्त्रीजी को भी 'प्रबन्ध-मजरी' भेजना न भूलिये। बहुत कुछ लिखना था, फिर शनै शनै लिखूंगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८२

काव्य-कुटीर, नायक नगला, चाँदपुर
८-४-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका पत्र और पद्म-पराग' की समालोचना का कटिंग यथासमय मिल गया था। इस बार पहली बार प० सुमित्रानन्दन पन्त से बिजनौर मे मुलाकात हुई। आदमी तबीयत के साफ और 'जैन्टिलमैन' मालूम हुए। 'पल्लव' की भूमिका मे जो पहले कवियो के विषयो में अन्ट-शन्ट, अनाप-शनाप, ऊल-जलूल, लिखे गये है उसे वापस लेने को कहते थे। यह भी कहते थे कि व्रजभाषा का विरोध करने के लिए मुझ से खास तौर पर कहा गया था, इसी से वैसा लिखना पडा इत्यादि। गला सुरीला है। सुर-ताल से वाकिफ है। राग-रागनियो के नाम जानते है। आजकल के एक आदर्श छायावादी कवि में जो गुण होने चाहिएँ सब है। खुशी की बात यह है कि रोग से मुक्त हो गये है। वह 'भेडियाधसान' देखने के इच्छुक है। एक प्रति उनके नाम C/O म० दयानन्द जोशी, मुन्सिफ, बिजनौर के पते पर भिजवा दीजिए।

'पद्म-पराग' की समालोचना के साथ आपने मेरी भी समालोचना कर दी।

इस डबल कृपा के लिए डबल धन्यवाद । अकबर के शब्दो मे मै भी कह सकता हूँ कि "मेरे नाचीज लेखो की जो कद्र आपने की है वैसी किसी ने न की ।" पर मुझे डर है कि कृत्रिम-बनावटी शान्ति के खब्त मे आप लोग वीर, रौद्र और भयानक रसो का सर्वथा लोप करना चाहते है । जो एकदम असम्भव और अव्यवहार्य है । किसी अत्याचारी, नृशस और क्रूर आदमी की करतूत पर क्रोध और घृणा आना स्वाभाविक धर्म है । फिर उसे प्रकट करना क्यो अधर्म है ? यह तो एक तरह की मक्कारी है कि किसी दुष्ट पर क्रोध तो आवे इतना कि वह बेताब कर दे, पर उसे शब्दो मे प्रकट न किया जाय । ऐसा न आज तक हुआ है, न कभी आगे होगा । साहित्य मे सब रस सदा से रहे है और सदा रहेगे । अस्तु, आपका निष्पक्ष फैसला सुनकर भी मेरी यही राय है कि दुष्ट, धूर्त और लोकवचक लोगो की जितनी भी भर्त्सना की जाय उचित है, विहित है । अपने विरुद्ध फैसला सुनकर भ्रमणवादी गैलीलियो ने जज से कहा था कि आपका फैसला सुनकर भी यह कमबख्त भूमि बराबर उसी तरह घूम रही है, जरा भी तो नही रुकी । आपका फैसला सुनकर मै आपसे यही अर्ज करता हूँ कि जनाब धूर्त और नृशस व्यक्ति की पोल खोलना, शब्दो के कोडे लगाना आज से हजार बरस बाद भी विहित समझा जायगा । इसमे जरा भी फर्क नही आयेगा । आप लोगो के इस 'क्लीव क्रन्दन' शान्तिपाठ को कोई न सुनेगा ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८४

काव्य कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर, (बिजनौर)
११-४-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार ।

एक पत्र कल पोस्ट कर चुका हूँ । मार्च का 'विशाल भारत' रात पढा, एक बजे तक पढता रहा ।

३०० शब्दो वाला कार्टून बडा बढिया रहा । रात बहुत देर तक मै उसे देखकर हँसता रहा । 'खरगोश वाले' के चेहरे पर 'काइयाँपन' खूब झलक रहा है । जरा-सी एक कसर रह गई । 'खरगोश वाले' का कान ज्यादा नही तो खरगोश के कान के बराबर तो होता । लम्बकर्णता में कमी रह गई ।

'थर्ड क्लास' गल्प फर्स्ट क्लास रही । धन्यकुमारजी की तीन बार पीठ थपक दीजिए । 'हिन्दू चा गर्मम' खूब गरम वाक्य है । 'फास्ट' भी 'बोत आच्छा है', प-

'क्रमश:' ने मजा किरकिरा कर दिया ! बुरी जगह आप साँस तोडकर बठ गये। 'रस भग है गद्यो'। विज्ञापनबाजी के ख्याल से तो क्रमश. की पुट अच्छी है, पर सहृदयता को प्यासा मारने वाली बात है। नौ चिट्ठियो मे से इस अक में तीन तो होती, आपने पौने दो पर ही रोजा खोल दिया ! यह सितमजरीफी अच्छी नही।

इस बार सम्पादकीय नोट भी पर्याप्त है, और अच्छे है, सामयिक यानी वक्त की रागिनी है। लिबरल दल और सत्याग्रह-सग्राम मे एक वाक्य मुझे बहुत ही पसन्द आया—"ब्रिटिश शासन की कालिमा कम करने के उद्योग मे कही लिबरल लोग अपना मुँह काला न कर ले, पर गुस्ताखी माफ, यह तो अपने गरीब लिबरलो पर बडी करारी चोट लगा दी। अहिंसा के सिद्धान्त पर तो यह बम का गोला गिरा दिया। आपकी कलम से ऐसी 'व्यग्यमयी कठोर' बात कैसे निकल गई ! इसके प्रायश्चित्तस्वरूप एक दिन का व्रत कीजिए ! आज से सौ बरस बाद आपके इस नोट को पढकर लोग क्या कहेगे। बात सम्भवत ठीक होगी पर यह कितनी कठोरतापूर्वक कही गई है। खैर, यह भी बिजनौरी बकरे की एक धार है। 'जरूरी चीजे' भी मजेदार गल्प है, पर उसमें 'अरे मेरे राम' खटकता है। 'ओ माई लार्ड', 'माई गाड' अच्छा रहता। फिर तेरहवी का दिन ईसाइयो मे तो नही होता। कहानी बहुत अच्छी है। 'केयर हार्डी' और 'दीनबन्धु के माता-पिता' भी बहुत अच्छे निकले। ३८० पेज पर 'लैम्प' को स्त्रीलिंग का लहँगा पहनाना ठीक न हुआ। यह तो खालिस पुलिंग था। यदि लिंग व्यत्यय का यही क्रम जारी रहा तो कुछ दिन बाद हिन्दी में एक शब्द भी पुलिंग न रह जायगा। बगाली बाबूगण हिन्दी के लिंग-भेद से बहुत घबराते हैं। उनके हक मे तो यह अच्छा ही होगा। ४२६-४२७ पृष्ठ पर 'नरक' को नर्क लिखा गया है। सिर्फ एक जगह नरक शुद्ध रूप में छपा है, ऐसी भूल न होनी चाहिए। इससे बहुत-से पाठक 'नर्क' (बवजन 'तर्क') लिखने लगेंगे। ऐसे प्रसग में पद्मचन्द्र-कोश देख लेना चाहिए। आगे को शब्द-शुद्धि पर विशेष ध्यान रहे, इसलिए नोटिस ले रहा हूँ। 'चम्पा मे भारतीय सस्कृति' अच्छा लेख है। इससे पहले अक में एक ऐतिहासिक लेख और भी महत्त्वपूर्ण निकला था, शीर्षक याद नही रहा। अक इस समय पास नही। पुष्यमित्र और अग्निमित्र के सम्बन्ध में था। उसे पढकर मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ था। उसके बारे में शायद लिखना भूल गया था। लेखक को बधाई दीजिए और उनसे और कोई ऐसा ही लेख मँगाइये। बहुत दिनो बाद ऐसा सुन्दर तथ्यपूर्ण ऐतिहासिक लेख पढने को मिला था। उसमे भी एक भारी भूल रह गई थी 'मध्यमिका' (नगरी विशेष) का 'मध्यामिका' या ऐसा ही कुछ छपा है। लेख शायद अग्रेजी से अनुवाद था। सस्कृत शब्दो की शुद्धि पर वह भी ऐतिहासिक शब्दो पर, बहुत ध्यान देना चाहिए। खैर, बार-बार उस लेख ी प्रशसा करने को जी चाहता है। ऐसे लेख तो कभी 'सरस्वती' में भी शायद

एक-दो ही निकले होगे ।

रूस के चचा 'चिचेरिन' साहब भी खूब रहे, पर लेख के अन्त मे यह छायावादी चित्र कैसा है ? क्या यह देवी 'चचेरिन' की चची है ? इस लेख के अन्त मे कोई चित्र देना ही था तो 'भालू' या 'बाघ' का देना चाहिए था ! कौशिकजी का 'स्वदेश' अभी मैंने नही पढा ।

प० श्यामजी कृष्ण वर्मा चल बसे ! उनका चित्र कही से मँगाकर 'विशाल भारत' मे दीजिए । भाई परमानन्दजी का एक लेख श्यामजी कृष्ण के सम्बन्ध में निकला है । आप कहेगे—छापेगे तो उसका परिवर्द्धित अनुवाद भेज दूँगा ।

हाँ, एक बात और याद आ गई । पत्रकार-सम्मेलन की रिपोर्ट मे गर्देजी के भाषण का अश आपने बहुत अच्छा दिया है ।

अबकी बार मुरादाबाद में एक मुसलमान सूफी शायर की कविता सुनी । वृद्ध हैं, 'अखगर' तखल्लुस है । मुलाकात तो पहले से भी थी, पर कविता विशेष रूप से इसी बार सुनी । 'विशाल भारत' के लिए कुछ नमूने लाया हूँ । एक बडी कविता जो अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण थी, उसकी नकल न मिल सकी । कविता बडी है और बडी सुन्दर है । रहस्यवाद का उत्कृष्ट नमूना है । आ जायगी तो भेजूंगा । सूफी साहब का फोटो मिल गया है, भेजता हूँ । इसे ब्लॉक के लिए रखिये । इससे ब्लॉक न बन सके तो लिखिये और मँगाऊं । उनकी एक रुबाई लिखता हूँ—

"बदियो को बुराई से मिटाया न गया,
शोलों को शरारो से बुझाया न गया;
लटका दिया क़ातिल को मगर ऐ अखगर';
मकतूल को तो फिर भी जिलाया न गया ।"

वर्माजी (श्री व्रजमोहन वर्मा) से इसका अर्थ पूछ लीजिए । इस रुबाई को पढकर मार्च के 'विशाल भारत' में ३३६ पृष्ठ पर टालस्टाय की यह उक्ति देखिए,--"जिस प्रकार अग्नि अग्नि का शमन नही कर सकती, उसी प्रकार पाप पाप का शमन नही कर सकता ।" कैसा सुन्दर अनुवाद है । सूफी साहब अंग्रेजी के अच्छे कवि है । ४० वर्ष तक शिमले में अंग्रेज़ो और मेमो को उर्दू-फारसी पढाते रहे है । मसाला मिल गया तो बढिया लेख रहेगा । एक और शेर उन्ही का है—

"बोसे मेरी निगाह के हूरो ने ले लिये,
देखा था इक यतीम को कल मैंने प्यार से ।"

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८५

काव्य-कुटीर, नायक नगला
१७-४-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

मेरे पहले दोनों पत्र पहुँचे होंगे और आप सम्भवतः आज श्री वृन्दावन की भूमि में विराजमान होंगे। प्रवासी भारतवासियों की विषम समस्या सुलझाने में व्यस्त होंगे, दिमागी व्यायाम कर रहे होंगे। अच्छा तो यह होता कि सभापति के सिंहासन पर स्वामी श्री भवानीदयाल सन्यासी की मूर्ति की स्थापना करके आप भरतजी की तरह स्वामीजी का प्रतिनिधित्व करते। न मालूम आपने क्या किया? खैर, इस सारी कार्रवाई की पूरी रिपोर्ट जेल में स्वामीजी के पास जरूर पहुचनी चाहिए। इससे उन्हें परमानन्द की प्राप्ति होगी, दिल बढेगा और साथ ही कई पली खून भी।

वृद्ध शरीर है, भारतवर्ष की जेल के कष्ट उनके लिए नये होंगे। दो वर्ष कैसे काटेंगे? यदि इस वर्ष स्वराज्य मिल गया तब तो वह पहले ही मुक्त हो जायेंगे। बहुत-से जोशीले और भावुक नवयुवक इसी आशा से जेल-यात्रा के लिए व्यग्र हैं कि स्वराज्य में जल्दी ही छुट्टी पा जायेंगे और शहीद समझे जाकर राष्ट्र से सम्मान भी पायेंगे। भगवान् उनकी आशा शीघ्र पूरी करे। 'आमीन', एवमस्तु, अल्ला हो अकबर! वन्देमातरम्! इनकलाब जिन्दाबाद! साम्राज्यवाद का क्षय हो! राष्ट्रपति की जय हो! भारत माता की जय! गांधी बाबा की जय! 'अभ्युदय' से एक लेख की कटिंग भेजता हूँ, इसे अवश्य अवश्य 'विशाल भारत' में प्रकाशित कर दीजिए। आजकल जो नये ढंग की स्त्री-शिक्षा दावाग्नि की तरह फैल रही है, यह बची-खुची आर्य सभ्यता और भारतीय संस्कृति को भस्म कर देगी। इसके विरुद्ध आन्दोलन उठाना चाहिए। यह शिक्षा भी 'घासलेटीइज्म' की नानी है। पाश्चात्य शिक्षा से सुशिक्षित आर्य ललना (अपवाद की बात जाने दीजिए) या भारतीय महिला मिस मेयो की बहन साबित होगी। परमात्मा रक्षा करे। इस प्रकार के उपयोगी लेख 'विशाल भारत' में उद्धृत होते रहने चाहिएँ। आपसे मैंने पहले भी जोर देकर कहा था। आपने मान भी लिया था। आपने वाजपेयीजी का वह अग्रलेख, जिसमें उन्होंने महात्मा गान्धी की विजय-यात्रा की श्री रामचन्द्रजी की लंका की चढाई से तुलना की थी, 'विशाल भारत' में उद्धृत किया? कितना अच्छा लेख था, वह आपकी प्रमाद की खटाई में गल गया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
ता० ८-४-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार ।

ट्रेन मे से लिखा हुआ और फतहपुर मे पोस्ट किया हुआ जनाब का पोस्टकार्ड मिला । 'प्रवासी'-सम्मेलन को समाप्त करके आप सही-सलामत पहुंच गये । इस बहादुरी के लिए बधाई देता हूँ । बाकी बाते तीसरे रजिस्टर्ड पत्र मे लिख चुका हूँ । 'पिन' और 'लाठी' की आपने एक ही कही । अरे बाबा, किसी भले गैरतमन्द आदमी का मुंह काला करके छोड देना तो लाठी मारना क्या जूते मारने से भी भयकर दण्ड है । फिर 'पिन चुभाना किसी दुष्ट के लिए कोई दण्ड है ? कोई कह सकता है कि खटमल ने काटा होगा, इसीसे यह कुरसी से उचक रहे है । दण्ड तो अपराधी से बदला लेने के लिए नही, बल्कि दूसरो को सावधान करने के लिए या इबरत हासिल करने के लिए दिया जाता है, जिससे दूसरे डरकर वैसा दुष्कर्म न करे । कम-से-कम मै तो किसी नर पशु' को पिन का चुभाना वैसा ही समझता हूँ जैसा किसी गेंडे के चूतर पर मारना या सुई चुभाने की हास्यास्पद चेष्टा करना । अपनी आप जाने, पिन चुभाइये या किसी का काला मुंह कीजिए ।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

८७

C/O मध्यभारत हिन्दी साहित्य-समिति, इन्दौर
२०-५-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम ।

आपका और वर्माजी का दोनो पत्र एक साथ प० शिवसेवक त्रिपाठी द्वारा यथासमय मिले थे । पर समयाभाव से उत्तर न लिख सका । अब भी प्राप्ति स्वीकार मात्र लिख रहा हूँ । श्री वाजपेयीजी भी यहां पधार गये है । मेरे आने का मुख्य उद्देश्य मालवे के प्राचीन ऐतिहासिक तीर्थो की यात्रा का था । वह अलभ्य अवसर मिल गया और ऐसा कि न मिला होगा किसी को । इतिहास-मूर्ति ओझाजी और उनके सुपुत्र प० रामेश्वरजी ओझा, एम० ए० के साथ धार नगरी की यात्रा की । जो कुछ वहां देखा उसका वर्णन पत्र में असम्भव है । संस्मरण लिखने का विचार है, लिखे गये तो पढिएगा । एक चीज होगी । मांडू का महा किला भी ओझाजी के साथ देखा । पर

उज्जन और देवास भी देखे। यहाँ से चित्तौरगढ और उदयपुर देखकर आगरे जाऊँगा। वहाँ से फिर घर। आपकी शिकायत है कि लेखको के पत्रो का उत्तर तक नही देते, यहाँ तक कि ओझाजी के पत्रो का भी उत्तर और उनके लेख की अतिरिक्त प्रतियाँ आपने उन्हे नही दी। आखिर उन्होने 'विशाल भारत' में लेख देने का विचार स्थगित कर दिया। ओझाजी के सुपुत्र प० रामेश्वरजी ओझा, एम० ए० का एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक लेख, जो ३० पृष्ठो में छपेगा, लिखा है, लेख सचित्र होगा। चित्तौर पर ऐसा लेख आज तक किसी पत्र मे नही निकला, किसी ने नही लिखा। वह लेख यह 'सुधा' में भेजना चाहते हैं। मैने 'विशाल भारत' के लिए मांगा तो कहा वह तो उत्तर तक नही देते। यदि आप उस लेख की १०० कटिंग उन्हे मुफ्त दे और ५०० (कापियो की छपाई वह देंगे) छाप दे, इस शर्त पर आप उनका लेख प्रकाशित करना उचित समझें तो मैं वह लेख भिजवाऊँ? उत्तर फौरन ही दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८८

C/O मध्यभारत हिन्दी साहित्य-भवन,
तुकोगंज (इन्दौर)
२८-५-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका २४-५ का पत्र आज मिला। मै इन्दौर आया तो सही, पर मुझे इन्दौर पसन्द न आया। शाक और फल यहाँ नही मिलते और बहुत महँगे और बहुत खराब मिलते है। गरमी बहुत, कम-से-कम बिजनौर से ज्यादा पडती है। पानी भी इतना अच्छा नही है। हवा अलबत्ता खूब चलती है। आदमी भी कुछ अच्छे मालूम नही हुए। इस यात्रा में भोजदेव की नगरी—धार— देखने का सौभाग्य प्राप्त हो गया। बहुत दिनो की इच्छा थी। माडू भी विचित्र स्थान है पर धार को देखकर जो भाव मन में उठ रहे थे, कह नही सकता, लिखना तो और भी कठिन है। जगह-जगह बैठकर रोने और ज़मीन पर लेटने को जी चाहता था। सीतामऊ और मदसौर (कालिदास की जन्मभूमि) देखकर चित्तौर, उदयपुर जाने का विचार है। मिस्टर बापना भी ७, ६ को वहाँ जा रहे हैं। उनके साथ देखने का सुभीता रहेगा। अफसोस है, महाराणा चल दिये, पुराने ज़माने के क्षत्रियो की यादगार मिट गई।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८६

C/O मध्यभारत हिन्दी साहित्य-समिति, इन्दौर
२-६-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका ३०-५ का कृपा-पत्र आज मिला। इस बीच मे मेरा एक और पत्र भी पहुँचा होगा। 'फास्ट' को मै बराबर पढता आया हूँ। अनुवाद बहुत अच्छा किया है। तुर्गनेव का सस्कृतीकरण तुरगनेय करने की सूचना मैंने आपको एक पत्र मे दी थी। 'प्रेम कवि', 'वीरा' जब सस्कृत शब्द गढ लिये है, तो 'तुरगनेय' भी सही। अस्तु!

दो वर्ष से वर्षा यहाँ अच्छी नही हुई। पानी की बहुत कमी है। आगरे की अपेक्षा तो यहाँ अब भी बहुत ठण्ड है। फिर भी यहाँ की आबोहवा बहुत अच्छी नही है। आबोहवा का बैलेन्स ठीक नही है। पानी कम और हवा जरूरत से ज्यादा है। पुराने कवियो ने हवा में जो शीतल, मन्द, सुगन्ध ये तीन गुण माने है, उनका औचित्य यहाँ की हवा को देखकर मालूम होता है। आँधी चलती है। कभी-कभी तो मालूम होता है चारपाई उलट जायगी। लिखते वक्त कागज़ को दबाकर लिखना पडता है। कागज़ उडने लगता है, ध्यान बट जाता है। पानी में स्वाद नही, भारी है। हर चीज़ कलकत्ते से भी महँगी है, खासकर 'न्यायी ब्राह्मण' तो बहुत महँगे है। शाक-भाजी भी अच्छी नही मिलती। घी घासलेटी है। मजदूर तो बहुत महँगे है। एक चीज़ भी, सिवाय हवा के, सस्ती नही। लोग कहते है पहले ऐसा नही था। यह कहावत पहली है—

"मुल्क मालवा गहर गँभीर। मग-मग रोटी पग-पग नीर॥"

मुझे तो यह प्रदेश इसलिए अच्छा मालूम होता है कि विक्रम, कालिदास और भोजदेव की जन्मभूमि है। आर्य सस्कृति की और सस्कृत भाषा की लीला-भमि रही है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६०

C/O मध्यभारत हिन्दी साहित्य-समिति, इन्दौर
६-६-३० (रात के १२ बजे)

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपके पत्र का उत्तर 'फास्ट' पर सम्मति भेज चुका हूँ। आज कई दिन के बाद कीवे साहब से मिलने गया था। आपका नमस्कार उन तक पहुँचाना था। सेवकजी श्री द्वारकाप्रसादजी 'सेवक' से तो नमस्ते कल ही कह दी थी। कीवे साहब को मैं अपनी पुस्तकें (सतसई, पद्म-पराग, प्रबन्ध-मंजरी) भेंट की थी। आज मिलते ही

की चर्चा उन्होने छेडी, मै आपके ग्रन्थ बडे चाव से देख गया हूँ। चित्त बहुत ही प्रसन्न हुआ। ग्रन्थो मे मौलिकता है। भाषा सरल और हृदयग्राही है। सतसई मे अपूर्व पाण्डित्य है—इत्यादि बहुत-सी दाद दिल खोलकर दे डाली। फिर कहा, 'पद्म पराग में सत्यनारायणजी पर लेख पढकर उनका स्मरण हो आया। उनका इन्दौर-सम्मेलन के समय का वह मधुर कविता-पाठ अब भी मेरे कानो मे गूँज रहा है।" यह बात कीवे साहब ने कई बार कही। कहते समय उनके चेहरे पर उत्सुकता और खेद के भाव झलक रहे थे। मालूम होता था वह ध्यान-दृष्टि से सत्यनारायणजी को देख रहे है, उनके मधुर गान की ध्वनि इनके कानो मे गूँज रही है और अब उन्हे न पाकर वियोग-दुःख का अनुभव कर रहे है। कीवे साहब की इस सहृदयता ने मुझे मुग्ध कर दिया। सत्यनारायणजी की याद से जी भर आया। मुश्किल से अपने को सँभाला। फिर मैने आपका सन्देश नमस्कार कहा। कहने लगे, "चतुर्वेदीजी बडी कृपा करते है। 'विशाल भारत' बहुत ही अच्छा पत्र है। मै उसे बराबर पढता हूँ। आपके लेख भी मै उसमे ध्यान से पढता रहा हूँ। आपकी भाषा बडी सरल है और मनोहर होती है। महात्मा गाधी भी ऐसी भाषा चाहते है, जो सुबोध हो। आपकी भाषा मे फारसी-उर्दू के बहुत-से शब्द हमारी समझ मे नही आते, पर उनका प्रयोग भला मालूम होता है। यद्यपि हजार मे दस-पाँच ही शब्द ऐसे होते है। बाकी तो खूब समझ में आ जाते है।"

महात्मा गाधी के गीतानुवाद के लिए शायद मैने आपको पहले पत्र मे लिखा था, वह अनुवाद पोद्दारजी ने कलकत्ते से घर के पते पर मेरे पास भेजा था। वहाँ से यहाँ आ गया है। मै उसे ध्यान से पढ रहा हूँ। अनुवाद साधारणतया बुरा नही है। पर जहाँ महात्माजी ने गीता की दार्शनिक गुत्थियाँ सुलझाने का प्रयत्न किया है, वहाँ अक्सर गडबडा गये है। अपने मनमाने सिद्धान्त से गीता-वर्णित सिद्धान्तो का सामजस्य या समन्वय नही कर सके है (यथा अहिसा सिद्धान्त का समन्वय)। महात्माजी महात्मा तो है पर तिलकजी की तरह दार्शनिक नही है। बल्कि दार्शनिक है ही नही। आर्य-दर्शनशास्त्र का उन्हे परिचय नही है। वह तो रस्किन और टॉलस्टॉय के विशेषज्ञ है। श्रद्धालु भक्त है। तपस्वी और सयमी है और बस। आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६१

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग
१५-८-३० शुक्रवार

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

बहुत दिनो बाद आपका ७-८ का कृपा-पत्र कल शाम को यहाँ मिला।

'आकाशदीप' की आलोचना मैंने पढ ली और कई सज्जनो को पढाई, सुनाई। आपने कलम तोड दी है, कमाल किया है। कल 'लीडर' के प० केशवदेवजी शर्मा मिले थे। वडे सहृदय सज्जन है, उनसे मिलकर वडी प्रसन्नता हुई। किसी तरह सन्तोपजनक रीति से कही 'पद्म-पराग' का द्वितीय भाग छप जाय तो 'सतसई' को पूरा करने का विचार है। वहुत-से मान्य सज्जनो का आग्रह है। जी तो चाहता नही, पर एक वार प्रयत्न करके देखूंगा। हो गया तो हो गया, फिर साहित्य-सेवा से सदा के लिए छुट्टी लूंगा।

श्री गागेयजी को प्रोत्साहित करके सम्मेलन के अधिवेशन को सफल वनाने का पूरा प्रयत्न कीजिए। जव निमत्रण दे दिया है तो उसे निबाहना चाहिए। मैं भी उन्हे लिखूंगा। हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का दिवाला निकल रहा है। एक अपील निकली है आपने देखी ही होगी, उस पर भी कुछ लिखिए। 'आकाशदीप' की यथार्थ समालोचना के लिए वधाई देता हूँ। मुझे और दूसरे लोगो को आपकी यह समालोचना वहुत ही पसन्द आई है। पोखरवाली मिसाल वडे गजव की है, उसके पहले गन्दी विशेपणता दी होती तो और अच्छा होता।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६२

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग
ता० २२-८-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका कार्ड मिला था, पर श्री हृषीकेशजी का व्लाक आज तक नही पहुँचा। या तो मिला नही या वहुधधी धन्यकुमारजी भूल गये। मिल गया हो तो तुरन्त भिजवाइये।

जुलाई की 'माधुरी' में प० उमरावसिंहजी चतुर्वेदी का लेख मार्के का निकला है। इसी अक में 'प्रवन्ध-मजरी' की समालोचना निकली है। प० भवभूतिजी को पढने के लिए वह दे दीजिए। मैंने उन्हे सूचना दे दी है। प० विप्णुदत्तजी शुक्ल का १५-८ का कार्ड मुझे आज ही यहाँ मिला है, घर के पते पर भेजा था। उन्हे सोचकर उत्तर दूँगा। कार्ड की पहुँच उन्हे पहुँचा दीजिए। प० ज्वालादत्तजी शर्मा ने लेख भेजने का वादा किया है। कल प० देवीदत्त शुक्ल, सरस्वती-सम्पादक से मिला था। वह भी 'आकाशदीप' की समालोचना को सराह रहे थे। 'प्रसाद' जी की अटपटी

कहानियाँ उनकी समझ में भी नही आती। समालोचना के लिए आपकी प्रशंसा करते थे, यह समालोचना वास्तव में आप से बहुत अच्छी बन पडी है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९३

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग
२९-८-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपको पत्र लिखकर मै गाजीपुर और काशी चला गया था, परसो २७-८ को यहाँ लौटा हूँ।

काशी मे याज्ञिकजी (प्रो० जीवनशकर याज्ञिक) ने इस बार बडे ही सद्भाव और सौजन्य का परिचय दिया। बहुत ही आत्मीयता का व्यवहार किया। एक रात उनके पास रहा। वह बराबर साथ रहे, स्टेशन पर पहुँचाने आये। दो बजे दोपहर का वक्त था। मै शिवप्रसादजी के सेवा-उपवन में उतरा था। वह अपने होस्टल से एक बजे पैदल सख्त धूप में वहाँ आये और मेरे साथ स्टेशन तक गये। उनके इस प्रेमपूर्ण व्यवहार ने मुझे मुग्ध और विस्मित कर दिया। अग्रेज़ी का ऐसा विद्वान होकर इतनी भारतीयता और सहृदयता-आश्चर्य है। आपके द्वारा ही उनसे परिचय हुआ था, सो आपका आभारी हूँ। 'कल्याण' के रामायणाक मे उनके दो सुन्दर निबन्ध निकले है। अवकाश मिले तो पढिये। 'आकाशदीप' की समालोचना उन्हे भी बहुत पसन्द है। उसे जिसने भी पढा है उसी ने तारीफ की है, जिन्होने नही पढा था ऐसे बहुत-से सज्जनो से मैने पढने का अनुरोध किया है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९४

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग
११-९-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका ९-९ का कृपा-पत्र कल मिला। मेरे कई पत्रो का उत्तर आपने बहुत दिनो बाद दिया, कई प्रश्नो को आपने 'टच' नही किया। आप अक्सर ऐसा ही करते है, यह आपका स्वभावसिद्ध अधिकार हो गया है। खैर, अब उन बातो को क्या दोहराऊँ। सच तो यह है कि मै खुद भी भूल गया कि क्या-क्या लिखा था। अब फिर याद करके

लिखूं भी तो क्या फायदा। आप फिर उन्हे 'ताके-निसिया' मे डाल देंगे। अस्तु, अब आपके पत्र का उत्तर देना ही मुनासिब होगा। प० रामजीलालजी शर्मा की मृत्यु सचमुच एक बडी ही शोकजनक दुर्घटना हो गई। बडे काम के और गुणी पुरुष थे। व्यवहार-कुशल, गम्भीर, मर्मज्ञ, प्रसन्न-वदन, सज्जन और यारबाश आदमी थे। ऐसे आदमी बहुत कम होते है। मेरे हृदय को तो उनकी मृत्यु से बडा आघात पहुँचा है। प० रामजी लाल शर्मा अपनी जगह हमेशा के लिए खाली कर गये। उनके सस्मरण में 'विद्यार्थी' का एक विशेषाक निकल रहा है। उसके लिए एक लेख आप भी जरूर लिखिए।

'विशाल भारत' के साहित्याक के लिए कुछ-न-कुछ जरूर भेजूंगा। प० रुद्रदत्तजी के सस्मरण लिख सकूंगा कि नही, कह नही सकता। प्रयत्न करूंगा। कल १२ ६ को यहाँ आये हुए मुझे पूरा एक महीना हो जायगा। इस बीच में तबीयत बहुत ही परेशान रही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६५

काव्य-कुटीर, नायक नगला
१४-१०-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

उस दिन आपसे कुछ भी बाते न हो सकी। अवसर ही ऐसा था। विपत्ति में ढारस या सान्त्वना देने का साहस भी न हुआ। आपकी इस विपत्ति पर जी कुढ रहा है। जीवन का प्रोग्राम ही बदल गया। जब सोचता हूँ, दु ख होता है। इस दशा में क्या साहित्य-सेवा होगी और क्या प्रवासियो की सुध ली जायगी! न घर पर रहते बनेगा, न बाहर। उस दिन का देवकी (प० बनारसीदासजी की सुपुत्री) का रोना याद करके रोना आता है। मातृ-विहीन बच्चे को देखकर बडी वेदना होती है।

प्रिय पटे से भी मिलना न हो सका। अब तो वह अच्छे होगे। मेरी राय में उन्हे कलकत्ते ले जाना ठीक न होगा। वहाँ की आब-हवा अच्छी नही है।

आप कब तक कलकत्ते पहुँचेगे। पिताजी से, पटेजी से और प० देवीप्रसादजी से नमस्कार कहिए। समाचार लिखिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९६

काव्य-कुटीर, नायक नगला
१८-११-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

दोनो कृपा-कार्ड और अक्तूबर का 'विशाल भारत' का एक अंक एक साथ मिले। यह अंक बहुत अच्छा निकला है। कई लेख महत्त्वपूर्ण है। हरिशंकरजी का लिखा लेख 'विदेशी रेल' 'स्वदेशी रेल' का करारा जवाब है। खूब लिखा है। यह अंक, शौकत थानवी के पास भेजना चाहिए। शिकारी-लेखक (प० श्रीराम शर्मा) की कहानियाँ बहुत ही सुन्दर है, उनसे और भी लेख लिया कीजिए। साहित्य-सेवी और साहित्य-चर्चा बहुत अच्छा रहा। इसी की जरूरत है, उर्दू पत्रो मे ऐसी चर्चा रहती है। प० माधवप्रसादजी गद्य के बडे ओजस्वी लेखक थे, पद्य तो उनके ऐसे नही होते थे। पर गद्य खूब लिखते थे। उनके कुछ गद्य-लेखो का सग्रह 'सुदर्शन' से लेकर प्रकाशित हो सके तो अच्छा है। सुना है, गुलेरीजी के लेख कोई सज्जन प्रकाशित कर रहे है। आप कुछ-न-कुछ चर्चा चलाते रहिए, शायद किसी के कान पर जूँ रेंग जाय या 'कबहू दीनदयाल के भनक परैगी कान' वाली बात हो जाय। वैसे तो आजकल के 'स्वयम्भू आचार्य' और 'हिन्दी के धनीधोरी' पुराने लेखको को कुछ समझते ही नही! जो कुछ है वह खुद है या उनके पिट्ठू। श्यामसुन्दरजी ने प० माधवप्रसादजी का नाम भी नही लिया। इससे अधिक अज्ञान, पक्षपात और अविवेक क्या होगा। ऐसे ही वृथापुष्ट पोथे हिन्दी का इतिहास कहकर पब्लिक के गले मढे जाते हैं। साहित्यिक पतन की पराकाष्ठा हो गई! विश्व कविजी के अंकित चित्र भी छायावादी चित्र हैं। चित्र का कान और मुँह तो कुछ समझ में आता है पर उसमें जो एक मोटा-सा शहतीर बना दिया है, वह क्या बला है? सम्भव है, उन्होने अपनी किसी यात्रा में ऐसा अद्भुत जन्तु देखा हो, और इसमें कुछ चित्र-चातुरी भी हो। मुझे तो छायावादी पहेली मालूम होती है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९७

काव्य-कुटीर, नायक नगला
१८-१२-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

मेरे पहले पत्र पहुँचे होगे। नवम्बर का 'विशाल भारत' मिला। 'चिडियाघर' की चर्चा आपने खूब की है, अच्छी दाद दी है। जब मुझे मालूम हुआ कि आप

'चिडियाघर' की समालोचना करने जा रहे हैं तो मैंने जल्दी-जल्दी में 'चिडियाघर' का उद्घाटन (भूमिका) लिखकर हरिशंकरजी को भेजा कि इसे भी पुस्तक में जोड दो और चतुर्वेदीजी के पास भेज दो पर वह वक्त पर न पहुँच सका। खैर, आपने बहुत अच्छी, काबिले दाद, दाद दी है। प० रामजीलाल शर्मा के संस्मरण मालूम नही प्रयाग से आपके पास पहुँचे कि नही।

ऐण्ड्रूज के संस्मरणो में सरोजिनी नायडू का उल्लेख बडे ही मार्मिक ढंग से किया है, पढेंगी तो दाद देंगी। श्रीरामजी का लेख इस बार भी बहुत अच्छा है, इनसे बराबर लेख लेते रहिए। वह आजकल कहाँ हैं? प० माधवप्रसाद मिश्र की चर्चा आपने खूब छेडी। यह 'विशाल भारत' के आनन्दराव जोशी क्या वही हैं जिन्होने मंगलाप्रसाद पारितोषिक पर लेख लिखा था। आपका इनसे परिचय हो तो एक पत्र लिख दीजिए इन्हे 'पद्म-पराग' भेजना चाहता हूँ। किसी मराठी पत्र में 'समालोचना' कर देंगे। इनका पता भी लिख दीजिए।

प्रोफेसर रामदेवजी ने संस्मरणो का ताता बाँध दिया मालूम होता है। इसी रूप में अपनी ऑटोबायोग्राफी खत्म कर देंगे। वे बहुत-सी बाते निराधार और असत्य लिखते हैं, प्रत्येक घटना मे आत्मश्लाघा की बदबू रहती है। महात्मा हंसराज की पार्टी के सम्बन्ध मे और खुद अपनी पार्टी के बारे में भी बहुत-सी अनर्गल बाते लिख मारी हैं। इससे बहुत-से लोग नाराज हैं। इस ओर आपका ध्यान दिलाने का अनुरोध कई बार कई सज्जनो ने किया है। आज अचानक याद आ गई सो लिख दिया। आगे आप जानें।

मुन्शी महाराज बहादुर 'बर्क' की एक नज्म सटिप्पन भेजता हूँ। और भी एक है, पीछे भेजूंगा। पसन्द आवे तो छाप दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९८

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चाँदपुर (बिजनौर)
५-१-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

यहाँ आकर गांगेयजी का सम्मेलन के सम्बन्ध में विस्तृत पत्र मिला। वह मुझे वहाँ बुला रहे हैं और आपसे डटकर आन्दोलन करने के लिए प्रार्थना करने का अनुरोध किया है। कलकत्ते में सम्मेलन बुलाने की सम्मति मैंने भी दी थी, आप तो सहमत न थे। पर समर्थन आपने भी कर दिया था। इसलिए जिम्मेदारी हमारी भी है।

आप से निवेदन, अनुरोध और प्रार्थना है कि आप गागेयजी से सर्वात्मना सहयोग कीजिए। विना आपके सहयोग के काम न चलेगा। दूसरी पार्टी स्वार्थवश धाँधली कर रही है। उसका प्रतिकार कीजिए और सम्मेलन को सफल बनाने की पूरी चेष्टा कीजिए। नि सन्देह इसमे आपको गालियाँ सुननी पडेगी, पर इसकी परवा न कीजिए। खैर, जो होगा देखा जाएगा पर आप सम्मेलन को सफल बनाने का प्रयत्न कीजिए। टंडनजी को लिखिए वह एक बार कलकत्ते पहले ही हो जावे, पार्टियो के विरोध को शान्त करें। श्री वाजपेयीजी और बा० मूलचन्दजी को भी प्रेरणा कीजिए। आप इधर ध्यान देगे तो सफलता अवश्य होगी।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३३

काव्य-कुटीर, नायक नगला
१९-१-३३

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

७-१-३१ का कृपा-पत्र यथासमय मिल गया था, अनुगृहीत हुआ। आप जिस परिस्थिति में काम कर रहे है, यह आप ही का हौसला है। मै तो उसके ध्यान मात्र से विचलित हो जाता हूँ। 'लीडर' की पुरस्कार की बात से—दूसरे महीने का पुरस्कार अन्त्येष्टि में लगा—दिल पर एक चोट लगी। ऐसी घटनाएँ बडी हृदय-विदारक होती है। जीवन को भारभूत बना देती है। उर्दू के एक कवि ने सच ही कहा है—

"हरनफ़स आह और अनफ़ास पै जीने का मदार,
ज़िन्दगी आहे-मुसलसल् के सिवा कुछ भी नहीं।"

जीना क्या है, दु खो का भार ढोना है, जो ढोना ही पडता है, लाचारी है। उर्दू-हिन्दी के साहित्य-सेवियो की सच्ची जीवनी लिखी जाय, तो दु ख गाथाओ का एक भारी पोथा बन जाय। गालिब और अकबर यही रोना रोते-रोते मर गये। शकरजी और द्विवेदीजी (स्व० महावीरप्रसाद द्विवेदीजी) का भी यही हाल है। मैने द्विवेदीजी को 'प्रबन्ध-मजरी' और 'पद्म-पराग' अब भेजा था। बहुत दिनो से पत्र-व्यवहार बन्द था। उनका जो पत्र आया उसकी नकल भेजता हूँ। कौटुम्बिक व्याधियो से व्यथित है। भगवान् यम के आदेश की प्रतीक्षा कर रहे है। पढकर जी भर आया। साहित्य-सेवियो की जीवनी में दु ख-ही-दु ख भरा है। आप मेरी जीवनी की घटनाओ के हिंट्स माँग रहे है; क्या लिखूँ, कुछ हो भी। आपके पत्र से प्रेरित होकर मैने अपने जीवन की घटनाओ पर दृष्टि डाली तो पुराने ज़ख्म ताजा हो गये। कई घटनाओ की स्मृति ने तडपा

दिया, कवि की इस उक्ति का अनुभव करा दिया—

"वायनादानी कि वक्ते-मर्ग यह साबित हुआ,
ख्वाब था, जो कुछ कि देखा जो सुना अफ़साना था।"

रात-भर मे यही सोचता रहा। आपबीती लिखूँ तो क्या लिखूँ। कई आत्मीय और मित्रो के वियोग की दुःखदायक घटनाएँ, सिनेमा के चित्रो की तरह, आँखो के आगे फिर गई। भयभीत कर दिया। कही-से-कही पहुँचा दिया। कई घटनाओ पर लिखने को जी चाहने लगा। कुछ दिन जीवन और रहा तो कुछ घटनाओ पर लिखने का विचार है।

सन्-सवत् याद रखने मे मेरी स्मरण-शक्ति बहुत ही निर्बल है। जो मालूम हो सका है, सन्-सवत् के हिसाब से नोट करता हूँ। कोई बात ऐसी उल्लेख योग्य तो है नही, पर आपने जिस ढग से अनुरोध किया है, उसकी उपेक्षा नही की जा सकती। आप मुझे ख्वाहमख्वाह ठोक-पीट कर वैद्यराज बनाना चाहते हे, वर्ना 'हमारी ज़िन्दगी क्या और हम क्या' वाली बात है। मुझे तो इस तरह पब्लिक मे आते डर लगता है, पर देखता हूँ आप मुझे भी छापे मे छपाकर ही छोड़ेंगे।

आजकल मेरी मानसिक दशा बहुत ही निर्बल क्या दयनीय-सी हो रही है। रामनाथ की माता चार महीने से बराबर बीमार हैं, दशा चिन्ताजनक हो रही है। इससे चित्त किसी भी काम में नही लगता। न कुछ लिखा जाता है न पढा जाता है। उत्साह जाता रहा है। कभी-कभी तो द्विवेदीजी की तरह भगवान् यम के आदेश की राह बडी उत्सुकता से देखने लगता हूँ, पर इसमें भी सन्देह है कि उस दशा में भी कौन जाने क्या होगा!

"अब तो घबरा के कहते है कि मर जायेंगे,
मर के भी गर चैन न पाया तो किधर जायेंगे!"

एकेडेमी का लेक्चर इस हाल में किस तरह लिखा जाता? रह गया, उन्हे सूचना दे देता हूँ कि तैयार न हो सकेगा, मजबूरी है—

"क्या लिखे इन्सान और क्या पढ़ सके,
जी ठिकाने हो तो सब कुछ हो सके।"

काशी नागरी प्रचारिणी सभा के गत उत्सव पर जो भाषण कीबे साहब ने दिया था वह आपने पढा होगा, उसमें स्व० सत्यनारायणजी का उल्लेख बड़े अच्छे शब्दो में है। वर्तमान हिन्दी कविता पर भी अच्छे विचार प्रकट किये हे।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१००

राजामंडी, आगरा
१६-३-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

१४-३ का कार्ड आज मिला। माताजी के स्वर्गवास का हाल पहले ही मालूम हो चुका था, बड़ा दुःख हुआ। प्रिय पटेजी से परसों शाम बोर्डिंग में मिला था। क्या किया जाय, ईश्वर की मर्जी के आगे किसी की नहीं चलती। रो-धोकर बैठ रहने के सिवा चारा क्या है। सन्तोष कीजिए, सब्र कीजिए और क्या कहा जाय। पटे का विवाह अब जल्दी हो जाना चाहिए। आपकी शोचनीय स्थिति का ध्यान करके चित्त उद्विग्न हो जाता है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०१

C/O आर्यमित्र, आगरा
१-४-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

मैं अभी तक यहीं पड़ा हूँ। मेरा पिछला पत्र एक कटिंग के साथ मिला होगा। बड़े ही दुर्भाग्य की बात है कि प्रतापी विद्यार्थीजी सत्यानाशी हिन्दू-मुस्लिम समझौते की भेंट हो गये। समझौते के इस प्रयत्न में हिन्दुओं की अपार हानि हो रही है। कानपुर में तो यह समझौता बड़ा ही महँगा पड़ा; विद्यार्थीजी की हानि किसी तरह भी पूरी न होगी। यह दुर्घटना बड़ी ही हृदय-विदारक है। हा हन्त!

'विशाल भारत' में एक नाम बार-बार आता है 'अर्द्धेन्द्रकुमार'। शुद्ध नाम 'अर्द्धेन्दुकुमार' मालूम होता है। अर्धेन्दु शिवजी का नाम है। जिनके मस्तक पर आधा चन्द्रमा है। 'जगाने वाले झकोले' में 'खँडर' का 'खण्डहर' छपा है, जिसके पढ़ने में धचका लगता है। उर्दू वाले खँडर लिखते-बोलते हैं। जयचन्द्रजी का लेख अच्छा है। पारसनाथजी की भूल भी मजेदार है। हिन्दी के प्रथम समाचारपत्र की खोज आपने खूब की। पत्रोत्तर घर के पते पर दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०२

काव्य-कुटीर, नायक नगला
७-४-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

मैं परसों मकान पर पहुँचा हूँ। कल शाम के वक्त आपका कृपा-पत्र मिला। रास्ते में दो दिन कविजी (प० नाथूराम शंकर शर्मा) से मिलने में लगे। सम्मेलन के सभापतित्व का जो निर्णय हो गया, अच्छा ही है। हक तो प० श्यामविहारी मिश्रजी का था, या प० रामचन्द्र शुक्ल का था। 'सम्मेलनांक' के लिए समय थोड़ा रह गया है, खैर, अब तो गले पड़े ढोल को बजाना ही पड़ेगा। सम्पादकाचार्य (प० रुद्रदत्त शर्मा) के संस्मरण जैसे चाहिएँ न बन पड़ेंगे, फिर भी यथाशक्ति प्रयत्न करूँगा। संस्कृत पढ़ने की आवश्यकता पर भी चि० काशीनाथ से कुछ लिखवाऊँगा। संस्कृत पर काशीनाथ का लेख दस-पाँच दिन में ज़रूर भिजवा दूँगा। प० ब्रजमोहन दत्तात्रेय 'कैफी' पर कुछ लिखने के विचार से उनसे कुछ हिंट्स् मँगाये थे। कुछ मसाला लेकर वह एकेडमी के उत्सव पर प्रयाग भी पहुँचे थे, वहाँ उन्होंने मुझे मिलने के लिए भी बुलाया था। पर मैं वहाँ न जा सका। यदि उन्होंने कुछ मसाला और भेज दिया तो एक छोटा-सा लेख उन पर भी लिखूँगा। अप्रैल के अन्त तक लेख भेजने की कोशिश करूँगा। पारसनाथजी से एक लेख रवीन्द्र पर लिखवाइये। वह रवीन्द्र के विशेषज्ञ हैं, अच्छा लिखेंगे। हाँ, एक लेख बा० घासीरामजी, एम० ए० से ज़रूर लीजिए। आर्यसामाजिक विद्वानों में वह सबसे अच्छा लिखते हैं, बड़े सहृदय हैं। और भी कोई बात सूझेगी तो लिखूँगा। फरवरी के 'हंस' में ५४ पृष्ठ पर 'साहित्य का ऋण' शीर्षक मुंशी (श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी) के भाषण का सार है। बहुत अच्छा है। 'साहित्यांक' में उद्धृत कीजिए, मिल सके तो पूरा भाषण मँगवाकर उसका अनुवाद कीजिए, बहुत ही सुन्दर लेख है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०३

काव्य-कुटीर, नायक नगला
२९-४-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

२४-४ का कृपा-पत्र मिला। संस्कृत वाले लेख में एक बात छूट गई। बंगाल और युक्त प्रान्त के स्कूलों से संस्कृत एक प्रकार से निकाल दी गई है। इससे संस्कृत-प्रचार में भारी बाधा पहुँचेगी। इस पर आन्दोलन होना चाहिए। लेख में इस बात का उल्लेख कहीं कर दीजिए या सम्पादकीय नोट दे दीजिए।

श्रीयुत् कृष्णबल्देवजी की मृत्यु का समाचार सुनकर बडा दु ख हुआ। 'विशाल भारत' मे उन पर भी कुछ लिखिए और फोटो दीजिए। हिन्दी समार पुराने लेखको से खाली होता जा रहा है। यह भी दुर्भाग्य की बात है। श्रीयुत् बृजमोहन वर्माजी से मेरी ओर से सहानुभूति प्रकट कर दीजिए।

सम्पादकाचार्यजी (प० रुद्रदत्त शर्मा) के सम्बन्ध मे साहित्यांक में कोई नोट देना चाहे तो उनकी जन्म-तिथि मार्गशीर्ष १३ (त्रयोदशी) सवत् १९११ वि० थी। मास के पक्ष का उल्लेख नही मिलता। मृत्यु की तारीख 'मुसाफिर' आगरे में १७ नवम्बर सन् १९१९ लिखी है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०४

नायक नगला, बिजनौर
२२-५-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

सुना है, 'माडर्न रिव्यू' में कोई सम्पादकीय लेख हिन्दी के विरोध मे निकला है। सम्मेलन के दिनो में तो यह और भी बुरा हुआ। मालूम होता है कि यह बंगाली विद्वान् हिन्दी को राष्ट्रभाषा होना कभी स्वीकार न करेंगे। 'विश्वभारती' से मेरे पास एक पत्र आया था, पुस्तकें माँगी थी। मैंने उसके उत्तर में एक कार्ड भेजा था। दुर्भाग्य से पता हिन्दी मे था, कार्ड विना पढे ही मिलिन्दजी को मुरार के पते पर लौटा दिया गया। मिलिन्दजी ने उसे मेरे पास भेजा है, कार्ड भेजता हूँ। उस पर मिलिन्दजी ने जो कैफियत लिखी है, उसे ध्यान से पढिए और उस पर उचित कार्रवाई कीजिए। मुझे तो 'विश्वभारती' पर इस दुर्घटना के कारण क्षोभ है। मेहर साहब हिन्दी के भी प्रेमी थे। वेदान्त के असाधारण विद्वान् थे। महाकवि थे। सस्कृत के पण्डित थे। इन पर एक लेख 'विशाल भारत' में भेजूंगा। जबसे उनकी मृत्यु का दु समाचार पढा है, चित्त बडा ही खिन्न है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०५

नायक नगला, बिजनौर
१४-६-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका २-६-३१ का 'अदनोपवन' वाला पेन्सिली पत्र यथासमय मिल गया था। मैं बहुत दिनो से बराबर अस्वस्थ हूँ। पत्र लिखने में कष्ट होता है, इसलिए

आपके पत्र का समय पर उत्तर न दे सका। पटे के विवाह का निर्णय बहुत जल्दी मे हुआ इसी कारण आप वक्त पर सूचना न दे सके, यह तो मै पहले ही समझ गया था। खैर, विवाह सानन्द हो गया, यह खुशी की बात है। कल 'विशाल भारत' का साहित्याक मिला। इतनी देर से क्यो निकला, या मेरे ही पास देरी से पहुँचा ? अक अच्छा निकला, पर इससे भी अच्छा निकलना चाहिए था। डाक्टर ईश्वरीप्रसादजी से लेख आपने खूब लिया, बहुत अच्छा लिखा है। यदि आप अपने 'हमारा साहित्याक' नोट मे डा० लिखकर बात साफ न करते तो मै तो न समझ सकता कि श्री ईश्वरी प्रसाद कौन है। उनके नाम के साथ लेख-सूची मे, शीषक के नीचे डाक्टर, पण्डित, शर्मा कुछ नही लिखा। प्राचीन भारतीय ढग के अनुसार तो यह निरा गँवारपन है, अग्रेजी सभ्यता मे चाहे यह बात अच्छी समझी जाती हो। कम-से-कम ऐसे प्रतिष्ठित लेखक के नाम के साथ तो पूरी उपाधियाँ देनी चाहिएँ, इसका पाठको पर प्रभाव पडता है। नाम की महिमा से ही प्रभावित होकर बहुत-से पाठक लेखो को ध्यान से पढते है, फिर डाक्टर ईश्वरीप्रसादजी तो 'विशाल भारत' के पाठको के लिए नये थे, उनका नाम ही लिखना ठीक न हुआ। यह मेरी राय है, सम्भव है, आपकी राय में यही 'गँवारपन' हो जो मै लिख रहा हूँ।

श्री वाजपेयीजी का लेख भी मौके का है। वाजपेयीजी से पुराने साहित्यिको के संस्मरण और लिखाइए। वाजपेयीजी ने 'स्वतत्र' में सम्मेलन पर लिखते हुए सभापति के स्वागत-सत्कार मे एक बात बडे मजे की लिखी थी कि रत्नाकरजी को भी ऐसे स्वागत-सत्कार की प्राप्ति का अवसर इससे पहले कभी न प्राप्त हुआ होगा। वाजपेयीजी जो लिखते है, खरी बात लिखते है—"रत्नाकरजी का भूधराकार शरीर फूलो के बोझ से दब गया था" यह बात वाजपेयीजी के उसी लेख से मालूम हुई थी। 'रत्नाकर' जी का भाषण खासा हुआ। मुझे तो वह आशातीत अच्छा मालूम हुआ। उनसे ऐसी आशा न थी। टॉलस्टॉय ने 'डार्लिंग' की समालोचना में बाइबिल की जिस मनोरजक कहानी का उल्लेख किया है, मुझे तो वही बात रत्नाकरजी के इस भाषण पर 'लागू' होती मालूम होती है।

वाग्देवता ने अभिशाप के बदले आशीर्वाद दिलवा दिया, यानी कविता और भाषा के बारे मे उन्होने साफ-साफ बातें कहने का साहस दिखा दिया। आपने यह नया सिलसिला खूब शुरु किया है कि कौन कैसे पत्र लिखता है। यदि इस प्रसग में मै आपके पत्र-लेखन की विशेषता पर कुछ लिखूँ तो उसमें यह जरूर लिखूँ कि चतुर्वेदीजी सब पत्रो का उत्तर तो कभी देते ही नही। जिस पत्र का उत्तर देते भी है तो बहुत दिनो बाद, जब उस उत्तरणीय पत्र की बातें या तो बासी हो जाती है या उन्हे भूल जाती है। इसलिए आधी-तिहाई बातो का अधूरा उत्तर देते है, नि सन्देह जिस बात

का उत्तर देते है वह पर्याप्त रोचक और काफी अच्छा होता है इत्यादि।

सम्मेलन के मौके पर मैने आपको लिखा था कि मेहर साहब की मृत्यु पर शोक-सवेदना प्रकट करने की याद सम्मेलन वालो को दिला दीजिए। पर शोक-सूची मे उनका नाम नही देखा गया। मेहर साहब सस्कृत, वेदान्त के अद्वितीय विद्वान् थे।

आपने लिखा था कि प्रो० पूर्णसिहजी का फोटो आपको मिल गया है, वह लेख के साथ छपेगा, पर न छपा। खैर, और सुनिए प० मनीशचन्द्र राय एम० ए० की मृत्यु हो गई! उनके पुत्र का पत्र भेजता हूँ, इसे एक बार पढ जाइये। उन पर कुछ लिखा जाना चाहिए। उनके पुत्र को मैने आपके पास फोटो और हिस्ट्री भेजने को लिखा है। मै भी कुछ लिखूंगा। बडे अच्छे विद्वान् थे। सरलता-सहृदयता की मूर्ति थे। अफसोस न रहे! उर्दू लेखको मे आज़ाद, नजीर अहमद शिब्ली, अमीर मीनाई, अकबर इत्यादि के पत्र-समूह पुस्तकाकार छपे है, जिनमें किसी-किसी की पृष्ठ-सख्या ५०० तक है। हिन्दी मे ऐसा कोई उदाहरण नही।

द्विवेदीजी (प० महावीरप्रसाद द्विवेदी) के ५०० से कुछ अधिक पत्र मेरे पास सुरक्षित है। और लोगो के पास भी होगे। किन्ही को प्रेरणा कीजिए कि वे द्विवेदीजी की पत्रावलि प्रकाशित कर दे। अस्तु गर्देजी के पत्र मे किसी दर्शक ने सम्मेलन के अधिवेशन का बडा ही मनोरजक वर्णन छपाया है. खासकर जिज्ञासु के साथ का प्रश्नोत्तर तो बहुत ही सुन्दर है। उसके लेखक कौन है? मालूम करके उन्हे मेरी ओर से बधाई दीजिए। बहुत अच्छा लिखा है, कमाल किया है।

सम्मेलन खूब सफल हुआ, इसके लिए गागेयजी, कुमारजी और सबसे बढकर बा० गोकुलचन्द्रजी धन्यवादाई है। श्री गोकुलचन्द्रजी का चित्र आपने नही दिया, शायद इसलिए कि वह 'दुर्भाग्य से' धनवान् है और धनवानों की प्रशसा करना आपकी नीति के विरुद्ध है, पर उसका उल्लेख तो दानी के रूप में सिद्धान्त की रक्षा करते हुए हो सकता था। और फिर धनवानो की प्रशसा तो महात्मा गाधी भी समय-समय पर जी खोलकर करते रहे है, पर शर्त यह रहती हैं कि वे चर्खा चलाते हो, खद्दर पहनते हो और उनके चर्खापन्थ में मोटी-मोटी रकमें देते हो। १५००) की थैली पाकर वह नवाब भूपाल को रामराज्य के शासन का सार्टिफिकेट दे सकते है। आतिथ्य-सत्कार से सतुष्ट होकर श्रीमती अन्सारी को 'आदर्श गृहिणी' की पदवी प्रदान कर सकते है। और नही तो महात्माजी के उदाहरणो से 'अनुप्राणित' होकर ही आपको श्रीगोकुल-चन्द्रजी का चित्र और चरित्र प्रकाशित करना चाहिए था, उनके हिन्दी-हित के नाते से। जो कुछ हो, इस अक मे श्री पूर्णसिहजी के और गोकुलचन्द्रजी के चित्र का अभाव मुझे बहुत खटका। मेरी यह बात आपको भी इसी तरह खटके। मुझे श्रीनिवास शास्त्री का पत्र बहुत पसन्द आया। बातें और भी बहुत लिखनी थी पर अब बन्द करता

हूँ। थक गया, गरमी इतनी बरस रही है कि फाउंटेनपेन की स्याही सूखकर जमने लगती है। इसीलिए पेन्सिल से लिखा है। किसी पत्र मे पढा है कि उस दिन कलकत्ते मे कोई सभा सस्कृत-प्रचार के सम्बन्ध में हुई थी, जिसमें कोई ट्रैक्ट वितीर्ण हुआ था। यदि ऐसी 'दुर्घटना' हुई हो तो वह ट्रैक्ट कही से लेकर भेजिये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०६

नायक नगला, चांदपुर
२२-६-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

कल उज्जैन से मेरे पास शोक-सूचना का पत्र आया है। इस दुर्घटना से बडा ही दुख हुआ। सेठीजी वास्तव मे बडे ही सहृदय उदार सज्जन हैं। उन पर यह विपत्ति का वज्रपात हो गया! इससे हृदय को बड़ी वेदना पहुँची है। ऐसे अवसर पर शोक-सवेदना का पत्र लिखते भी डर लगता है, क्योकि शोक-दुर्घटना का उद्बोधक होने के कारण ऐसा पत्र भी पीडा पहुँचाने का कारण हो जाता है। फिर भी लिखना ही पड रहा है। अस्तु, स्वर्गीय श्री सतीशचन्द्र रायजी के सुपुत्र श्री भवानीचरणरायजी एम० ए० का इस बीच मे एक पत्र और मिला है। वह भी भेजता हूँ। इस पत्र में 'विशाल भारत' के साहित्याक पर उन्होने सम्मति भी प्रकट की है। श्री भवानीचरणजी बहुत सहृदय और उदार सज्जन प्रतीत होते है। अपने पिता के समान यह भी हिन्दी के भक्त है। इनसे बहुत कुछ आशा की जा सकती है। यह प्रोत्साहन के पात्र है।

द्विवेदीजी के पत्र की नकल पढी। पत्र मनोरजक है, खासकर उन्होने वर्माजी के शेर मे 'सौवार' की जगह 'सौसाल' की जो इस्लाह की है, वह बहुत ही मार्के की है। वर्माजी का 'माधुरी' वाला लेख मैने भी पढा था। लेख नि सन्देह अच्छा है। मुझे तो सम्मेलन के सम्बन्ध में वर्माजी का 'विजय' वाला लेख उनके सब लेखो में ज्यादा पसन्द आया। बधाई के उपलक्ष्य मे उनकी कमर ठोक दीजिए। स्वस्थता और निश्चिन्तता प्राप्त होने पर मै 'विशाल भारत' के लिए कुछ लिखूंगा। 'विशाल भारत' का साहित्याक बढिया रहा, उस पर भवानीचरणजी की राय पठनीय है। आपके "मैं कैसे पत्र लिखता हूँ" शीर्षक लेख को उन्होने बहुत पसन्द किया है। आजाद, हाली, अकबर और शिबली आदि के प्रकाशित पत्र-सग्रहो का पता दो-चार दिन बाद देखकर लिखूंगा। द्विवेदीजी को अपने साहित्यिक पत्रो के प्रकाशन मे आपत्ति तो न होनी चाहिए। पत्र लिखकर उनसे पूछिये तो, क्या कहते है?

'विशाल भारत' की सेवा मैं किसी प्रकार के प्रत्युपकार की दृष्टि से नही करता। आपसे और पत्र से जो मुझे प्रेम है, वही कभी-कभी कुछ लिखा लेता है। सम्मेलन को वास्तव मे जो आशातीत सफलता प्राप्त हुई है, वह बहुत ही आश्चर्यजनक है। स्व० प्रो० पूर्णसिंह का चित्र 'विजय' के किसी पिछले अंक मे छपा है, उसी ब्लाक को 'विशाल भारत' में छाप दीजिए। मेहर साहब यद्यपि हिन्दी के लेखक नही थे, पर हिन्दी के मर्मज्ञ भक्त थे। संस्कृत वेदान्त के भी वह अच्छे विद्वान् थे। प० लक्ष्मण शास्त्रीजी का चित्र और चरित्र गर्देजी से लिखाकर अवश्य प्रकाशित कीजिए। श्री गोकुलचन्दजी के दान का उल्लेख विशेष रूप मे एक नोट मे कीजिए। गोकुलचन्दजी ने हिन्दी के लिए जितना दान दिया है उतना किसी ने नही दिया। वह हिन्दी के लिए आजकल के 'कर्ण' है। कवि-सम्मेलन के सम्बन्ध मे मैं आपके विचारो से सहमत हूँ। 'विशाल भारत' मे प्रकाशनार्थ अपने विचार इस वक्त नहीं लिख सकता, यह पत्र भी काशीनाथ से लिखाना शुरू किया था।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०७

नायक नगला
२५-६-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

पहले पत्र का उत्तर चाँदपुर से भेज चुका हूँ। उसके बाद जून का 'विशाल भारत' मिला। इस अंक में डा० सुनीतिकुमारजी चट्टोपाध्याय का 'हिन्दी की उत्पत्ति' लेख बहुत ही अच्छा है। भाषाओ की बडी ही सुन्दर मीमासा है। यह लेख तो पृथक् पुस्तकाकार प्रकाशित होकर हिन्दी वालो के कोर्स मे नियत होना चाहिए। हिन्दी के सम्बन्ध में ऐसा तथ्यपूर्ण लेख मैंने आज तक नही पढा था। मुझे तो यह लेख इसलिए पसन्द आया कि भाषाओ की उत्पत्ति के विषय में मेरा भी यही मत है (यद्यपि मैं अंग्रेज़ी ढग से इस प्रकार अपने विचार प्रकट नही कर सकता था)। कलकत्ता-सम्मेलन की मैं तो इसे सबसे बडी सफलता समझता हूँ कि ऐसा महत्त्वपूर्ण निबन्ध हिन्दी में हिन्दी पर लिखा गया। इसका खूब प्रचार होना चाहिए। चट्टोपाध्यायजी इसे ज़रा और पल्लवित कर दे (उदाहरण आदि देकर) तो और भी अच्छा हो। चट्टोपाध्यायजी से एक ऐसा ही निबन्ध संस्कृत के सम्बन्ध मे भी लिखने का अनुरोध कीजिए। यह तो भाषा-विज्ञान के अद्भुत विशेषज्ञ मालूम होते है। हिन्दी की उत्पत्ति पढकर मै तो गद्गद् हो गया। जिस चीज़ की खोज में था वह मिल गई। चट्टोपाध्यायजी कलकत्ते मे रहते है? उन्हे मेरी हार्दिक बधाई और धन्यवाद पहुँचाइए। श्री जयचन्द्रजी का

लेख भी अच्छा है। स्वर्गीय सतीशचन्द्रजी की चिट्ठी मे गणेशजी के चित्र की मार्मिक मीमासा है, उनकी जीवनी के साथ यह पत्र भी रहे। इस अक में सम्पादकीय विचार भी अच्छे है। · · · 'रियासती प्रजा की समस्या' का पूरा अनुवाद आपने छाप दिया यह अच्छा हुआ। इसका सार मात्र दूसरे पत्र में भी पढा था पर तृप्ति न हुई थी। खादी वाला लेख न दिया जाता तो भी कुछ हर्ज न था, खादी की महिमा से तो सारे पत्र भरे ही रहते है।

श्री मुन्शी के उस गुजराती भाषण का अनुवाद आपने न दिया जिसके बारे मे मैने आपको लिखा था। 'लम्बकर्ण' में नुकतो की बहुत-सी भयानक गलतियाँ हो गई है। जैसे मिजाज १, खोज ३४, धोखा ११०, जल्दी १४ इत्यादि। नुकता लगाने की प्रथा उठा देनी चाहिए, हिन्दी में गलतियाँ हो ही जाती है। चतुप्रेहर ५३, यश विमुख ६९-चतु प्रहर, यशोविमुख चाहिए था। चान्द्रोयन ४६, चान्द्रोयण, शौण्डिक की साक्षी, तस्कर की साक्षी, का साक्षी चाहिए. साक्षी (४८) गवाह को कहते है, गवाही को नही। कही-कही बगाल-बिहारवत् लिंग प्रत्यय भी है, अच्छी पुस्तक में ऐसे दोष खटकते है। सस्कृत न जानने से ऐसी भूले होती है। आपने हाली आदि के पत्र-सग्रह का अता-पता पूछा था सो इस प्रकार है—मकतूबाते हाली, पहला हिस्सा १), दूसरा ३), खतूत शिबली १), अमीर मीनाई २), आजाद १।।)। ये पुस्तकें आपको अल्नाज़िर बुक एजेन्सी, लखनऊ से मिल सकेंगी। अकबर के खतूत भी वही से मिलेंगे। १।।) मूल्य है।

द्विवेदीजी से पत्र-सग्रह-प्रकाशन के बारे में आपने पूछा ?

पुस्तको पर कुछ सम्मतियाँ छपवा ली थी, भेजता हूँ। इनमें 'विशाल भारत' की समालोचना न जा सकी। उस वक्त आगरे में मिली न थी।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०८

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
ता० २१-१०-३१, बुधवार

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आशा है, आप सकुशल आराम से सोते हुए यथासमय घर पहुँच गये। अफसोस यही है कि आपसे बातें करने का बहुत ही कम मौका मिला। बहुत-सी जरूरी बाते रह गईं, जो अब याद आ रही है। 'प्रेम-प्रपच' की चिट्ठियाँ तो 'विशाल भारत' मे पढ ही चुका था, पुस्तक-परिचय और तुर्गनेव की जीवनी रात पढी। बहुत सुन्दर लिखी है। तुर्गनेव के चरित्र का तो शब्द-चित्र खीच दिया है। मुझे याद पडता है इन

पत्रो की समाप्ति पर टॉलस्टॉय की लिखी 'फास्ट' की समालोचना छपी थी। वह इसके साथ और जोड दी जाती तो सोने पर सुहागा हो जाता। 'फास्ट' का परिचय भी पाठको को मिल जाता। वह समालोचना मुझे बहुत पसन्द आई थी। मैने उसकी उस समय भी दाद दी थी। 'बगवासी' के शब्दो मे "आपको याद रह सकता है"। उसका इसके साथ न होना मुझे तो अखर रहा है। खैर, अब क्या हो सकता है, दूसरे सस्करण मे ध्यान रखिए। 'प्रेम-प्रपंच' के अनुवादक प० जगन्नाथप्रसादजी से तुर्गनेव की किसी छोटी-सी सुन्दर पुस्तक का अनुवाद और कराइये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०६

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
१२-११-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आप ऊपर ही ऊपर उड गये। यहाँ आपके इन्तज़ार मे लोग 'वासकसज्जा' बने राह देखते रहे। मामूली आदमी ही नही, साक्षात् परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी सत्यदेवजी एक कविता के स्वयवृत स्वामी यानी कवि। उत्सुक रहे। रात मे रास्ता पूछते-पूछते यहाँ तक पहुँचे। जब बेचारो को मालूम हुआ कि आप नही आये तो बस **"खूं टपक पड़ा निगाह-ए इन्तज़ार से !"** अपने इस अत्याचार पर विचार तो कीजिए। उनकी बीमार आँखो को यह असह्य सदमा सहना पडा। उनकी बेकसी का यह सब्र किस पर पडेगा ?

खैर क्या किया जाय। पर इस वादाख़िलाफी की उम्मीद न थी।

इस साल सम्मेलन का सभापति कौन होगा ? आप 'सभापति-मेकर' है। क्या इरादा है ? हक तो यह है कि हक वाजपेयीजी का है। कुछ उद्योग कीजिये। समय थोडा है। 'सुधा' में एक नोट निकला है, पढा होगा। 'रत्नाकर' जी पर जो लेख आपने लिखा था, उस पर किसी काशीवासी ने कुछ ऊल-जलूल 'भारत' में लिखा था वह भी देखा होगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११०

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग
ता० २१-११-२१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आज 'विशाल भारत' पहुँच गया। श्रीरामजी का लेख और 'शब्दो की व्युत्पत्ति',

दो लेख मिलते ही पढ डाले। श्रीरामजी तो उत्तरोत्तर गजब ढा रहे हैं। बन्दूक से बढकर इनका निशाना बैठता है। पढने वाला तडपकर रह जाता है। नजर से बचाने के लिए इनके डण्ड पर भैरवजी का गंडा बाँध दीजिए। उनका यह शिकारनामा कब तक छपेगा, आजकल कलकत्ते मे क्या कर रहे हैं ? 'शब्दो की व्युत्पत्ति' वाला लेख भी बहुत सुन्दर है। 'शब्द-सागर' की भूलो का भाँडा फोड दिया है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१११

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
१८-१२-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आज जब आपको रजिस्टर्ड पैकट रवाना कर चुका तो चार बजे के करीब विशाल भारत' ने दर्शन दिये, यानी प्रेस की डाक मे पधारे। कल इण्डियन प्रेस मे ठा० श्रीनाथसिंहजी के पास थोडी देर यो ही उलट-पलट कर देखा था, ऐनक यहाँ भूल गया था, इसलिए कठिनता से हैडिंग देख सका था। मै रात को इतमीनान से देखना चाहता था कि यहाँ अचानक एक उपद्रव खडा हो गया, यानी बाजे बजाने की कन्सर्ट पार्टी आ डटी, एक सज्जन सितार के ऐक्सपर्ट, दूसरे वेला के प्रवीण बजगर, तीसरे तबले के मास्टर, चौथे ताल और दाद देने में पटु और मजा यह कि सबके सब ग्रेजुएट और एल-एल० बी० । इनमें पहले हिन्दुस्तानी और बाकी बगाली, सबके सब ब्राह्मण, एक द्विवेदी और बाकी मुकर्जी। मै 'विशाल भारत' पढना चाहता था उधर सगीत शुरू हो गया। मुझे पढने का व्यसन तो है ही पर सितार सुनने के लोभ को भी सवरण नही कर सका। पार्टी मे सम्मिलित न होना शिष्टाचार के विरुद्ध समझा, मडली के पास बैठकर सुनना ही पडा। पर हाथ मे 'विशाल भारत' लेकर बैठा। एक साहब बोले, "इसे रख भी दो, सुनोगे कि पढोगे ?" मैने कहा, "दोनो काम साथ-साथ करूँगा। साहित्य और सगीत के आकर्षण की तुलनात्मक परीक्षा ही हो जायगी, देखूंगा किसमें अधिक आकर्षण है।" मुझे जब कभी ऐसा मौका मिल जाता है कि कोई अच्छी पुस्तक—वह भी काव्य पढता हूँ और पास ही सगीत हो रहा हो तो एक अद्भुत आनन्द आता है। काव्य मे जिसे उस समय देख रहा हूँ, नई-नई बाते सूझने लगती है। हाँ, हारमोनियम से मुझे कुदरती नफरत है। अच्छे-अच्छे बजाने वालो को सुना है, पर मुझे कभी अच्छा नही लगा, खासकर सितार, सारगी या वेला के साथ तो बहुत ही बुरा लगता है। खैर पहले सितार की गत बजी, उधर मैने आपका सम्पादकीय पढना शुरू किया। बडे मजे मे पढता रहा, और आपके जोरे कलम की दाद देता रहा। 'सारनाथ में क्या देखा'

खूब लिखा है, मार्के की टिप्पणी है। श्री शकराचार्य पर आक्रमण वाली वात मुझे भी वहुत ही वेतुकी और मूर्खतापूर्ण मालूम हुई। मै आपके साथ मिस्टर (धर्मपाल) से मिलने गया होता तो उन्हे इतना फटकारता कि याद रखते, मैने पत्रो मे जव उनके भाषण की रिपोट पढी थी तो वहुत वुरी मालूम हुई। शकराचार्य का मुकावला तो ससार-भर के दार्शनिक नही कर सकते। मिस्टर (धर्मपाल) तो उनकी वातें समझेंगे भी नही। खैर, सितार के वाद वेला की वारी आई। वेला सितार मे भी अच्छा वजा। वडा तैयार हाथ था। उस समय मैं नन्ददासजी वाला लेख देख रहा था, कान उधर लगे थे और आँखे लेख मे, मन द्रुत गति से दोनो ओर वरावर काम कर रहा था। कई वार दो-चार मिनट के लिए आँख को भी कान का साथ देना पडा। गज इस सफाई से फिर रहा था, हाथ इस तेज़ी से चल रहा था कि न देखना अन्याय था। वेला के साथ-साथ मैने नन्ददासजी को समाप्त कर डाला। नन्ददासजी की कविता मुझे वहुत पसन्द है, आपने खूव लिखा है। तवीयत खुश हो गई। 'भारत मित्र' प्रेस की छपी र सपचाध्यायी की एक प्रति मेरे पास है, जो स्वर्गीय श्री सत्यनारायणजी ने मुझे दी थी। उस पर उनके पेंसिल से लिखे नोट भी है इसीलिए मैने उसे वडे प्यार से रख छोडा है। सत्यनारायणजी ने उसी प्रति से सव रासपचाध्यायी वडे ही मधुर स्वर में पढकर सुनाई थी। उस पुस्तक को जव देखता हूँ तो वह दृश्य आँखो में फिर जाता है, हा !

वेला की जव द्वितीयावृत्ति हुई तव मै उजडी वाटिका देख रहा था, वह कविता मुझे वहुत पसन्द आई। यह 'चकोरी' देवी कौन है ? अच्छा लिखती है। मैने पहली वार ही इनकी कविता पढी है। तीसरे छन्द की अन्तिम पक्ति पढते वक्त धक्का-सा लगता है। उसमें छन्दो भग या ध्वनि-भग है। मात्राएँ तो गिनी नही पर धक्का जरूर लगता है, ज़रा पढ देखिए।

हाँ रत्नाकरजी के उस कवित्त का गोप्य अन्तिम चरण क्या है ? ज़रा हम भी तो सुनें। श्री चिन्तामणि के सुपुत्र श्रीयुत् वालकृष्णरावजी अपनी पुस्तक मुझे दे गये है। जिस वक्त दोपहर को वह यहाँ पुस्तक देने आये उस दिन मेरी तवीयत अच्छी न थी, लेट रहा था। वह कुछ देर वैठकर और रघुनन्दनजी को पुस्तक देकर चले गये, मुझे किसी ने सूचना नही दी। फिर प० केशवदेवजी शर्मा की मार्फत उनकी इच्छा मालूम हुई कि मै उस पर सम्मति लिख दूँ। मेरा विचार उस पर एक नोट 'विशाल भारत' में भेजने का है। वहुत अच्छी कविता है। वालकृष्णरावजी प्रोत्साहन के पात्र है। अस्तु, कन्सर्ट पार्टी की एक वात लिखना भूल गया। सितार और वेला के वाद हारमोनियम का नम्वर आया तो मैने कहा कि भई, अँगूर खिलाकर यह निम्वोलियाँ क्यो खिलाते हो ? **"जीभ निवौरी क्यो लगे वौरी ! चाखि अँगूर"** सितार आदि वाजो के लिए यह हारमोनियम भी वैसी ही वला है जैसी तुलसीदास की रामायण के लिए राधेश्याम

की रामायण। भारतीय सगीत कला को इस हारमोनियम ने बडी हानि पहुँचाई है।

पुनश्च .

१७-१२-३१ के 'भारत' में तीसरे पेज पर एक लम्बा लेख 'हिन्दी के विकास में बाधा' न पढा हो तो पढ लीजिए, आपको सम्पादन-कौशल का सार्टिफिकेट भारत सरकार से मिला है, बधाई है बधाई !!!

भारत की ढिठाई पर प्रहसनात्मक लेख वर्माजी को लिखना चाहिए। रोग बढ रहा है, इलाज होना चाहिए।

'श्याम-सगाई' सचमुच सुन्दर कविता है। मैंने पत्र लिखने के बाद फिर पढी। सताईसवे पद्य की दूसरी पक्ति ठीक नही मालूम होती। 'जोरी' से पहले 'ये' या 'यह' हो और 'विधाता' की जगह 'विधना' हो तो शायद ठीक हो जाय।

श्री सम्पूर्णानन्दजी के विषय में लिखते हुए उपसहार में जो कुछ लिखा है उससे मै पूरी तरह सहमत हूँ। साहित्य-सेवी का सैनिक बनना उचित नही।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

११२

प्रयाग

१८-१२-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

उस दिन जो पत्र भेजा है, पहुँचा होगा। मै कल प्रातःकाल आगरे जा रहा हूँ। वहाँ से सम्भव है, वृन्दावन-गुरुकुल के और सम्मेलन के उत्सव पर झाँसी चला जाऊँ। २५ ता० तक तो आगरे जरूर ठहरूँगा। बलिया के ठाकुर गुरुभक्तसिंहजी 'भक्त' कवि यहाँ आये थे। अपनी पुस्तको पर मुझसे सम्मति लिखवाई है। उनका चित्र, वह सम्मति, पुस्तकें और एक कविता 'विशाल भारत' के लिए भेज रहा हूँ। चित्र, सम्मति और यह कविता एक ही अक में छाप दीजिए। उनकी पुस्तक भी पढ लीजिए।

कल ठाकुर श्रीनाथसिंह 'बालसखा'-सम्पादक के पास नया 'विशाल भारत' देखा, यहाँ अभी नही आया, आगरे जाकर पढूँगा।

ठाकुर श्रीनाथसिहजी ने 'बालसखा' के विशेषाक के लिए मुझसे एक लेख लडकपन की एक घटना पर लिखाया है। लेख उन्हे पसन्द आया। लडकपन का एक चित्र भी मांगने लगे। सन् १८९५ के एक चित्र का ब्लाक आपने बनवाया था, उसी का छपा हुआ एक चित्र उन्हे दे रहा हूँ। यदि वह उस ब्लाक को मांगें तो आप उनके पास भेज दे। काम होने पर लौटा देंगे। उत्तर आगरे के पते पर।

पुनश्च :

हाँ, 'भारत' मे इस हफ्ते फिर आपको याद फरमाया है जनाबे वाजपेयी ने। आप नाहक लोगो की तारीफ कर-कर के हिन्दी के विकास मे बाधा पहुँचा रहे हैं, बार-बार चेतावनी देने पर भी बाज नही आते। अपने मित्रो की तारीफ ही करनी है तो उस तरह कीजिए जैसी जनाब वाजपेयी अपने मित्रो की लबी-लबी लेखमालाओ में करते है। आप न किसी की शॉ (बर्नार्ड शॉ) मे समानता सिद्ध करते है न गैक्सपीअर से, न रोम्याँरोलाँ से। इसी से तो हिन्दी के विकास मे बाधा पहुँचती है! वाजपेयीजी का ('भारत' के) अनुकरण कीजिए तो एक बात भी हो। बेचारे भवानीदयाल संन्यासी पर भी भारत वाले बरस पडे हैं। आप झाँसी-सम्मेलन मे जायेंगे या नहीं ?

भट्टजी के पास लिपि-समीक्षा की आलोचना वाला अक भेज दीजिए। उत्तर दे सके तो आगरे के पते पर दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११२

राजामडी, आगरा
२३-१२-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

१८-१२ का कृपा-पत्र कल यहाँ मिला। मै प्रयाग से २०-१२ को चलकर उसी दिन यहाँ आ गया था। प्रयाग में एक रजिस्टर्ड पैकट और एक लिफाफा और भेज आया था। पहुँचा होगा। आपका पत्र पढकर सन्तोष हुआ कि आप ठीक परिणाम पर पहुँचे है। मै तो पहले ही से कहता आ रहा हूँ कि लातो के भूत बातो से नही माना करते। अस्तु, अब आप रास्ते पर आ गये। उसे भी रास्ते पर लाया जा सकेगा। हरिशकरजी एक लेख शीघ्र ही भेजेंगे। मेरा परामर्श भी उसमे होगा। कार्तिक की 'सुधा' मे श्रीयुत् सुधीन्द्रकुमार एम ए., एल-एल. बी का एक 'साहित्यिक दलबन्दी' नोट छपा है। उसे 'विशाल भारत' में अवश्य ही उद्धृत कर दीजिये। वह दम्भगढ पर बम्ब का गोला है। मैने पहले भी इस ओर आपका ध्यान दिलाया था। जनवरी के अक में उसे दे दीजिए। प्रारम्भ के मगलाचरण की चीज है। आप पढेंगे, तो खुश हो जायँगे। 'लोकमान्य' का नोट देखा, अच्छा लिखा है। हरिशकरजी 'आर्यमित्र' में भी लिखेंगे। आप गोलाबारी शुरू कर दीजिए। सब लोग साथ देगे। हो सके तो कोई नोट जनवरी के लिए भेज देने का प्रयत्न करूँगा। मेरा स्वास्थ्य अभी ठीक नही हुआ। अभी एक ज़रूरी काम से हरिशकरजी ने तार देकर बुला लिया है,

आना पड़ा। २-१-३२ के बाद यहाँ से मकान जाने का विचार है। कल प्रिय पटेजी से जाकर मिला था, आज वह भी आये थे। प्रसन्न हैं। पढ़ने में लगे हैं। मैंने उन्हे संस्कृत पढ़ने का परामर्श भी दिया है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११४

राजा मंडी, आगरा
१२-१-३२

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

मेरे कई पत्रो की पहुँच तक आपने नही लिखी। खैर, आज अभी चि० पटे (प० बनारसीदास चतुर्वेदी के अनुज श्री रामनारायण चतुर्वेदी) से यह मालूम हुआ। बड़ी चिन्ता हुई कि आप ऑल इण्डिया लीडर बनने का बाँधनूँ बाँध रहे हैं। यानी जेल-यात्रा की तैयारी कर रहे हैं। जरा सोच-समझकर! जेल से बाहर रहकर भी तो बहुत कुछ काम किया जा सकता है। आपने कई बार किसी प्रसिद्ध विद्वान् का मत दोहराया है कि जो साहित्य-सेवी बन सके उसे पॉलिटिक्स मे न पड़ना चाहिए। अभी पिछले अक मे आप सम्पूर्णानन्दजी के बारे में लिखते हुए इस बात को दृढता से दोहरा चुके हैं, फिर यह सनक सहसा क्यो सवार हो गई? परमात्मा आपको सद्बुद्धि प्रदान करे। ऑल इण्डिया लीडर बनने की लालसा के दौरात्म्य को दमन करें। हरये नम।

आप तो प्रोपेगण्डास्त्र माँज रहे थे? आप जेल चले गये तो 'विशाल भारत' कहाँ जायगा, यह भी सोचा है? आप जेल न जायँगे तो देश का कुछ भी काम बन्द न होगा पर जेल जाने पर 'विशाल भारत' जरूर बन्द हो जायगा और कई अनर्थ होगे। आप जेल कब जाते हैं, और कहाँ से जा रहे हैं? हरिशकरजी कहते हैं कि जेल जाना ही है तो आगरे से जायें और मेरी तो यह राय है कि कहीं से भी न जायें। साहित्य के द्वारा ही देश-सेवा करते रहे। 'विशाल भारत' का बन्द हो जाना सचमुच बड़े दुर्भाग्य की बात होगी और साहित्य-हत्या आप ही के सिर होगी। 'विशाल भारत' फिर जारी न हो सकेगा। सब बातें खूब सोच-समझकर इस आग में कूदिये। जल्दी न कीजिए। आपका यह विचार सुनकर मै बहुत उद्विग्न हूँ। मुझे तो आपका यह विचार किसी भी दृष्टि से उचित नहीं प्रतीत होता। जल्दी न कीजिए। 'विशाल भारत' पर ही दया कीजिए, हम लोगो पर न सही।

आपके इस विचार से चकित, स्तम्भित एव भीत
पद्मसिंह शर्मा

११५

राजामण्डी, आगरा
गणेश चतुर्थी, म० १९८८ भौम
(२६-१-३२ स्वतन्त्रता दि०)

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका कृपा-पत्र यथासमय मिला था, जिसकी पहुँच हरिशंकरजी के कार्ड मे लिख दी थी। मैं इस बीच मे एक बखेड़े मे फँसा था इसलिए पत्र न लिख सका, मजबूरी थी। आप तो मेरे कई पत्रो को हजम कर गये, डकार तक न ली यानी पहुँच तक न लिखी, खैर अपनी आप जानें। मैं जिस झंझट में था उसका 'प्रूफ' आपके पास भेज रहा हूँ। इसे अभी खुद ही देखिए, बहिरग अनधिकारियों से छिपाकर। परिशिष्ट को आप शुरू से आखिर तक ध्यान से देख जाइए, इसमें आपको एक नवीनता मिलेगी। मैंने इसमे कुछ ऐसे लेखको पर प्रकाश डाला है जो दलबन्दो की आँधी के कारण छिपे हुए है, जिन लोगो ने कन्वेसिंग, प्रोपेगेण्डा या दलबन्दी के सबब अपना सिक्का बिठा रखा है उन्ही का गुणगान होता रहता है। चुपचाप काम करने वालो को कोई नहीं पूछता। इसमें आपको कई नाम मिलेंगे (विषय-सूची में देखिए), परिशिष्ट के २०वें नबर को खासतौर पर देखिए, और देखिए कि निशाना ठीक बैठा है कि नही। बात 'घणी चोखी' बावन तोले पाव रत्ती—यानी बिल्कुल सही और सच है। फिर ' उछलती-कूदती ' भाषा का लाजवाब जवाब भी है। उस उछलती-कूदती भाषा की बात को उस वृथा पुष्ट पोथे से लेकर पोथे वाले के चेलो ने कई पुस्तको मे दोहराया है—'शृंग ल रोदन न्याय' का परिचय दिया है—इसलिए इसकी और भी जरूरत थी, आप ही कहिए थी या नही ? मै तो समझता हूँ—थी, और जरूर थी, आपने तो प्रोपेगेण्डा-अस्त्र माँज-मूँजकर फिर भोथरा कर दिया, सोडावाटर का उबाल आकर रह गया पर मैं इस अनर्थ और अत्याचार को यो चुपचाप सह लेना नितान्त अनुचित समझता हूँ। प० श्रीरामजी को यह उनके बारे की बात सुना दीजिए या लिख दीजिए, वह अपना शिकार-सग्रह छपावें तो प्रेस में देने से पहले मुझे दिखला लें। मैं भाषा पर पालिश कर दूँगा, कही-कही उनकी भाषा टकसाली नही है। प० जगन्नाथप्रसाद मिश्र को भी उनके विषय की बात सुना दीजिए, उनका जिक्र खैर भी मैंने ज़रूरी समझा। १५वाँ नबर देखिए कितना अच्छा लिखा गया है × × × × × सोलहवाँ नबर आप देखें या न देखे, वह आपके दिखाने को नही लिखा गया। परिशिष्ट को पढकर अपनी सम्मति जरूर लिखिए, यह क्रम ठीक है कि नही ? प्रशसात्मक विशेषण आपको शायद खटकें, पर मै इस रीति को उचित समझता हूँ, फिर कोई विशेषण फालतू नही है। अग्रेजी वाले इस बारे में कंजूसी करते है, उनकी

तारीफ रूखी, फीकी, उखडी-उखडी होती है, सस्कृत कवि ऐसे विशेषण आवश्यक समझते है। मै उन्ही का अनुयायी हूँ।

शोला पर ब्रजमोहनजी भटनागर का लेख भेजता हूँ। मै इसे देख तो गया हूँ ४ ५ घण्टे खर्च करके, पर मूल पुस्तक जिससे यह अनुवाद किया है पास न थी। कविता का प्रूफ वर्माजी को दिखा लीजिए। लेख देने लायक है, शोला का नौहा पत्नी-वियोग आपको पसन्द आयगा। जनवरी का 'विशाल भारत' बहुत ही अच्छा निकला है, श्रीरामजी की स्मृति गजब की है।

६वाँ-१०वाँ फार्म भी भेजता हूँ। इसमे एक पुराना लेख 'दिल्ली दरबार' है। एक पुरानी घटना का वर्णन समझकर ज्यों का त्यो रहने दिया है, फिर यह उस वक्त लिखा गया था जब महात्माजी और तिलक महाराज फौज मे रगरूट भरती करा रहे थे, इसी दृष्टि मे इसे देखिए। इसी के साथ लार्ड नार्थक्लिफ साहब है। वह इस फार्म मे पूरे नही आ सके, अगला फार्म फालतू मिला नही। बाकी फिर भेजूंगा। 'विशाल भारत' की समालोचना 'आर्यमित्र' मे छपेगी।

यह जानकर सन्तोष हुआ कि आप अभी जल्दी जेल जाने का इरादा नही रखते। श्री वाजपेयीजी आजकल कैसे है? वही है न? श्री श्रीराम शर्मा कहाँ है? बस अब गुजाइश नही है? बाकी फिर।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११६

C/O मध्य भारत हिन्दी साहित्य-समिति, इन्दौर

स्वस्ति श्री सर्वोपमान योग्य सकलगुण निधान, प्रवासी भारतीयो की जान, परम सुजान, सदगुण-रत्नो की खान, घासलेटी-आन्दोलन के महायान, गंगा-जल निर्मल, यमुना-जल शीतल, पावन पवित्र, अति विचित्र, ज्ञातिशिरोमणि इत्यादि विविध विरदावली विराजमान श्री (एकसौ अनगिनत) मान् चतुर्वेदीजी उर्फ 'ऋखीजी' महाराज, जय जमना मैया की।

अपरञ्च समाचार यह है कि यहाँ श्रीरामजी की कृपा से कुसल क्षेम है, आपका मङ्गल सदा जमना मैया से चाहते है। अग्रे वार्ता यह है कि बहुत दिनासु आपको पत्र नहीं आयो, जे का बात है, जे आप चिट्ठिन को उत्तर भी नाँय देत? क्या मटियाबुर्ज वालो नेहमला बोल दिया है, या किसी नये आन्दोलन का झडा उठा लिया है, जो पत्रो का उत्तर देते भी नही बनता। मै इस बीच मे आधे दर्जन के करीब पत्र भेज चुका हूँ जिनमे बहुत सी बाते उत्तरणीय और जरूरी थी, पर आप सबका उत्तर

छायावादियो की मूक भाषा में ही देकर रह गये । मुझे डर है, छायावाद की मनहूस छाया आप पर भी पड रही है । "खुदा महफूज रक्खे इस बला से ।"

मेरे पहले पत्रो मे जिन किन्ही बातो को उत्तरणीय समझते हो, तो मटिया बुर्ज वालो से कुछ देर को छुट्टी लेकर लिख दीजिए । पिताजी का और काव्य-कुटीर वाला ब्लाक अभी घर न भिजवाया हो तो काव्य-कुटीर के ब्लाक के लैटर पेपर ५०० तथा ५०० कार्ड काशीनाथ शर्मा काव्य-तीर्थ के नाम के तथा २,५०० सादे लिफाफे छपवाकर ब्लाक सहित घर भिजवा दीजिए । ओझाजी चित्तौरगढ वाला लेख तैयार कर रहे है । कलकत्ते मे आजकल क्या हाल है ? गर्मी तो खूब पडती होगी ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११७

हिन्दी प्रेस, प्रयाग

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार ।

पहला कार्ड पहुँचा होगा । नया 'विशाल भारत' यहाँ प्रेस में अभी तक नही आया । प० गौरीशकरजी भट्ट की लिपि-समीक्षा और उसकी समालोचना 'विशाल भारत' मे प्रकाशनार्थ भेजता हूँ । इसे शीघ्र प्रकाशित कर दीजिए । प० जयचन्द्रजी की पुस्तक की समालोचना भी शीघ्र भेजूंगा । आगरे में पटे आदि कवि-सम्मेलन करने जा रहे है । मुझे बुला रहे है । शायद २३ तारीख को वहाँ जाऊँ । आशा है, आप प्रसन्न है । प० महावीरप्रसाद द्विवेदी ने प० रघुनन्दन शर्मा को एक पत्र मे लिखा है—"प० पद्मसिंहजी से मेरा प्रणाम कहिए । आपके प्रेस के किसी कर्मचारी ने उनके विषय में किसी लेख की बाबत मुझसे पूछा था । मैने जवाब नही दिया । जरूरत न थी । उस दिन देवीदत्त शुक्ल से बातें कह दी थी । शर्माजी को चाहिए किसी की बात पर विश्वास न करें । मेरी श्रद्धा और प्रेम उन पर जैसा था वैसा ही है । किसी की शरारत से वह कम नही हो सकता ।"

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११८

काव्य-कुटीर, नायक नगला (बिजनौर)

(कार्ड के बाद)

आपके कार्ड के उत्तर में कार्ड ही से काम लेना चाहता था पर पते का स्पेस भी बहुत-सा घिर गया । कार्ड पोस्ट करने के काबिल न रहा, छोड दिया । इसी बीच में अंगुश्ते शहादत (तर्जनी) दुखने लगी फिर पक गई, लिखना दूभर हो गया, इससे

गाडी रुक गई। इतने में अप्रेल का 'विशाल भारत' आ गया, उसे पढने लगा। पत्र फिर भी न लिखा जा सका। आज इन्दौर जाने के लिए चाँदपुर आ गया हूँ। पत्र लिखना जरूरी समझकर पेन्सिल से दुखती उँगली बचाते हुए लिख रहा हूँ। कष्ट-सहिष्णुता का अभ्यास कर रहा हूँ। सुना है, यह भी एक तप है। दो जगह की समालोचना बहुत पसन्द आई। एक तो आपने वाजपेयी की हिंसक प्रवृत्ति के दौरात्म्य से जो दारागंज-निवासी साहित्यसेवियो के लिए खतरे का इशारा किया है वह बडा मजेदार है, गम्भीर हास्य है पर जैसा मठल्लू आदमी उसे समझे इसमे पौने सोलह आने शक है। दूसरा ललिता और कला के व्यभिचार की बात, पर मुझे ताज्जुब है व्यभिचार का घासलेटी नाम एक ऐन्टी घासलेट के कलम से कैसे निकल गया। आश्चर्य 'तुर्गनेव' खूब है, पर इस नाम का संस्कृतिकरण प० रामावतारजी की शैली पर कर लेना चाहिए था। 'तुरग नेव' तुरगा अश्वा नेया नेतव्या, शिक्षणीया वा यस्य—अर्थात् चाबुक सवार ५१२वे पेज पर दूसरे कालम मे—'शास्त्र-वचन जैसा अलीक था', यहाँ अलीक शब्द का आपने बिल्कुल उल्टा प्रयोग कर दिया। अलीक=मिथ्या, असत्य को कहते है, कोश देखिए। यह हिमालय जैसी भयानक भूल है। इसका प्रायश्चित्त एक दिन दूध न पीकर कीजिए। इसी कालम में तीसरे पैरे में मैने यह 'ने' बिल्कुल वैसा ही जैसे प्रयोग की शिकायत आपने सम्पादकीय नोट में ५७४ पेज पर की है, जरा पढकर देखिये। तुर्गनेव में आपने एक पद्य लिखा है जिसके पढने में खास धक्का लगता है। इसकी रचना ट्रामवे के सफर में तो नही हुई थी। 'पत्रकार और नवयुवक' में एक बहुत ही ताड की बराबर बडी भूल रह गई है। नवयुवको के लिए जो विषयो की लम्बी लिस्ट आपने दी है उसमें असली चीज़ को बिल्कुल ही छोड दिया है। यह नोट भूख में तो नही लिखा था?

भाषा या साहित्य के परिपक्व ज्ञान का आपने उसमें नाम तक नही लिया। मै तो हिन्दी पत्र-सम्पादको में दो-एक को छोडकर सबसे बडी भाषा की ही कमी देखता हूँ, इनमें से अधिकाश को न अनुवाद करना आता है न स्वतन्त्र लेख। जीती-जागती विशुद्ध भाषा मे लिखना आता है। सम्पादन-क्षेत्र या लेखन-व्यवसाय में पडने के लिए सबसे मुख्य बात विशुद्ध भाषा का ज्ञान है, उसका आपने जिक्र तक नही किया। उस वक्त छाने हुए तो नही थे। सम्पादकीय के प्रारम्भ में ही आपने आत्मघात का मार्ग दिखाकर अच्छा काम नही किया। यह तो आपके स्वभाव और सिद्धान्त के विरुद्ध मार्ग था इस पर कबसे चलने लगे? याद कीजिए प० भीमसेनजी वाले संस्मरण में 'मित्रघात' को, उसे देखकर आप बिदक गये थे, काट दिया था। मित्रघात और आत्मघात, कौन बड़ा 'घात' है यह आप ही सोच लें। मै देख रहा हूँ और खुश हूँ कि आप में तेजस्विता 'गरमी' का दौरात्म्य उत्तरोत्तर बढ रहा है, लक्षण शुभ है। इस बार एक

टक्कर विजनौरी बकरे की बेचारे शास्त्री के चूतड़ो पर लगा दी है। भला उनके उस अफरीका वाले विस्मृत प्राय. व्याख्यान के याद दिलाने का यह कौनसा शुभ मुहूर्त्त था ? लोगों पर अपनी याददाश्त और साफबयानी का सिक्का बिठाने की बात है क्या ? कुछ भी हो आपकी यह अदा मुझे पसन्द आई। आप में भी यह 'द्वन्द्व युद्ध' की प्रवृत्ति बे तरह बढ रही है, इसे ज़रा रोकिए। ५१३ पेज पर 'उसके बगल से'—बगल हिन्दी में स्त्री-लिंग है, 'उसकी' चाहिए था। एक जगह आपने 'उसके बाबत' लिखा है उसकी बाबत' चाहिए था। 'बगल' और 'बाबत' दोनो एक ही लिंग के जीव हैं। 'बाबत' की बाबत अक्सर बडे-बडे हिन्दी लेखक भूल करते है।

पूज्य द्विवेदीजी के सन्देश को देकर आपने व्यर्थ ही पेज नष्ट कर दिये। इसकी कोई ज़रूरत न थी, यह तो कई पत्रो में छप गया था, कापियाँ भी सम्मेलन पर काफी बट चुकी थी, यह भक्ति की बाढ है। इन पाँच पेजों में और पठनीय मैटर दिया जा सकता था, अस्तु।

'सिंदूर वाला' गल्प घणी चोखी छै, काबली वाला से टक्कर लेती है। तुरगनेय में आपने अकबर का एक मिसरा खूब मौके से इस्तेमाल किया है 'सखु. **सँवरता है'**।

इस बार स्वामी भवानीदयालजी का फोटो न देकर आपने उनके साथ अन्याय किया है, अपने जी मे क्या कहेगे ? एक तो वह जेल गये, दूसरे प्रवासी परिषद् के मनोनीत प्रधान थे। एक रंगीन और एक सादा देना चाहिए था।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

२२-१ का कृपा-कार्ड यथासमय मिल गया था। उससे सान्त्वना मिली। लोग मुझे लेक्चर लिखने को तंग कर रहे थे। लेक्चर का निमन्त्रण स्वीकार करके मैं एक आफत में फँस गया हूँ। हितैषियो के तकाजो से तंग आ गया हूँ। चारो ओर से लिखो-लिखो हो रही थी। किसे-किसे समझाऊँ कि क्या हाल है। एक आपने दिल की कैफ़ियत का अन्दाजा करके राम लगती कही है कि ऐसी दशा में लेक्चर लिखना सम्भव नही। मुझे इससे तसल्ली मिली कि एक आदमी तो दिल की नब्ज़ पहचानने वाला मिला। मैं मौलाना हाली का लेख-संग्रह देख रहा था। एक लेख यात्रा पर था

जिसमें वह आपके फीरोजाबाद भी गये थे। सन् १८८० ई० की बात है। वह अंश नकल करके भेजता हूँ, शायद कभी काम आवे। एक महाकवि की सम्मति है। उसमें हाली ने चूडियो की तिजारत का जिक्र नही किया, शायद सन् १८८० मे यह कारखाने जारी नही हुए हो। एक और पखियो की तिजारत का हाल लिखा है। क्या आजकल भी पखियां अच्छी होती है ?

प० वृजमोहन दत्तात्रेय 'कैफी' की एक पुरानी नज्म 'नया ज़माना' भेजता हूँ। इसे छाप दीजिए। 'कैफी' पर एक लेख भी भेजूंगा। हिण्ट्स मंगवाये है। बड़े विद्वान् कवि है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२०

नायक नगला, चांदपुर

प्रिय मित्र, प्रणाम।

कृपा-पत्र और पुस्तकें पाकर अत्यन्त अनुगृहीत और आनन्दित हुआ। मैं आपकी सौजन्य-भरी चातुरी का 'चेरा' हूँ। आपके लिए मेरे हृदय में जितना प्रेम, जितना सम्मान है, उसे लिखकर व्यक्त नही कर सकता। आजकल के हिन्दी-लेखको में आपको 'एक काम का आदमी' समझता हूँ। आपने जिस चुपचाप ढग से हिन्दी और गरीब हिन्दवालो की सेवा की है वह आप ही का काम है। जी चाहता है कि हृदय मे लगाकर गले से चिमटकर प्यार करूँ, आपकी पीठ ठोकूँ, हाथ चूमूँ और चरण छूऊँ। आपकी तहरीर में गज़ब का दर्द है। सचमुच ही आप 'भारतीय हृदय', एक ही भारतीय हृदय हैं। आपके अनेक अलौकिक गुणो से मुग्ध होकर हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के सभापति पद के लिए आपका भी नाम मैंने पांच सज्जनो में लिखा है।

स्वर्गीय सत्यनारायण के सम्बन्ध में आपका पत्र जब आता है तभी मुझे रुलाता है। आज आपका पत्र पढकर मैं कोई दस-बारह बार रोया हूँगा, और अब पत्र लिखते समय भी बराबर रो रहा हूँ। नमालूम यह रोना कब तक खून के आँसू रुलाएगा। हाय ! "छन गया सीना भी कलेजा भी, यार के तीर! जान ले जा भी।" सत्यनारायणजी के सम्बन्ध में मैंने बहुत कुछ लिखना चाहा था, पर नही लिख सकूंगा। आप जो कुछ उनके लिए उनके नाम पर कर रहे हैं, मैं समझता हूँ अपने किसी मित्र के लिए किसी ने न किया होगा। जीते मित्रो के लिए मरने का दम भरनेवाले मैंने बहुत देखे है, पर आपकी तरह मरे मित्र के नाम पर मरने वाला मैंने नही सुना। जो काम सावित्री को करना चाहिए था वह आप कर रहे है, जीते-जी जल रहे है और जो उनके किसी दुश्मन को भी न करना चाहिए था वह उसने किया। ज़माने का

इनकलाब देखिए । किसी मुसलमान फारसी शायर ने हिन्दू औरत की तारीफ में कहा है—

इसे पढ़िये और रोइये । 'हृदय-तरंग' की भूमिका पढ़कर मुझे बड़ी वेदना हुई । पर, परमात्मा उन्हें वैतरणी की तरंग में डुबो दे, जिन्होंने हमारे सत्यनारायण की 'हृदय-तरंग' को हड़प करके डकार तक न ली । उन चाण्डाल-चरित्र नराधम पामरों के लिए धिक्कारवाद के अतिरिक्त क्या कोई दंड-विधान नहीं रहा? सत्यनारायणजी की जीवनी का मसाला मैं जरूर देखूंगा । चतुर्वेदी पाठकजी (आगरा निवासी चतुर्वेदी प० अयोध्याप्रसादजी पाठक) का भी हाथ बटाऊँगा । जो कहिये सो करूँगा । मैं अभी हरदुआगंज शंकरजी से मिलने गया था । हरिशंकरजी ने आपका पैगाम सुनाया । दिल में आया कि आपसे मिलता आऊँ । फिर सोचा कि आप इन्दौर चले गये होंगे । इसलिए आगे न बढ़ा । आज ही मकान पर लौटा हूँ । हिन्दी लेखकों के जीवन-चरित बेशक लिखे जाने चाहिएँ । आप पाठकजी (श्रीधर पाठक) की जीवनी लिखिये और मैं शंकरजी की लिखूंगा । मुझे जीवनी लिखनी नहीं आती । इस कूचे में कभी कदम रखा ही नहीं । पर शंकरजी का पवित्र चरित्र लिखकर अपनी कलंकित कलम के पापों का प्रायश्चित्त करूँगा, परमात्मा मुझे शक्ति दे कि मैं यह कर सकूं । एवमस्तु ।

सम्पादकाचार्य पर कुछ लिखने के लिए मैं आपको पेशगी धन्यवाद देता हूँ । लिखिए, जरूर लिखिए और जल्द लिखिए । उनकी एक अप्रकाशित अपूर्ण पर भावपूर्ण कविता मेरे पास है । 'आर्यमित्र' में जो उनके विषय में मैंने लिखा था, वह भी मेरे पास है । मुझे भी आप भारतीय हृदय का एक टूटा हुआ टुकड़ा समझिये । फिर भारतीय हृदय के स्वर में स्वर मिलाकर क्यों न रो सकूंगा ? आप लिखकर भेजिये तो । मैं इसी काम के लिए सम्पादकाचार्यजी के मकान पर, धामपुर, भी गया था पर कुछ हाथ-पल्ले न पड़ा । पुराना आदमी कोई मिला नहीं, नये जो थे वह मुझसे ज्यादह नावाकिफ, फिर भी एक बार जाऊँगा । 'ढोल में पोल' आपने पढ़ी है या नहीं । उसमें एक लेख 'नामानन्द' है । न पढ़ा हो तो भेज दूं ? मुरादाबाद की 'प्रतिभा' वहाँ कहीं जाती है ? उसके दिसम्बर और जनवरी के अंकों में 'समालोचक' की लिखी दो समालोचनाएँ[1] निकली हैं । न पढ़ी हो तो भिजवा दूं या भेज दूं ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

---

१ ये लेख और रचनाएँ आचार्यजी द्वारा ही लिखे गये थे ।

५

प० श्रीराम शर्मा को लिखे गये पत्र

१२१

C/O प० हरिशंकर शर्मा,
राजामंडी, आगरा
१२-३-१६३१

प्रिय प० श्रीरामजी, नमस्कार !

आपका तारीख ३ का कृपा-पत्र मुझे उस दिन चाँदपुर मे मिला था जब मैं इधर सफर मे आ रहा था। परसो यहाँ आया हूँ। अभी ८-६ दिन यहाँ रहूँगा।

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप अपने लेखो का सग्रह छपा रहे है। मै आपके लेख बडे चाव से पढता रहा हूँ। आपके वर्णन में एक आकर्षण होता है। मै शिकार का न शौकीन हूँ, न समर्थक, न विरोधी। हिंस्र जन्तुओ के वध को अवश्य उचित समझता हूँ। फिर भी आपके लेख इसलिए पढता हूँ कि उनमे वर्णन की रोचकता होती है। संग्रह का नाम कुछ सूझ जाएगा तो लिखूंगा। 'विशाल भारत' मे आपके कई लेख अच्छे निकले है। मै आपको पत्र लिखने वाला था। चतुर्वेदीजी से पता पूछा था। पर वह चुप रहे। आजकल आपका हेडक्वार्टर कहाँ रहता है ? श्री प० ताला-प्रसादजी[1] से सप्रेम नमस्ते कहिए। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२२

लसकाक कुटी,
दारागंज, इलाहाबाद
१६-२-३२

प्रिय प० श्रीरामजी, नमस्ते।

आपका कृपा-पत्र अभी मिला। आप अपनी एक धोती यहाँ भूल गये है। रक्खी है। आपकी याद दिलाती रहेगी। फरवरी का 'विशाल भारत' किसी से लेकर पढूँगा। इस समय लेक्चर का भूत सिर पर सवार है। रात के दो-दो बज जाते है। बिखरे ख़यालात सिमटने मुश्किल हो रहे हैं। रात थोडी है। राग बहुत है। साथ ही

१ प० श्रीराम शर्मा के बडे भाई।

इनकलाब देखिए। किसी मुसलमान फारसी शायर ने हिन्दू औरत की तारीफ में कहा है—

इसे पढ़िये और रोइये। 'हृदय-तरंग' की भूमिका पढ़कर मुझे बड़ी वेदना हुई। पर, परमात्मा उन्हें वैतरणी की तरंग में डुबो दे, जिन्होंने हमारे सत्यनारायण की 'हृदय-तरंग' को हड़प करके डकार तक न ली। इन चाण्डाल-चरित्र नराधम पामरों के लिए धिक्कारवाद के अतिरिक्त क्या कोई दण्ड-विधान नहीं रहा? सत्यनारायणजी की जीवनी का मसाला मैं जरूर देखूंगा। चतुर्वेदी पाठकजी (आगरा निवासी चतुर्वेदी प० अयोध्याप्रसादजी पाठक) का भी हाथ बटाऊँगा। जो कहिये सो करूँगा। मैं अभी हरदुआगंज शंकरजी से मिलने गया था। हरिशंकरजी ने आपका पैगाम सुनाया। दिल में आया कि आपसे मिलता आऊँ। फिर सोचा कि आप इन्दौर चले गये होंगे। इसलिए आगे न बढ़ा। आज ही मकान पर लौटा हूँ। हिन्दी लेखकों के जीवन-चरित बेशक लिखे जाने चाहिएँ। आप पाठकजी (श्रीधर पाठक) की जीवनी लिखिये और मैं शंकरजी की लिखूंगा। मुझे जीवनी लिखनी नहीं आती। इस कूचे में कभी कदम रखा ही नहीं। पर शंकरजी का पवित्र चरित्र लिखकर अपनी कलंकित कलम के पापों का प्रायश्चित्त करूँगा, परमात्मा मुझे शक्ति दे कि मैं यह कर सकूं। एवमस्तु।

सम्पादकाचार्य पर कुछ लिखने के लिए मैं आपको पेशगी धन्यवाद देता हूँ। लिखिए, जरूर लिखिए और जल्द लिखिए। उनकी एक अप्रकाशित अपूर्ण पर भावपूर्ण कविता मेरे पास है। 'आर्यमित्र' में जो उनके विषय में मैंने लिखा था, वह भी मेरे पास है। मुझे भी आप भारतीय हृदय का एक टूटा हुआ टुकड़ा समझिये। फिर भारतीय हृदय के स्वर में स्वर मिलाकर क्यों न रो सकूँगा? आप लिखकर भेजिये तो। मैं इसी काम के लिए सम्पादकाचार्यजी के मकान पर, धामपुर, भी गया था पर कुछ हाथ-पल्ले न पड़ा। पुराना आदमी कोई मिला नहीं, नये जो थे वह मुझसे ज्यादह नावाकिफ, फिर भी एक बार जाऊँगा। 'ढोल में पोल' आपने पढ़ी है या नहीं। उसमें एक लेख 'नामानन्द' है। न पढ़ा हो तो भेज दूँ? मुरादाबाद की 'प्रतिभा' वहाँ कहीं जाती है? उसके दिसम्बर और जनवरी के अंकों में 'समालोचक' की लिखी दो समालोचनाएँ[1] निकली हैं। न पढ़ी हो तो भिजवा दूँ या भेज दूँ?

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

---

१. ये लेख और रचनाएँ आचार्यजी द्वारा ही लिखे गये थे।

साथ ही मकान को लौटेंगे। आपको नमस्ते लिखाते हैं। आपके लेखों के ये लोग भी भक्त हैं। अपने भाई साहब से और चतुर्वेदीजी से प्रणाम कहिए। आशा है, आप सानन्द हैं। चतुर्वेदीजी से कहिए 'उर्दू' त्रैमासिक बहुत दिनों से नहीं पहुँचा। इस बीच के दो अंक नहीं मिले।

लेक्चर तैयार हो गया। फेयर कापी हो रही है। २०० पेज होंगे। ५, ३ को होगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२४

लसकाक कुटी,
दारागज, इलाहाबाद
७-३-३२

प्रिय पण्डितजी, नमस्ते।

आपका ५ ता० का कार्ड, पैकट और पत्र सब एक साथ आज मिले। लेक्चर आशा से अधिक लम्बा और अच्छा हो गया। श्रोताओं ने बहुत पसन्द किया। पहले दिन श्रोताओं में जस्टिस सर अब्दुल कादिर (लाहौर), चीफ जस्टिस सर सुलेमान (इलाहाबाद) भी थे। उन्होंने भी खास तौर पर दाद दी। ५ और ६ तारीख को लेक्चर हो चुका है। अन्तिम भाग आज पढ़ा जायगा। श्रोताओं की यही इच्छा हुई कि लेक्चर सब ही पढ़ा जाय। तीन-तीन बजे रात को जागकर परिश्रम तो बहुत करना पड़ा। बीच-बीच में विघ्न भी पड़ते रहे। पर सन्तोष इतना ही है कि किसी तरह लेक्चर पूरा हो गया। आज लेक्चर के बाद आपके लेख देखने शुरू करूँगा। देखकर एक-दो दिन में लौटा दूँगा। 'उर्दू' त्रैमासिक के इस बीच में जितने अंक आये हों वह सब यहाँ के पते पर न भेजकर घर के पते पर भेजिए। परसों तक यहाँ से चल देने का विचार है। 'उर्दू' के सब अंक और 'रूस की चिठ्ठी' घर के पते पर भिजवाइए।

भारत मित्र' वालों से कह दीजिए, अब घर के पते पर पत्र जारी कर दें। यहाँ न भेजें। लालाजी का पता मालूम होने पर जरूर लिखिए। श्री वाजपेयीजी मिलें तो उनसे प्रणाम कह दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

साथ जुकाम-खाँसी का दौरा भी चल रहा है। विना नहाये भी नही रहा जाता। रोटी वनाने को एक बुढिया लगाई थी। रोटी तो राम का नाम ही वनाती थी, पर किसी तरह पेट भर जाता था, कुछ वक्त वच जाता था। आज वह भी नही आई। खैर, यह १५-२० दिन संकट के है। किसी तरह कट जायेंगे। तव पुस्तक का मसाला आप नि.सकोच भेज दीजिये। मै खूब ध्यान से देख जाऊँगा। यह तो अपना खास काम है। गैर लोग भी ऐसा काम लेते ही रहते है। रघुनन्दनजी को क्या किसी को भी विना पुरस्कार लिये एक पंक्ति भी न दीजिए। यह व्यवहार का परमधर्म बना लीजिए। यह वात मैंने उनसे कह भी दी थी, और कान खोल दूँगा। रीडरों[1] के लिए जो लेख आप लिखेंगे उस पर भी पुरस्कार प्रकाशक से दिलवाऊँगा। इस समय जल्दी में हूँ। थोडा ही लिखकर खत्म करता हूँ। प० वालाप्रसादजी से नमस्ते कहिए और उनके कृपा-पत्र के लिए धन्यवाद। मैं जरूर उनके अनुरोध का पालन करूँगा। उनकी कुटीर पर हाजरी दूँगा। कभी कलकत्ते आना हुआ तो उन्ही के पास उतरूँगा। चौवेजी से नमस्कार कहिए। प० मगलदेवजी नमस्कार कहते है।

भवदीय
पदमसिंह शर्मा

१२३

लसकाक कुटी,
दारागंज, प्रयाग
१-३-१९३२

प्रिय शर्माजी, नमस्कार।

आपके पत्र के उत्तर में एक कार्ड भेजा था। आपने दूसरा पत्र भेजने की वात लिखी थी जो नही मिला। 'विशाल भारत' में 'शिकार' का नोटिस देखा। अगले अक में नोटिस की जगह 'गद्य गौरव' वाली सम्मति दे दीजिए तो ठीक हो। कानपुर से 'गद्य गौरव' की तीन कापियाँ प्रकाशक ने भेजी होगी। उनमें एक आपके लिए है, दूसरी चतुर्वेदीजी के और तीसरी प० जगन्नाथप्रसादजी मिश्र के लिए है। आपके जाने के वाद 'भारत मित्र' मेरे नाम से आने लगा है। शायद आपने 'भारत मित्र' वालो से चर्चा की होगी। श्री श्रद्धेय वाजपेयीजी से पूछकर आपने उस वात की सूचना न दी। चतुर्वेदीजी की छाया आप पर भी पड गई। वह अवसर पत्रो को पी जाते है, जरूरी वात का भी जवाब नही देते। ला० हरदयालजी का पता मालूम होने पर लिखिए। आजकल घर से प्रिय काशीनाथ और रामनाथ भी यहाँ आ गये है। मेरे

---

१ उन दिनो आचार्यजी एक प्रकाशक के लिए पाठ्य-पुस्तक लिख रहे थे।

साथ ही मकान को लौटेंगे। आपको नमस्ते लिखाते है। आपके लेखो के ये लोग भी भक्त है। अपने भाई साहब से और चतुर्वेदीजी से प्रणाम कहिए। आशा है, आप सानन्द है। चतुर्वेदीजी से कहिए 'उर्दू' त्रैमासिक बहुत दिनो से नही पहुँचा। इस बीच के दो अंक नही मिले।

लेक्चर तैयार हो गया। फेयर कापी हो रही है। २०० पेज होगे। ५, ३ को होगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२४

लसकाक कुटी,
दारागज, इलाहाबाद
७-३-३२

प्रिय पण्डितजी, नमस्ते।

आपका ५ ता० का कार्ड, पैकट और पत्र सब एक साथ आज मिले। लेक्चर आशा से अधिक लम्बा और अच्छा हो गया। श्रोताओ ने बहुत पसन्द किया। पहले दिन श्रोताओ मे जस्टिस सर अब्दुल कादिर (लाहौर), चीफ जस्टिस सर सुलेमान (इलाहाबाद) भी थे। उन्होने भी खास तौर पर दाद दी। ५ और ६ तारीख को लेक्चर हो चुका है। अन्तिम भाग आज पढा जायगा। श्रोताओ की यही इच्छा हुई कि लेक्चर सब ही पढा जाय। तीन-तीन बजे रात को जागकर परिश्रम तो बहुत करना पडा। बीच-बीच में विघ्न भी पडते रहे। पर सन्तोष इतना ही है कि किसी तरह लेक्चर पूरा हो गया। आज लेक्चर के बाद आपके लेख देखने शुरू करूँगा। देखकर एक-दो दिन में लौटा दूँगा। 'उर्दू' त्रैमासिक के इस बीच में जितने अक आये हो वह सब यहाँ के पते पर न भेजकर घर के पते पर भेजिए। परसो तक यहाँ से चल देने का विचार है। 'उर्दू' के सब अक और 'रूस की चिठ्ठी' घर के पते पर भिजवाइए।

भारत मित्र' वालो से कह दीजिए, अब घर के पते पर पत्र जारी कर दें। यहाँ न भेजें। लालाजी का पता मालूम होने पर जरूर लिखिए। श्री वाजपेयीजी मिलें तो उनमे प्रणाम कह दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२५

दारागंज, प्रयाग
११-३-३२

प्रिय श्रीरामजी, नमस्कार।

पैकट की पहुँच का कार्ड उसी दिन लिख दिया था, पहुँचा होगा। परसों 'उर्दू' तिमाही भी मिल गया। धन्यवाद! इससे पहली दो सख्याएँ नहीं पहुँची, ढूँढ-भालकर वह और घर के पते पर भिजवाएँ। व्याख्यान तीन दिन पढा। ५-६ को एक-एक घटा और ७ को दो-ढाई घटे, फिर भी पूरा न पढा जा सका। अच्छा-खासा लंबा हो गया है। उस पर 'लीडर' में कुछ लिखने को प० केशवदेव शर्मा ने लेक्चर की कापी नोट करने को ली थी, कल उनसे लेकर हिन्दुस्तानी एकेडमी वालो को सौंप दूँगा।

शिकार की १२ कापियाँ (लेख) मैंने देख दी है। 'खलीफा के हाथ' नहीं देखा। उसे 'गद्य गौरव' से ठीक कर लीजिए।

एक स्लिप में लगे लेख अभी नहीं देख पाया। लेक्चर के बाद दो दिन काशीनाथ आदि को सैर कराने में लगे। कुछ थकावट भी हो गई है। पीछे देखकर भेज दूँगा। यह तो पुस्तक के अन्त में जाएँगे न? लेखो की क्रम-सख्या ठीक समझ में न आई। आपने कापियो पर पुराने अक दिए है और वह भी कटे-फटे। मुझे इन अको से चिढ-सी है। क्रम आप ठीक कर लीजिए। मेरे पास सिर्फ स्लिप की कापियाँ है। मै दो-तीन दिन बाद यहाँ से चल दूँगा। दो-एक दिन कानपुर ठहरकर घर पहुँचूँगा। यहाँ अब एक मिनट रहने को भी जी नहीं चाहता। थक गया हूँ और ऊब गया हूँ। मसल है चमार को अर्श से बेगार उतर आती है।

साढे तीन सेर का पोथा जयपुर से आया पडा है। उसे देखना है। समझता था छोटी-मोटी कापी होगी, देख दूँगा। अत्यन्त आग्रह करने पर मानना पडा था। अब जो देखता हूँ एक पहाड सामने है। दूसरा बोझा (पुस्तक) सम्मेलन से मिला है, वह भी उतना ही बडा है। उसे पढकर सम्मति देनी है। एक महाशय 'वृन्द-सतसई' की टीका लिखे बैठे है। ४००, ५०० पेज की है इसे देख दो और भूमिका लिख दो। उन अन्तिम महाशय का तो आग्रह है कि इनकी पुस्तक देखकर ही यहाँ से उठूँ। एक नहीं कई मुसीबतो में फँसा हूँ—

"मुझको तबाह चश्मे मुरव्वत ने कर दिया,
मिल जाय तो चुराऊँ किसी की नजर को मैं।"

यहाँ से चलते वक्त पत्र लिखूँगा। अब यहाँ के पते पर पत्र न भेजिए। हाँ, आपकी धोती जो यहाँ रह गई थी, उसे किस तरह आप तक पहुँचाया जाय? ३-४

दिन के बाद आप लिखे तो केयर ऑफ प्रो० गगाशरण शर्मा, एम० ए०, पुराना कानपुर, के पते पर भेजिए। चौबेजी और प० वालाप्रसादजी से नमस्कार।

भवदीय--
पदमसिंह शर्मा

१२६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (विजनौर)
२१-३-१९३२

प्रिय पण्डितजी, नमस्ते।

मै कल दोपहर यहाँ पहुँचा हूँ। १५ ता० को यहाँ से चला था। रास्ते मे तीन दिन कानपुर ठहरा। प्रयाग से लेख रजिस्ट्री द्वारा भेज आया था। कानपुर मे आपके पत्र की प्रतीक्षा की। आशा है, पुस्तक छप रही होगी। बाकी लेख भी दो-चार दिन वाद भेजूंगा। यहाँ गाँव में प्लेग फैल रही है। आठ महीने वाद गाँव मे लौटा हूँ। प्लेग से परेशानी है। आशा है, आप प्रसन्न है। चतुर्वेदीजी से और प० वालाप्रसादजी से नमस्ते कहिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२७

काव्य-कुटीर, नायक नगला
४-४-३२

प्रिय प० श्रीरामजी, नमस्ते।

इलाहाबाद छोडते वक्त आपको एक पत्र लिखा था। कुछ आवश्यक लेख लौटा दिये थे। उसके वाद आपने कोई पत्र नही लिखा। उन परिशिष्ट लेखो की सामने आने ही अवसर याद आ जाती है। घर पहुँचकर मैं २९-३-३२ को प्लेग की वीमारी से वीमार हो गया। अभी आराम नही हुआ। हमारे ज़रा-से गाँव में प्लेग ने वडा नृशस नाच खेला है। चतुर्वेदीजी से प्रणाम कहिए। रामनाथ का प्रणाम स्वीकार कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६

प० हरिदत्त शास्त्री को लिखे गये पत्र

१२८

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
फाल्गुन सुदि १५, १९८५, शुक्रवार

ह्रये नमः ।

तुम्हारा १०-३ का कार्ड परसो मिला था जिसकी पहुँच में एक सक्षिप्त पत्र आत्माराम के हाथ भेज चुका हूँ । आज भगीरथ शास्त्री वाला कार्ड मिला। वेदना देखकर तुम्हे प्रवन्ध-मंजरी' के टाइटिल के वारे में वेदना हुई, यह कुछ आश्चर्य की बात नही है। ससार आडम्बर का उपासक है । सस्थाओ में काम करने वाले लोगो में यह रोग और भी अधिक है क्योकि उनकी दूकानदारी ही आडम्बर से चलती है। ढँढोरा सादगी का पीटते है और काम ।

"विक्रीयन्ते न घण्टाभिर्गाव: क्षीरविवर्जिता:" की वात पहले कभी ठीक होगी, आज-कल तो बाँझ और निर्दुग्धा गायें गले में बडे-बड़े घटे बाँधकर वेची जा रही है । पुस्तक के (और सस्थाओ के भी) भीतर चाहे कुछ न हो; टाइटिल रगीन हो, कुछ चित्र हो, पढाई-लिखाई खाक न हो, मकान वढिया हो (रँगी हुई धोतियाँ हो) आँखो के अधे लोग लट्टू हो जायेंगे। चाकचिक्य ने लोगो की आँखे चौंधिया दी है, सादी चीज़ पर ठहरती नही। अब तो इसकी पठिति यो होनी चाहिए—"विक्रीयन्ते सुघण्टाभिर्गाव: क्षीरविवर्जिता:" । अव तो घण्टे की पूछ है गाय की नही ।

प्रवन्ध-मजरी के चित्रो और टाइटिल पेज आदि की छपाई का अभी ८०) के लगभग देना वाकी है । टाइटिल रगीन ब्लाक का होता तो कम से कम ५०) और खर्च आते। वकरी जान से गई और खाने वाले को मजा न आया वाली वात है। तुम्हे क्या मालूम है किन दिक्कतो से इस रूप में भी प्रवन्ध-मजरी निकल सकी है। दस-वीस मिनट लडको को वहका दिया, नहर की पटडी पर घूम आये, आचार्यजी और वडे पण्डितजी से गप्प लडा ली, वस हो गया ।

८ महीने वाद अभी परसो आकर वैठा हूँ। अभी दम नही लिया इस पर भी पूछते हो घर पर कव तक रहोगे । यह प्रवन्ध-मजरी वाली ही अन्तिम लडाई थी । इससे तुम्हारा क्या मतलव है ? दूसरी लडाई किससे छेडूँ ? काशीनाथ से मिलने के लिए तुम

वह बेताव हो। तुम तो इस बीच में एकाध बार मिल भी लिये होगे। मैं तो ८-९ महीने बाद आया हूँ। इत्तफाक की बात थी कि वह यहाँ मौजूद थे। वरना मुझे असोढा जाना पडता, ऐसा मतालबा करते जरा तुम्हे सोचना चाहिए था। तुम्हारे पास गप्पे लडाने वालो की तो कमी नही है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२६

१२, आशुतोष दे लेन
गांगेय भवन, कलकत्ता
१६-११-२८

हरये नमः स्वस्ति वा।

पत्र की पहुँच में एक कार्ड पहुँच का लिख चुका हूँ। महारण्य पर्यवेक्षण के बाकी पेज भी भेजता हूँ। तुमने जो अशुद्ध प्रयोगो पर नोट दिये है, उन्हे एक जगह जमा करके लिख दो, उसकी सूचनिका में लिखो कि प्रबन्ध मंजरी के यह प्रयोग पाणिनीय व्याकरणानुसार असाधु है, बगाल में सुपद्म व्याकरण का प्रचार है, शास्त्रीजी ने भी वही पढा था, जैसा कि उनकी जीवनी में लिखा है। सम्भव है, ऐसे प्रयोग उस व्याकरण के अनुसार साधु हो, या लेख कापी करने वाले का प्रमाद हो, बहुत-से लेखो की कापी बंगला से नागराक्षरो में हुई थी। जिन लेखो मे शास्त्रीजी ने परिवर्तन-परिवर्धन किया था या अपूर्ण लेखो की पूर्ति की थी वह वगाक्षरो में ही की थी, उसी से देव-नागराक्षरो में नकल की गई, इससे भी भ्रम होना सभव है। शास्त्रीजी को फिर कापियो के देखने का अवसर न मिला, यदि वह निबन्धो की कापियो की पुनरालोचना करते तो इन्हे ठीक कर देते। सम्पादक ने यह उचित न समझा कि मूल लेखो मे कुछ परिवर्तन किया जाय, यथास्थित पाठ रहने दिया, पर पाठको को खासकर विद्यार्थियो को, ऐसे शब्दो के सम्बन्ध में भ्रम न हो इसलिए पृथक् तालिका दे दी है, इसके अनुसार यथास्थान ठीक कर लें। इससे शास्त्रीजी की बात भी रह जायगी और सम्पादक की भी। एक बार खूब ध्यान से पढकर ऐसे शब्दो के साधुरूप एकत्र कर लो, वह शुद्धि-पत्र से पूर्व दे दिये जायेगे। शुद्धि-पत्र में सिर्फ छापे की अशुद्धियाँ ही रहे। मैं समझता हूँ मेरा मत अब तुम समझ गये होगे। शास्त्रीजी के दो पत्र भेजता हूँ, एक पत्र मे वगाक्षरो से नकल होने की बातें उन्होने स्वय लिखी है। एक पत्र में मगलाचरण के सम्बन्ध में शका-समाधान है, इसे भी मगलाचरण के श्लोक की उस टिप्पणी में शामिल कर लो जो तुमने रामनाम पर दी है। और भी कही ऐसी टिप्पणी

की जरूरत समझो तो दे दो, जिससे विद्यार्थियो को समझने मे सुगमता हो। ऐसा प्राय: कोर्स की किताबो मे होता है। इन निबन्धो के विषय की संक्षिप्त समालोचना—सौष्ठव-प्रदर्शन—भी होनी चाहिए। महारण्य पर्यवेक्षण में मनुष्य-जाति की निकृष्टता सिद्ध की है। इसकी पुष्टि एक अंग्रेज लेखक के लेख से होती है। 'विशाल भारत' मे उसका अनुवाद है जो वह भी भेजता हूँ। "वर्तमान युग का प्रथम कूटनीतिज्ञ" महारण्य पर्यवेक्षण के बाकी पेजो का प्रूफ भी भेजता हूँ, पूरा लेख पढने से सम्मति स्थिर कर सकोगे।

लेखो की संक्षिप्त समालोचना जरूर होनी चाहिए। समर्पण का पद्य ठीक किया हो तो भेजो। पहुँच लिखो। लिफाफे भेजता हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३०

१२, आशुतोष दे लेन
२०-१२-२८

हरयेनमः

सिकन्दराबाद से पोस्ट किया हुआ और इसके बाद का दोनो पत्र यथासमय मिले। १०-१२ दिन से मै कुछ बाकायदा बीमार हो गया हूँ। ज्वर और जुकाम ने तग कर रखा है, इसी से भूमिका आदि के फार्म न छप सके। मैटर तो सब आ गया है। दो-एक सम्मतियाँ और मिल गई है। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री और महामहोपाध्याय अनन्तकृष्ण शास्त्री की भी मिलने वाली है। पर अस्वस्थता के कारण इन सबका सम्पादन करके प्रेस कापी तैयार नही हो सकी, इसी से गाडी अटकी है। शुद्धि-पत्र तो ठीक हो गया है। तुम्हारी समालोचना और सम्पादकीय वक्तव्य सब दो फार्म से ज्यादा का मैटर हो गया और शुद्धि-पत्र, सम्मति आदि सब मिलाकर दो फार्म से अधिक की गुजाइश नही। काट-छाँटकर ठीक करने की सोच रहा हूँ। यह समस्या भी आडे आ रही है। तबीयत ठीक नही, काम परिश्रमसाध्य है। समालोचना का शीर्षक तो 'किमस्याप्रतिपादितम्' ही ठीक रहेगा। भूमिका का 'निर्माथ निवेदनम्' या 'निवेद्यते', उन्ही के शब्द रहे तो ठीक होगा न। स्मरयति 'स्मारयति' के अर्थ भेजता हूँ, शुद्ध है 'च' बेचारे को क्यो निकाला जाय। वह तो समुच्चयक है—जरूरी है। शब्दो की व्याख्या या निरुक्ति देने का विचार नही है इससे और दो-चार पेज बढ जायेंगे। 'दीर्यन्तेऽमीभिर्दारा' पर कुछ न कहा जाय तो क्या हर्ज है। 'दार' शब्द के, पुंस्त्व और बहुत्व की अपेक्षा से यह निरुक्ति की गई मालूम होती है—"दीर्यन्ते भेदबुद्धिमुत्पाद्य पृथक् क्रियन्ते पुरुषा अर्थात् भ्रातरोऽमीभिर्दारै रित्यर्थ."। एक इस:

विषय का श्लोक है—"भ्रातृणा सततं भेदः कथ नाम न जायतां। अध्यापिताना पत्नीभिर्द्वेषविद्या सदा निशि।।" चंडीदास को चंडिदास क्यो किया जाय जब ङ्यापो सज्ञाछन्दसोर्बहुलम् मे बहुलम् है। 'धर्म वृषभ यमराजविचारस्थ' को तुमने खीच-तान कर यमराज का भैसा क्यो बना डाला ? वृषोत्सर्ग में छोडे हुए बिजार का पारिभाषिक नाम धर्मवृषभ है, हिन्दी मे धर्म साड बोलते है, मिट्टी के तेल के कनस्तरो की एक छाप ट्रेडमार्क है, धर्म साँड बिजार की मूर्ति के नीचे यही लिखा रहता है। 'नृपकुमारी' यह समस्त पद ही कवि को अभीष्ट है। बगाल मे एक राजकुमारी 'विद्या' की कथा प्रसिद्ध है, इस पर बंगला और सस्कृत में कई नाटक और काव्य भी है जिनमे विद्या के विशेषणो मे श्लेष द्वारा आदि विद्या का दुर्गा से साम्य दिखलाया है, उसी ओर कवि का इशारा है। 'पुसामविमृश्यका रिताम्' के व्यग्य की ओर तुम्हारा ध्यान नही गया इसमे उल्टा समझ गये । मनुष्यो के विचार और आचरण के वैषम्य पर चुटकी ली है। जिन्हे स्त्रियो का स्वाछन्द्य या विधवा-विवाह पसन्द है उन्हे सीता-सावित्री का आदर्श स्त्रियो के सामने न रखना चाहिए और जिन्हे सीता-सावित्री का आदर्श मान्य है, उन्हे विधवा-विवाह या स्वच्छन्दता का प्रचार न करना चाहिए। बात बहुत ठीक और पते की कही है, इस पर एतराज न होना चाहिए। उसे एक बार फिर पढो। 'कियत्तिथे' नही बनता तो मजबूरी है 'तदेक मंगलार्थमाचार्यस्य मृश्यताम्' की कोटि में पडा रहे, ऐसे बीसियो शब्द दंडी आदि के काव्यो मे भरे पडे है, जिन्हे व्याकरण साधु नही मानता।

'पुसामविमृश्यकारिता' की समालोचना ठीक नही हुई उसे फिर ठीक करना चाहिए।

हृषीकेशजी के फोटो के नीचे एक परिचायक अनुष्टुप् समर्पण की शैली का और चाहिए। सूझ जाय तो भेज दो, पर जल्दी है। हाँ, ११६ पृ० पर 'स्त्री पुसाना' और १३२ पृ० पर 'स्त्री पुसयो' को कोई पण्डित उस दिन कहते थे कि 'पुसा' और 'पुसो' चाहिए। क्या यहाँ समास में अच् प्रत्यय न होगा। होना तो चाहिए, मै तो समझता हूँ प्रयोग शुद्ध है। 'पाणिनीय स्मृत्यवाकृताना पदानां सूचनिका' के पदो को ३५ प्रार्थमिहे—प्रार्थया महे, ३७ अनुवर्तध्वम्—अनुवर्त्तन्ताम्, ४२ समाकर्पयन्ति—समाकर्पन्ति, चाकास्त—चाचकाद्; ६३ वरी वृर्द्धते—वरी वृद्धयते, ६७ सन्दिग्धव्यम्—सन्देग्ध०, १६४ विललमु—विलेसु, १५४ परीक्षाचकार—परीक्षा चक्रे, ११८ तं वर्ज—तं वर्जयित्वा, इत्यादि को तो शुद्धि-पत्र में ही स्थान दे दिया जाय, पृथक् सूचनिका ठीक नही। ऐसे शब्दो की सूची १२६ पृ० तक ही है, उसके आगे के फार्मों में अन्त तक एक दृष्टि और डाल जाओ। कोई ऐसा और शब्द दीख पडे तो नोट करके भेज दो। कोई भयानक अशुद्धि रह न जाय।

यहाँ से निपटकर दो-चार दिन घर रहकर या अल्मोड़े उतरकर वहीं से इन्दौर जाने का इरादा है। वहाँ के महामन्त्री किसी काम से बुला रहे हैं। कन्हैयासिंह भी वहीं हैं बहुत दिनों से बुला रहे हैं और जल्दी कर रहे हैं।

यह काम—पुस्तक सम्पादक का अच्छा तो है, पर, बड़े झंझट का है, करोगे तो मालूम पड़ेगा। नहर के किनारे बैठकर नहीं हो सकता। २८ ता० को पूरे ५ महीने हो गये और अभी काम बाकी है। बस, अब थक गया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३१

८८-बी० बलराम दे स्ट्रीट,
कलकत्ता ८-१०-२६

हरये नमः।

उस दिन का रजिस्टर्ड पैकट तुम्हें कल मिला होगा, पत्र और लेख पढ़ लिया होगा। एक उपन्यास—'कसौटी' की भूमिका लिखी थी वह भी भेजता हूँ, इसे भी पढ़ लो। भगवानदास दवे नामक किसी विद्यार्थी ने पत्र भेजकर कुछ शंका समाधान पूछा है, वह तुम्हारे पास भेजता हूँ इसका समाधान उसे लिख भेजो। बहुत पाण्डित्य मत बघारना, सीधी तरह से लिख देना जिससे बेचारा समझ जाय। विद्यार्थी विनयी मालूम होता है, जिज्ञासा रूप से लिखा है इसलिए उसे उत्तर मिलना चाहिए। जो उत्तर उसे भेजो उसकी नकल मेरे पास भी भेज देना, मैं भी देख लूं क्या लिखा है। भगीरथ शास्त्री ने पद्मपराग पर बड़ा पत्र लिखा है, बड़ी दाद दी है और लिखा है कि इसे 'विशाल भारत' में छपवा दो। मैंने वह चतुर्वेदीजी को दे दिया है, दे क्या दिया है वह खुद ले गये हैं कि हो सकेगा तो समालोचना में इसका कहीं कुछ उपयोग करेंगे। तुम्हारा पत्र भी उन्होंने पढ़ा था, वह उन्हें ज्यादा पसन्द आया। कहने लगे कि समझदार मालूम होते हैं। समझ-बूझकर पते की बातें लिखी हैं। मैंने कहा कि देख लीजिए, आप लोग कहा करते हैं कि संस्कृत पण्डित निरे बुद्धू हुआ करते हैं, संस्कृत वालों में ऐसे लोग भी हैं जो तुम्हारी हिन्दी को भी खूब समझते हैं। चतुर्वेदीजी कल घर चले गये, बीस-पच्चीस दिन बाद कहीं लौटेंगे। अक्तूबर का 'विशाल भारत' रवाना करा गये हैं, तुम्हारे पास भी पहुँचेगा। वह साहित्याङ्क हो गया है। प्रबन्ध-मंजरी की छपाई का काम शुरू हो गया, पहला गेली प्रूफ आ गया पर लक्षण दीखते हैं कि यह पद्मपराग से भी अधिक जान मारेगा या मारेगी। मंजरी है न। पाँच दिन में एक फार्म सो भी अधूरा कम्पोज़ हुआ है यही गति रही तो कार्तिकी पर भी उधर न आ सकूँगा। मैं तो कहता हूँ पुस्तक छपाने से बड़ी मुसीबत और नहीं है। वही लोग अच्छे रहे जो इस छापे के युग

से पहले ही मर गये, कही व्यासजी को अपने पुराण और महाभारत छपाने पडते तो चो बोल जाते, एकदम मर्त्य-लोक छोडकर भाग जाते । और कही दुर्वासाजी का प्रेस से काम पड जाता तो कष्ट कटक कट जाता । शाप देकर प्रेस वालो की सातकुली को भस्म कर देते। कही दुर्वासाजी मिल जाये तो ख्याल रखना किसी तरह इन प्रेस वालो से उन्हे भिडा दिया जाय तो ससार का उद्धार हो जाय । पहले लोग हाथ से लिखते थे तो पुस्तक की कद्र जानते थे, पढते थे, याद करते थे और आदर से रखते थे। आज के लोग है पैसा फेंका, पुस्तक खरीदी, फाड-तोड कर अलग की, इसीलिए कुछ आता-जाता भी नही। ग्रन्थ-चुम्बक ही रह जाते है । ज्यो-ज्यो प्रेस से काम पडता है मेरी तो यही धारणा दृढ होती जाती है कि वह युग अच्छा था जब लोग श्रौत (कानो से काम लेने वाले) और स्मार्त (स्मृति से याद रखने वाले) होते थे । लिखना-पढना सब फिज़ूल है और यह प्रेस-सिस्टम तो एकदम जहन्नुमी चीज है ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३२

८, रॉयल एक्सचेज प्लेस, कलकत्ता
६-१०-१९२९

हृद्ये नम :

उस दिन एक रजिस्टर्ड पार्सल भेजा था, कल एक पत्र और भेजा है । सस्कृत निबन्ध छप रहे है । मुझे (यानी सम्पादक को) हृषीकेश शास्त्री की लेखशैली आधुनिक सस्कृत लेखको में सबसे अधिक पसन्द थी । अपनी छात्रावस्था से सन् १८९३ ई० से ही मै 'विद्योदयाक' ग्राहक था । जब तक वह निकला मै उसे बराबर मँगाता रहा, पढता रहा और उसके अको का सुरक्षित सग्रह करता रहा । उसी समय से यह इच्छा थी कि 'विद्योदय' के कुछ लेख यदि पृथक् पुस्तकाकार छप जायें तो सस्कृतज्ञो के लिए एक चीज हो जाय, विद्यार्थियो के लिए एक आदर्श पाठ्य-पुस्तक हो जाय । सस्कृत गद्य की बहुत कुछ कमी इससे पूरी हो जाय । सन् १९१३ ई० में जब मै महाविद्यालय ज्वालापुर में था तो 'विद्योदय' के कुछ निबन्धो को पुस्तकाकार छपाने का विचार हुआ। मैंने मुख्याध्यापकजी (श्री प० भीमसेन शर्मा) से अपना सकल्प प्रकट किया, उन्होने अनुमोदन किया फिर प्रश्न उठा कि इन्हे छपाने का खर्च कहाँ से आवे और इन्हे खरीदेगा कौन ! इस पर यह बात तै पाई कि अपने मिलने वाले कुछ समर्थ सस्कृत-प्रेमियो से सहायता ली जाय। मुख्याध्यापकजी (श्री प० भीमसेन शर्मा) ने ऐसे सज्जनो की लिस्ट बनाई । उस वक्त कोई तीन सौ साढे तीन सौ रुपये का खर्च कूता गया था ।

पन्द्रह-बीस आदमियो से थोडी-थोडी सहायता लेकर यह रकम वसूल करने का प्रोग्राम बना। फिर हृषीकेश भट्टाचार्यजी से मैंने अपना यह इरादा प्रकट किया और प्रार्थना की कि यदि आप प्रकाशपिण्डप्रमाणनिवन्धो की एक बार पुनरालोचना कर जायें, जो निवन्ध अधूरे है उन्हे पूरा कर दे, तो हम इस काम मे हाथ लगावे। उन्होने सहर्ष यह प्रस्ताव स्वीकार किया। मैंने उन निवन्धो की कापी उनके पास भेज दी। उन्होने उस वृद्धावस्था मे वडी तत्परता से निवन्धो का संशोधन, परिवर्धन और पूर्ति करके वापस भेज दिये और वडी प्रसन्नता प्रकट की। अब प्रेस की चिन्ता हुई कि कहाँ छपावें। शास्त्रीजी चाहते थे कि लास्ट प्रूफ वह स्वय पास करे। इधर आस-पास का कोई प्रेस इतनी दूर प्रूफ भेजने को सम्मत न हुआ, वडे-वडे प्रेसो ने रेट वहुत माँगा। कलकत्ते के प्रेसो पर निगाह डाली, सौभाग्य से उन दिनो मेरे परिचित बाबू दुर्गाप्रसादजी गुप्त बी० एल० प्रेस के मैनेजर थे उन्होने सस्ते रेट में, नये टाइप में छापना, स्वीकार किया। मैटर प्रेस मे भेज दिया गया, अभी पहले फार्म का प्रूफ तैयार हो ही पाया था कि शास्त्रीजी सहसा बीमार हो गये और चल बसे। उनकी यह आन्तरिक और अन्तिम इच्छा पूरी न हो सकी। प्रूफ पढने के लिए शास्त्रीजी के सुपुत्र प० भवविभूति भट्टाचार्यजी को लिखा गया कि आप वहाँ प्रूफ पढने का प्रवन्ध करें। शास्त्रीजी के कलकत्ते में और भाटपाडे मे कई विद्वान् शिष्य और आत्मीय थे, पर उन्हे प्रूफ पढने का अभ्यास न था, और वह भी नागराक्षर लिपि का। लाचार होकर प्रूफ मुझे अपने पास मँगाने पडे, मै उन दिनो अहार मे 'सतसई' की टीका लिख रहा था। अहार रेल से दूर है। प्रूफ़ पहुँचने में और फिर पढकर लौटाने में दस-बारह दिन लग जाते थे। कोई दो-ढाई महीने में डिमाई आठपेजी साईज़ के सिर्फ छै फार्म छपे थे कि बा० दुर्गाप्रसादजी ने उस प्रेस से सम्वन्ध छोड दिया। नये प्रवन्धकर्ता ने इतनी दूर प्रूफ भेजना स्वीकार न किया, छपाई का काम वन्द हो गया। उसके बाद यूरोप का महासंग्राम छिड गया। कागज़ बहुत महँगा हो गया। प्रेस रेट दुगुने बढ गये, फिर आगे काम न हो सका। सिर्फ प्रारम्भ के छै फार्म छपकर रह गये। प्रेस से छपे हुए फार्म मँगा लिये। पडे-पडे उन्हे दीमक चाटने लगी। छपे हुए फार्म खडित हो गये। किसी फार्म की चार सौ कापियाँ और किसी की तीन सौ बची। बाकी सब **अम्प्रिभिर्भक्षितानि कीटै कवलितानि।** निवन्धो के छपाने का विचार बार-बार उठता रहा और बैठता रहा। जिन सज्जनो ने सहायता देने का वचन दिया था उनमें अनेक परलोक पधार गये। अन्त में मुख्याध्यापकजी चल दिये, जिनके प्रोत्साहन और साहाय्य-प्राप्ति पर प्रकाशन निर्भर था। मै वड़े असमजस में था कि निवन्ध किस तरह छपें। छपी हुई कापियाँ दीमकों की नज़र हो गईं। बाक़ी लिखी हुई कापियाँ जीर्ण-शीर्ण होकर फटती जा रही है, शास्त्रीजी इस इच्छा को अपने साथ ले गये। उनके निवन्ध-जो उन्होने इतने परिश्रम और

उल्लास से ठीक किये थे, उन्हे अपने जीवन-काल में मुद्रित न देख सके। मेरी जिन्दगी में भी शायद ये न छप सकेंगे। ये निबन्ध जिनके प्रकाशन का सकल्प जीवन के प्रारम्भ मे किया था यो ही बरबाद जायँगे। यह अन्तर्वेदना मुझे व्याकुल कर रही थी। 'पद्मपराग' छपाने के लिए मुझे कलकत्ते आना पडा तो उन निबन्धो को भी साथ लेता आया। इस विचार से कि सम्भव है, इनके छपने का कुछ प्रबन्ध हो जाय। मैंने अपनी यह इच्छा 'विश्वमित्र' के सम्पादक श्रीयुत् मूलचन्द्रजी अग्रवाल से प्रकट की कि इसके लिए कुछ कीजिये। परोपकार का काम है, उन्होने बडे हर्ष से यह प्रस्ताव स्वीकार किया, उन्ही की प्रधानभूत सहायता और सहयोग से यह प्रकाशित हो रहे है, इसके लिए उन्हे जितना धन्यवाद दिया जाय कम है। किस्से-कहानियो के लिए तो सहायता मिलना सुलभ है, पर, सस्कृत के लिए इस युग मे कौन सहायता देता है। यह सोचकर यह सहायता और भी बहुमूल्य प्रतीत होती है। बस 'प्रबन्ध-मजरी' की जीवनी लिख दो। कागज के एक ही ओर जिससे मुझे कापी न करनी पडे उसे ही प्रेस मे दे दूँ। जरा छोटी लिखना और विस्पष्ट लिखना। उत्तर लौटती डाक से दो। पहले पत्रो की पहुँच लिखो। बस, अब बन्द करता हूँ। प्रूफ आ गया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२२

शान्ति निकेतनम् : विश्वभारती विद्यालय;
बोलपुर वीरभूमि
२-२१-२६

हरये नम.

परसो १०वां फार्म, पत्र और शुद्धि-पत्र भेजा है, पहुँचा होगा। कल यहाँ आया था, आज लौट जाऊँगा। बहुत दिनो से 'विश्वभारती' देखने की इच्छा थी। श्री रवीन्द्र कवीन्द्र से आज भेट हुई, बडे प्रेम से मिले, बहुत-सी बाते हुई। परिचय हो गया। श्री विधुशेखर भट्टाचार्य शास्त्री भी यही रहते है। बडे अच्छे विद्वान् है। सस्कृत, प्राकृत, अग्रेजी, तिब्बती आदि अनेक भाषाओ के पण्डित है। 'मित्रगोष्ठी' के सम्पादक यही थे, हिन्दी के पण्डित है और प्रेमी है। मेरे लेख बडे चाव से पढते है। 'विशाल भारत' में प्रकाशित लेखो का पारायण करते रहते है। मुख्याध्यापकजी के सम्बन्ध का लेख बहुत पसन्द किया। मिलते ही उसकी चर्चा की, महाविद्यालय का समाचार भी पूछा, मिलकर जी खुश हो गया। 'पद्मपराग' भेंट किया, 'प्रबन्ध-मजरी' के फार्म सम्मति के लिए दिये, लिखेगे। यहाँ कोई ३०० छात्र-छात्राएँ है। कुछ हिन्दी पढते है। रवीन्द्र-

नाथजी ने कहा, हमें हिन्दी साहित्य की शिक्षा के लिए सहायता दिलवाइये, जिसके लिए एक 'चेयर' कायम हो जाय। हमने कहा, बहुत अच्छा, आप एक अपील लिखिए। उसका समर्थन करके छाप देंगे। बहुत प्रसन्न हुए, कहा—कभी-कभी यहाँ आकर हिन्दी साहित्य पर व्याख्यान दिया कीजिए। 'विश्वभारती' पर एक लेख लिखने का विचार है। जगह अच्छी है। चंडीदास बंगीय कवि और जयदेव की जन्मभूमि यहाँ से पाँच-छः कोस पर है। आज ही लौटना है, नहीं तो देखते। तुमने बंकिम का 'लोकरहस्य' देखा है, न देखा हो तो देख डालिये। महारण्यपर्यवेक्षण से कुछ तुलना करनी होगी। पहले पत्र की पहुँच लिखना।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३४

१२, आशुतोष दे लेन
६-१-३०

हरये नमः।

३-१-३० का खर्रा कल मिला। चंडीदास वाले उस पद्य पर मेरी नज़र न गई थी। मैं समझ रहा था 'चंडीदासस्य' इस हैडिंग की ही इसलाह तुमने शुद्धि-पत्र में की है। उस पद्य में तो ह्रस्व चाहिए ही। दारा शब्द की निरुक्ति तुम्हें पसन्द आई या उसका इस प्रकार उपहास किया गया है, बात समझ में न आई। वह निरुक्ति तुम्हें अभिप्रेत हो तो तुम्हारी समालोचना में सन्निविष्ट कर दी जाय। नहीं तो नहीं।

'पुसामविमृश्यकारिता' के बारे में तुम्हें व्यर्थ ही भ्रम हो गया है। उसमें तो मुझे कोई ऐसी बात दिखाई नहीं देती जिस पर हाय-तोबा की जाय जैसी तुमने पहली समालोचना में की थी। लेखक ने विधवा-विवाह की उपादेयता या अनुपादेयता का उपदेश उसमें नहीं दिया। उसमें उपदेश और व्यवहार के वैषम्य पर कटाक्ष किया गया है, विधवा-विवाह विधेय है तो सीता-सावित्री के आदर्श के अनुकरण का उपदेश न देना चाहिए। मन्दोदरी और तारा के आदर्श का प्रचार करना चाहिए, ऐसा अगर कहा तो कहो क्या बुरा कहा। उस लेख का व्यंग्य दोनों ओर समान रूप से काम कर रहा है, यही उसमें चमत्कार है। इसकी दाद मिलनी चाहिए। मैं न दोषैकदृक् हूँ न गुणैकदृक्। मेरा व्यक्तिगत कोई द्वेष नहीं है, न कभी था, मेल की दशा में भी मेरी यह राय थी जिसे मैंने कभी छिपाया नहीं। उसने मुझे व्यक्तिगत रूप में कभी कोई हानि नहीं पहुँचाई। मेरे साथ उसका व्यवहार सम्मानपूर्ण रहा है। उसका कारण चाहे जो हो, मुझे उससे कभी स्पर्धा या ईर्ष्या नहीं हुई। मुख्याध्यापकजी के साथ उसके दुष्ट व्यवहार ने मुझे प्रकट

रूप में विरोध करने के लिए विवश कर दिया और मुझे इसके लिए जरा भी पश्चाताप नही है। बल्कि हर्ष है कि मैने अन्याय का प्रतिकार करके अपने कर्तव्य का पालन किया। किसी को ऊपर चढाने या नीचे गिराने के अभिप्राय से न मैने कभी किसी की प्रशसा की है न निन्दा। जैसा कि तुम समझ रहे हो यह तुम्हारी भूल या लडकपन है। नातजर्बेकारी है। किसी की निन्दा या प्रशसा मे मै कभी मक्कारी या जमानासाजी मे काम नही लेता, जो हृद्गत भाव होता है उसे छिपाता नही। छिपाना मक्कारी या बुजदिली समझता हूँ, मेरी निन्दा या स्तुति सदा यथार्थ ही होती है। इसका मुझे दावा नही, उसमें भ्रान्तियाँ या भूल हो सकती है, पर बदनीयती या चाटुकारिता नही। मै 'भाट' नही हूँ कि किसी की यो ही प्रशसा करता फिरूँ, न 'चाँद' के सम्पादक की तरह किसी समाज या व्यक्ति को बदनाम करके स्वार्थ-सिद्धि का जाल फैलाता हूँ। फिर मै अपनी निष्पक्षता सिद्ध करने के लिए किसी की कृति मे व्यर्थ की दोषोद्भावना "गुणेन केनापि जने नवद्ये दोषान्तरोक्तिः खलुतत्खलत्वम्" वाली बात है इससे वेशक बचता हूँ। अस्तु, 'पुमामविमृश्यकारिता' की जो नई समालोचना तुमने की है वह मेरी समझ मे नही आई। यह बात नही कि मै विधवा-विवाह का विरोधी हूँ, पर मुझे उसमे विधवा-विवाह का विरोध नही दीखता। इसलिए डाक्टर अन्सारी के शब्दो में कहना पडता है कि मै क्या करूँ मेरी राय तुमसे नही मिलती।

२०५ पृष्ठ पर 'सीता सावित्री प्रमुखाइव' की जगह, प्रमुखानामिव क्यो किया जाय। "सीता सावित्री वद् युष्माभिः पातिव्रत्यमवलम्ब्यतामिति वय उपदिश्यामहे, यूय सावित्री सीता प्रमुखा इव पातिव्रत्यपरायणा भवत, इतियावत्।" यथास्थित पाठ का क्या ऐसा अर्थ नही हो सकेगा। जो वास्तव में अशुद्धि हो उसे तो जरूर शुद्धि-पत्र मे दिखाना चाहिए, वे कौनसी बेचारी अशुद्धियाँ है जिन्हे पुस्तक में छपनार्थ जगह मिलनी कठिन हो रही है। जो अशुद्धियाँ है उन सबको जगह मिली है पर श्री गुरुजी की तरह यथास्थित पाठ की सगति विठाना ही मुझे अच्छा मालूम होता है, किसी प्रकार भी सगति न बैठ सके तो फिर मजबूरी है। 'इय प्रतिकृति श्री मद्हृषीकेशस्य शास्त्रिण.' तब तो ठीक है पर उत्तरार्ध 'तस्मै त्वदीय न्यायेन मंजरीय समर्प्यते' क्यो ठीक नही, यह तुम्हे क्यो न सूझा। 'प्रबन्ध-मजरी' उन्हे समर्पित तो नही हो रही। इसलिए उत्तरार्द्ध 'यल्लेखनीसमुद्भूता (प्रसूताहि) मजरीयप्रकाश्यते (विराजते)' ऐसा कुछ होना चाहिए था, इसलिए तुम इसमें फेल हो गये। उत्तरार्ध ठीक करो तो पास होगे। 'यदुपश्च यदुपत्र' यथास्थित ही रहेगे। तुम्हारी व्याख्या का द्राविडी प्राणायाम तो पूरा गोरखधन्धा हो गया है।

स्त्री पुसयो स्त्रीपुसानाम के साधुत्व में मुझे स्वय सन्देह नही था। 'अचतुरविचतुर' सूत्र तो याद नही आया था पर साधु है, यह धारणा अवश्य थी। उस दिन एक व्याकरणाचार्य

दबी जबान से इनके साधुत्व पर सन्देह-सा प्रकट कर रहे थे, ये वैयाकरण भी निरे ठूठ खसूची होते है, जो उदाहरण जिस रूप में किसी सूत्र की व्याख्या में आ गये है, बस वही तक इनकी गति है। वह भी पुस्तक सामने हो तब, नही तो आयँ बायँ शायँ, जो है सो, बूंकने लगते है।

सम्पादकीय वक्तव्य मै नये सिरे से लिख रहा हूँ, समालोचना तुम्हारे या तुम दोनो के नाम मे जायगी। पहला सम्पादकीय वक्तव्य मैने अब देखा तो मुझे बहुत पसन्द न आया। बडा बहुत है, शब्द कठिन भी है छोटा-सा टूटा-फूटा जैसा बन जायगा दे दूँगा। तबीयत उकता रही है। लिखने को जी नही चाहता पर लिखना पड रहा है। कभी सोचता हूँ, सम्पादकीय न रहे तो क्या हानि है ? भूमिका आ गई। समालोचना मिल गई। सम्मतियाँ भी दो-एक प्राप्त हो गई, बहुत है। भूमिका, समालोचना और सम्मति-प्रदाताओ का धन्यवाद देकर छुटकारा पाऊँ।

मस्त मतवाला की सूचना तुमने नही दी थी। शायद पढा भी नही, नहीं तो किसी लेख की दाद तो देते, कम से कम 'मेरी तो बस यही मान्यता' और 'पजाब मेल मे' की चर्चा तो जरूर करते।

हाँ, सच कहना इन जाडो में किसी दिन तुम न्हाये हो ?

'श्वेत प्रदर' की प० मुरारीलाल वाली दवा याद नही आती। दवा है तो अनुभूत। एक काम करो कि वैद्यजी प० रामचन्द्रजी के पास चरकोक्त योग, योगकाण्ठादि है, इस रोग की सिद्ध औषध है। नाम इस समय याद नही आता। काशीनाथ की चाची को उसी से आराम हुआ था। उससे अच्छी दवा इस रोग की नहीं है। लो नाम भी याद आ गया, पुष्पानुग चूर्ण नाम है, बनी-बनाई मिल जायगी। दस-पन्द्रह दिन के सेवन से रोग शान्त हो जायगा। जाओ और वैद्यजी से ले आओ। जिस पथ्य और अनुपात से बतलावें, सेवन कराओ। सिर्फ कनखल तक जाना पडेगा। प्रदर बडा बुरा रोग है। इसकी उपेक्षा करना ठीक नही है। फौरन इलाज होना चाहिए। खटाई-मिठाई, मिर्च-मसाला न खाना चाहिए। पुष्पानुग से अवश्य ही लाभ होगा। चरक में देख लो इसकी कितनी प्रशसा लिखी है। वास्तव में प्रशसनीय है। मै समझता हूँ, खर्रे की सब बातो का उत्तर दे दिया। कोई बात छूट गई हो तो फिर याद दिलाओ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१३५

गांगेय भवन
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
१३-२-३०

हरये नमः।

विचित्र पत्र आज मिला। इस नये आविष्कार के लिए बधाई है।

सम्मतियाँ श्री गुरुजी की और श्री विधुशेखर भट्टाचार्य, प० सकलनारायण पाण्डेय, प० योगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य, प० दुर्गाचरण, प० कान्तकृष्ण शास्त्री, प० हरिप्रसाद शास्त्री की भी प्राप्त हुई है। शकराचार्य की सम्मति अभी नही आई, आ जायगी तो दे दी जायगी। नही तो नही। सब सम्मतियाँ कोई एक फार्म की होगी। धन्यवाद महामहोपाध्याय प० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी को और तुम दोनो को, सम्मति-दाताओ को, एक वाक्य में समष्टि रूप से सहायता देने-दिलाने वालो मे बा० मूलचन्द्र ('विश्वमित्र'-सम्पादक), गागेय भवनाधिप प० गागेय नरोत्तम शास्त्री (सस्कृत हिन्दी के सुकवि), प० बनारसीदास चतुर्वेदी ('विशाल भारत'-सम्पादक) को देना है।

और हाँ, भट्टाचार्यजी के सुपुत्र प० भवविभूति, एम० ए०, विद्याभूषण को भी। गोपाल ने भी कुछ सहायता कापी करने और प्रूफ पढने में दी है। अशुद्धियो का कारण बगाक्षरो से नागराक्षरो में प्रतिलिपि शास्त्रीजी फिर न देख सके, प्रूफ देखते वक्त अशुद्धियो के निराकरण की उनकी कुछ इच्छा थी, जो पूरी न हो सकी। सम्पादक की अयोग्यता, प्रेस के भूतो की कृपा इत्यादि दो-चार कारण सक्षिप्त और तुले हुए शब्दो मे। हाँ, इसके उल्लेख की भी जरूरत है कि शास्त्रीजी ने केवल प्रथम तीन निबन्धो को ही देखा था। बाकी छपाते समय वैसे ही 'विद्योदय' से उद्धृत कर दिये गये है। आत्मवायरद्गार बहुत विस्तृत शतपृष्ठ काव्य निबन्ध है। बहुत ही उपादेय और शिक्षाप्रद है। उसमे बहुत थोडा भाग उद्धृत किया जा सका है, शेष विस्तरभिया छोड दिया है। दूसरे सस्करण की नौबत आई तो सब उद्धृत कर दिया जायगा इत्यादि बाते सम्पादकीय के उपसहार में आ जानी चाहिएँ। जिससे पूर्वापर सगति मिल जाय, बहुत बढे भी नही। कई दिन से तबीयत ऐसी खराब है कि कलम उठाने को जी नही चाहता। इस बीच में इतना जरूर हुआ कि छपाई के बिल चुकाने का प्रबन्ध हो गया और यह गागेयजी के उद्योग से हुआ। बडी सुजनता और आत्मीयता का व्यवहार किया है।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१३६

काव्य कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
८-४-३०

हरये नमः ।

४-४-३० का पत्र कल मिला। पहले पत्रों की पहुँच में एक कार्ड कई दिन हुए लिख चुका हूँ। तुम्हारी समालोचना-शक्ति जाग्रत या जागरित हो रही है, खूब समझते हो। विशाल भारत' की समालोचना अच्छी की है। तम्हारा पत्र चतुर्वेदीजी को भेज रहा हूँ। चतुर्वेदीजी विचित्र प्रकृति के आदमी है, स्पष्टवादिता का कोई न कोई बहाना ढूंढते रहते है। निष्पक्षता की छाप बिठाने का उन्हे कुछ खब्त है। अवसर ऐसी ऊल-जलूल बाते कह जाते है जिनका सिर-पैर नही होता, पर हृदय के अच्छे है, ज़रा लम्बे है, इससे कुछ बेवकूफी का अश भी है। अरबी में एक कहावत है—'कुल् उल् तवीलुल अहमकुन' लम्बे आदमी बेवकूफ होते है। खैर, आदमी अच्छे है, लिखने भी अच्छा लगे है। सच तो यह है कलकत्ते मे उनसे बडी सहायता मिली। तुम्हारा पत्र पढेगे तो खुश हो जायेंगे।

वृन्दावन की जयन्ती पर जाने का कुछ-कुछ विचार तो था पर अब नही रहा। बीमारी से निर्बलता बढ गई, साहस नही पड़ता। सस्थाओ के उत्सवो पर कष्ट भी कम नही होता, कोई आकर्षण भी नही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३७

नायक नगला
२०-१-३१

हरये नमः ।

स्मृति-अक की समालोचना पहुँची। खूब लिखी है, मुझे खुशी हुई कि तुम्हे दाद देने की कला आ गई, बात की तह को पहुँच जाते हो, यह बात बहुत मुश्किल है 'कश्चितमाम् वेत्ति तत्वतः'। प०चन्द्रदत्त मे भी इस रोग का किसी तरह सचार कराओ। पत्रादि पढने की चाट लगाओ । विद्यार्थी का यह अक सत्यदेव (कांगडी) को भी पढने के लिए दे देना, गौडजी के पास तो यह अक शायद आया हो। चिडियाघर के लिए हरिशकरजी को लिख दिया है, तुम्हारे और गौडजी के पास भेजेंगे, तुम भी लिख दो तो जल्दी आजाय।

आजाय तो सत्यदेव को भी दे देना, पिपठिपु और श्रद्धालु है । 'मनई' का अर्थ पुरविया है, पूर्व प्रयाग काशी आदि की तरफ मनुष्य को 'मनई' कहते है । प० श्रीरामजी का लेख पढो तो रहस्य खुल जाय । प० महावीरप्रसादजी द्विवेदी के पास प्र० म० और 'पद्मपराग' भेजा था, उन्हे बहुत पसन्द आई । बडी अच्छी दाद दी है, नकल भेजता हूँ। पटना सस्कृत कालिज के सस्कृत-प्रोफेसर प० देवदत्त त्रिपाठीजी ने भी अच्छी सम्मति भेजी है, अग्रेजी मे है । समस्याओ मे अष्टाध्यायी और न्याय-दर्शन के सूत्र खूब फिट किये है ।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१३८

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)

हरये नमः ।

पत्र और निमन्त्रण-पत्र मिला समाचार जाना, उत्सव पर आने में असमर्थ हूँ। परसो आगरे जा रहा हूँ । मौका मिला तो वही से एक दिन के लिए अजमेर भी जाऊँगा ।

डाक्टर हरदत्त शास्त्री बडे ही सहृदय सज्जन है । उनके लेख में अशुद्धियो का होना सम्भव है । किसके लेख में अशुद्धियाँ नही होती ? निकालने वालो ने तो माघ और श्री हर्ष और कालिदास तक की अशुद्धियाँ निकाली है । रात-दिन जिस भाषा को बोलते है उसमे भी अशुद्धियाँ हो जाती है । फिर देववाणी में, जो मनुष्य की भाषा नही है, अशुद्धियाँ हो तो आश्चर्य ही क्या है । उनकी उपेक्षा करनी चाहिए । उनकी समालोचना को नकल करके और अशुद्धियो को ठीक करके 'मञ्जु-भाषिणी' में भेज दो या काशी से 'सुप्रभात' आदि जो दो-एक पत्र निकलते थे कोई भी निकलता हो तो वहाँ भेज दो । जहाँ भेजो प्र० म० की एक प्रति भी साथ भेज दो, तो अच्छा हो ।

गौडजी की एक कविता 'अब्दुल्ला' के नाम से 'अभ्युदय' मे निकली है । तुमने पढी ? जिस पर्चे मे यह कविता निकली है उससे पहले पर्चे में भारत के विरुद्ध वह तीसरा लेख निकला है । 'अभ्युदय' गौडजी के पास या काँगडी में आता होगा । मिल जाय तो लेकर पढ लेना ।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१३९

नायक नगला

हरये नमः ।

कल ऐन रविवार के दिन तुम्हारा डाक-पत्र मिला, समाचार ज्ञात भये। साख्यतीर्थ के विवाहतीर्थ बनने की तिथि पहले कार्ड में तो तुमने ३० अक्तूवर लिखी थी (कार्ड मौजूद है) अब ३० नवम्बर लिखते हो, यह क्या गोलमाल है ? तिथि और मास मे तो वैदिक व्यत्यय या (वहुलम्) का विषय नही है, यानी नवम्बर स्थाने अक्तूबर नही होता, अबके पत्र मे शायद दिसम्बर हो जाय। जब कि कोई महीना ही नियत नही है तो निमन्त्रण-स्वीकृति की सूचना कैसे दूँ ? साख्यतीर्थ की वरात के बारे मे एक बात सुझाता हूँ, वरात 'वेताल' के नेतृत्व में पैदल आवे, रास्ते मे 'म० वि०' का भी नोटिस होता जायगा, खर्च भी बच जायगा। पत्रो मे सूचना भी छप जायगी, धूम मच जायगी। एक खास बात होगी, तीन पडाव में आसानी से पहुँच जायगी, हर पडाव से पत्रो को तार समाचार भेज दिया जाय, बोलो तुम्हारी क्या राय है ? मै समझता हूँ, श्री आचार्यजी इस प्रस्ताव को पसन्द करेंगे, लका में रेलो का बायकाट हो रहा है। श्री उडिया स्वामीजी कभी रेलो में चढते ही नहीं, क्या 'म०वि०' के लोग इतना आदर्श भी लोगो के सामने न रख सकेंगे। रखना तो चाहिए आगे तुम जानो। प० लक्ष्मीनारायणजी को ओर से विश्वास दिलाता हूँ कि उन्हे पैदल वर-यात्रा पर जरा भी आपत्ति न होगी, बल्कि वह खुश होगे। वह मेरे मिलने वाले और समझदार सज्जन है। हाँ, झडियाँ सब के हाथ में हो, झडियो पर मोटो हो—'विवाह करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' और वेताल के गले में ताशा हो या ढप अथवा ढोल जो वह सँभाल सके, और हाँ, श्री महाप्रभुजी जरूर साथ में हो, बीच बीच में कीर्तन होता आवे, महाप्रभुजी गावें, वेताल नाचें और तुम ताल दो, प० चन्द्रभानुजी को मँजीरे दे देना और सत्यव्रत को करताल, बस न भूतो न भविष्यति शिवजी की वरात का नया सस्करण होगा।

बगाली दर्शनाध्यापक को भी प्र० म० दे दो यदि मुनासिब समझो, बाकी म० वि० मे जो कोई ल १) से कम मे न दो, गुजायश नही है।

स० प० पत्रिका का उत्तर बहुत ठीक है, पर वे दोनो सख्याये भी पास हो तो देखूँ कोई बात रह तो नही गई है, भेज देना। वाजपेयीजी जो कुछ बुरा-भला लिखें मेरी तरफ से खुली छुट्टी है, मै कुछ न बोलूँगा। न बुरा मानूंगा, पर जरा सोच-समझ कर लिखे, कही रग पर नश्तर न मार दे, अनर्थ न हो जाय, यही डर है उनकी प्रतिज्ञा बडी विचित्र है कि सतसई में अलकार ही नही है। मालूम होता है वह 'सतसई' को

नये फैशन की अलकार-विहीना लेडी सिद्ध करके छोडेगे, अच्छी बात है, बहुत-से आचार्यों के मत में अलकार के बिना भी कविता हो सकती है, वह ठीक है। अनलकृती पुन. क्वापि पर पहले जमाने मे ऐसे लोग भी थे जो अलकारो पर जान देते थे, जयदेव का वह पद्य प्रसिद्ध है 'अनलकृती · '। बिहारी इस पिछले सम्प्रदाय के नही थे यह कौन कह सकता है। अस्तु, गौडजी से मिलते रहो। परमात्मा करे उनके सत्सग से तुम्हारा यह अग्रेजी का भूत उतर जाय, बस आज इतना ही, सुना था कि महाप्रभुजी उधर ही कही है। तुम उनकी बात को गोल कर जाते हो, कुछ नही लिखते, कहाँ है। क्या उनसे नाराज हो, जो पूछने पर भी उनकी चर्चा से ऐसे बचते हो जैसे लाहौल से शैतान डरता है, या राम-नाम से भूत भागता है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७

श्री राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह को लिखे गये पत्र

१४०

गुरुकुल, कांगडी (बिजनौर)

प्रियवर राजेश्वर बाबू, नमस्कार।

कल आपका लेखो वाला पैकट मिल गया। धन्यवाद। पैकट मिलने से पहले ही मैं एक पत्र रवाना कर चुका था। लेख आज लखनऊ भेज रहा हूँ। ये लेख आप ही के नाम से छपेंगे। यानी समालोचना, सकलन, जीवन, कवि और शीर्पक-शून्य सम्पादकीय टिप्पनी वाला नोट। यह नोट मेरी सम्पादकीय टिप्पनियो में नहीं खप सकेगा। इसमे अग्रेजी और बगाली साहित्य का उल्लेख है। मै इनमें से एक भी नही जानता। कल के पत्र में भी पारसनाथजी को टिप्पनी के विपयो की सूची भेजी है। यदि वह उनमें से किसी विषय पर कुछ लिख भेजेंगे तो अच्छा होगा। अब और तकाज़ा करने का तो मुझे हक रहा नही। बहुत कुछ भेज दिया और खूब भेज दिया। इतनी भी आशा न थी। पर 'लाभाल्लोभ. प्रवर्त्तते' के अनुसार अभी कुछ और भी आशा करना अनुचित नही कहा जायगा। आप अपना और पारसनाथजी का फोटो शीघ्र लखनऊ भेज दीजिए। जिससे ब्लॉक बन जायँ। लेखो के साथ चित्र देने का भी नियम कर दिया है। लेखको का सक्षिप्त परिचय भी दिया जायगा। और यह काम मै खुद करूँगा। पारसनाथजी के परिचय के हिंट्स आप लिख दीजिए उनके आधार पर मै लिखूँगा। अपना परिचय पारसनाथजी से लिखा दीजिए। इस तरह साध्य-साधक भाव से काम चल जायगा। इसमें कस्रेनफ्सी से काम न लीजिए। यानी फोटो अलग-अलग भेजिए और परिचय के हिंट्स भी।

पारसनाथजी पटने से कहाँ जायँगे। इसकी सूचना आप ही दीजिए और उनसे नमस्कार भी कह दीजिए। आपकी कृपाओ का अनुगृहीत हूँ। इसमें पारसनाथजी को भी शामिल कर लीजिये तो मुज़ायका नही।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१४१

गुरुकुल कांगड़ी (बिजनौर)
७-३-२८

प्रियवर, नमस्कार।

५, ३ का कृपा-पत्र आज मिला। मैं असौडा (मेरठ) चौ० रघुवीरनारायण सिंहजी की पौत्री के विवाह में गया था। बरात बख्त्यारपुर के पास के एक गाँव से भूमिहार ब्राह्मणो की आई थी। यह इस प्रकार का पहला ही सम्बन्ध हुआ है। इसके घटक सर गणेशदत्त सिंह और श्री स्वा० सहजानन्दजी महाराज थे। इस प्रकार के दो-एक सम्बन्ध और भी शीघ्र ही होने वाले है। श्री पारसनाथजी को भी निमन्त्रण भेजा था। वहाँ पहुँचकर मैंने तार भी दिया, पर वह न आये। तार का उत्तर भी न मिला। असेम्बली के झंझट में फँसे हुए दीखते है। वह मिलते तो लेख-सग्रह के सम्बन्ध में भी बातें करता। कवि शंकरजी को भी बुलाया था, वह आये थे। उनकी कविता के बारे में भी बातचीत हो जाती। मुझे दिल्ली जाने का अवकाश न मिला। अब लेख-सग्रह के प्रकाशन में विलम्ब हो रहा है, शंकरजी की कविता भी तैयार है। उसे एक सज्जन और माँग रहे है, यदि आप प्रकाशित कराना चाहे जैसा कि पहले विचार था तो निर्णय हो जाना चाहिए। पारसनाथजी को अवकाश नही है। लेख-सग्रह का प्रकाशन भी खटाई मे पडता ही दीखता है। अस्तु।

प० रामावतारजी तो महामहोपाध्याय हो गये अब तो उनका रोग शान्त हो जाना चाहिए।

हाँ, आपने ईसामसीह की उक्ति ठीक लिखी है। दो विरुद्ध काम एक साथ नही हो सकते। यानी पारसनाथजी बिडलाओ के यहाँ रहते हुए साहित्य-सेवा के लिए समय नही निकाल सकते।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४२

गुरुकुल, कांगडी (बिजनौर)
२५-७-२८

प्रिय राजेश्वरप्रसादजी, नमस्कार।

सम्मेलन से लौटकर मैं कल शाम २४, ७ को ही यहाँ पहुँचा हूँ। आज आपके सब पत्र पढ़े। एक महीने की डाक यहाँ पड़ी थी। ३-४ घण्टे में मुश्किल से पढ़ पाया हूँ। कई जरूरी पत्रो का उत्तर आज ही देना है। पहले आप ही को पत्र लिख रहा हूँ।

मुजफ्फरपुर मे आपकी अनुपस्थिति बराबर खटकती रही, आपके भाई साहब श्रीयुत् पारसनाथसिंहजी और श्री कार्यीजी के कारण वहाँ मुझे विशेष सुभीता रहा। बातें बहुत है, कहाँ तक लिखूँ। २७ ता० को आप मसूरी छोड रहे है। आपसे मुलाकात न हो सकेगी। इसका मुझे अफसोस ही रहेगा। यहाँ से कनखल पहुँचना इन दिनो श्री शकर शृग की चढाई से कम कष्टप्रद नही है। हिम्मत तो कर रहा हूँ कि २७ को कनखल पहुँचकर आप से मिलूँ। पर मनोरथ की सफलता में सन्देह ही है। आप हरिद्वार उतरे तो सीधे कनखल वैद्यराज प० रामचन्द्र शर्मा के पास पहुँचिये। उन्हे मैं लिख रहा हूँ। वह आपके ठहरने का प्रबन्ध कर देंगे। मैं आ सका तो वही आप से मिलूँगा। मैं न भी आ सका तो भी आपको हरिद्वार कनखल उतरकर ही जाना चाहिए। श्रावन की गगा का स्नान करते जाइए।

'सुधा' की साहित्य-सख्या के लिए आपकी एक छोटी-सी भी गल्प मिल जाती तो अच्छा था। अभी दस-बारह दिन का समय तो है। आपने जो कविता भेजी है वह तो उसमे जायगी ही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४२

गुरुकुल, कांगडी (बिजनौर)
१८-८-२८

प्रिय राजेश्वर बाबू, नमस्कार।

लेख की पहुँच में मुश्तर्का पत्र लिख चुका हूँ। लेख के लिए आपको विशेष रूप से धन्यवाद देता हूँ। सचमुच आप न पकडते तो लेख न मिलता। अब इनका फोटो और भिजवा दीजिए, और टिप्पनियाँ लिखवा दीजिए। टिप्पनियाँ लिखने में आप भी सहायता दीजिए यानी कुछ आप भी लिखिए कुछ इनसे लिखाइए।

प्रोफेसर अवधविहारीसिंहजी इस संख्या मे न जा सके। इसका अफसोस है, उनकी जीवनी भी तैयार हो जानी चाहिए। यह काम आप अपने जिम्मे लीजिए। दुर्गा-पूजा की छुट्टियो में मुजफ्फरपुर जाकर उनके चित्र-चरित्र और काव्य का सग्रह कीजिए। 'ज़माना' (कानपुर) के जुलाई-नम्बर मे सम्मेलन की चर्चा मे मेरे भाषण से प्रोफेसर साहब के सम्बन्ध की पक्तियाँ उद्धृत हुई है।

फोटो भेजने और टिप्पनी लिखाने का काम भी आपके सुपुर्द करके मै निश्चिन्त हूँ। आशा है, आप प्रसन्न है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४४

कलकत्ता

२३-१०-२८

प्रियवर, नमस्कार।

बहुत दिन से आपका कुशल समाचार नही मिला। कहाँ है ? कैसे है ? क्या कर रहे है। आज 'सुधा' मे आपका लेख दीख पडा। बहुत खूब रहा। 'किस तरह मैं ' शेर मन्सूर का नही, जौक का है। मन्सूर की जीवनी मे उनके भाव का द्योतक समझकर लिखा गया है। अकबर के दो शेरो का आपने खूब इस्तेमाल किया है। लेख बहुत अच्छा है। पर पारसनाथजी की तरह आप भी 'सुस्त' लिखने-पढने में आलसी होते जाते है।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१४५

८८-बी० बलराम दे स्ट्रीट, कलकत्ता

२६-१०-२८

प्रिय महोदय, नमस्कार।

२५-१० का कृपा-पत्र आज मिला, समाचार जानकर प्रसन्नता हुई। मै समझता था मेरे कलकत्ते रहने का हाल आपको मालूम है। विनायक बाबू और झाजी के पास आपके पत्र आते थे, यहाँ मे भी इन लोगो के पत्र जाते थे। समझा था कि शायद मुझसे ही पत्र-व्यवहार के लिए आपको फुरसत नही है। उधर आप समझते थे कि शायद मै चला गया। दोनो ओर से गलतफहमी हुई। मै सस्कृत निबन्धो के झझट मे बेतरह फँस गया। समझा था कि १५ दिन में इस काम से छुट्टी पा जाऊंगा। प्रेस का वादा भी यही था, पर प्रेस के भूत तो बडे ही शैतान होते है। आज २६ दिन मे कुल चार फार्म छापकर दिये है। अभी आठ बाकी है। बीच में छोडकर जाना भी मुनासिब नही मालूम होता। मै तो कलकत्ते को फौरन छोडना चाहता हूँ, पर कलकत्ता ही नही छोडता। कलकत्ता इस बार कम्बल होकर लिपट गया है। एक महीने का काम समझकर आया था, परसो २४-१० को तीन महीने बीत गये। मेरे कारण आप लोगो को भी कष्ट हुआ। इसका मुझे स्वास्थ्य-सहार से भी अधिक खेद है।

औषध बीच मे आपके वैद्यराज की खाई थी। लाभ भी हुआ फिर वैसी ही हालत हो गई। औषध से तर्कमवालात कर रखी है। निबन्ध छप जाय तो यहाँ से भागूँ। तभी आराम होगा। वैसे तबीयत पहले की निसबत तो अच्छी है। पर साफ़ नही। खैर, जहाँ इस हालत मे इतने दिन कटे है, ये भी कट जायँगे।

समालोचना प्रकाशित कराकर 'कटिंग्स' भेजी। वह भी दाखिल दफ्तर हो गई। मुझे तो उनकी पहुँच तक न मिली।

५ मई के 'भारत'-प्रयाग मे भारत-सम्पादक श्रीयुत प० वेंकटेश नारायणजी तिवारी, एम० ए० ने 'पद्मपराग' की समालोचना लिखी है, भेजता हूं। देख लीजिए, और इसे भी यथापूर्व दाखिल दफ्तर करने के लिए सम्पादकजी के पास भेज दीजिये।

पटने आप मुझे क्यो बुला रहे है। मुझे न अवकाश है न अभी निकट भविष्य में (जाडो से पहले) वहाँ आने का साहस होता है। कलकत्ते की स्थिति मे मेरे स्वास्थ्य का सहार तो हो ही चुका था। स्वास्थ्य-सम्पादन के लिए मैं कुछ दिन निरन्तर घर ही रहना चाहता था। पर मुझे कार्यवश ७ मई को यहाँ आना पडा। मिस्टर बापना गत अगस्त से, जब मै कलकत्ते मे था, बराबर बुला रहे थे। अब महाराज के अधिकार-प्राप्ति महोत्सव पर निमन्त्रित करके आने के लिए उन्होंने जोर दिया। इसलिए आना पडा। मालवे के ऐतिहासिक तीर्थों के दर्शन की बहुत दिनों से प्रबल इच्छा थी। इस समय यहाँ आने मे यह भी प्रबल कारण हुआ, एक चिरकालीन मनोरथ पूरा हो गया। भोज की धारानगरी और माँडू का महाकिला महामहोपाध्याय गौरीशंकरजी ओझा के साथ देखने का अलभ्य अवसर मिल गया। खूब देखा ओझाजी के सुपुत्र प० रामेश्वर ओझा, एम० ए०, यहाँ पुरातत्व विभाग के अधिष्ठाता है। उन्हे साथ लेकर परसों उज्जैन की भी सैर की। यहाँ से (उदयपुर) होता हुआ आगरे होकर घर लौट जाऊँगा। आगरे के शान्ति प्रेस मे 'पद्मपराग' के द्वितीय भाग को छपाने का प्रबन्ध करना है।

श्रीयुत् अर्जुनदासजी केडिया की पुस्तक सम्मति के लिए मुझे ठीक उस दिन मिली जिस दिन मैं यहाँ के लिए प्रस्थान कर रहा था। सफर और गरमी का मौसम, ध्यान से पढ़ने का अवकाश न मिल सका। उस दिन रेल में कुछ अंश पढा था। पुस्तक काम की है। बहुत परिश्रम और पाडित्य से लिखी है। सक्षिप्त सम्मति दो-चार दिन में लिख भेजूंगा। पुस्तक के साथ जो विस्तृत पत्र उन्होने लिखा था उसमें आपके अनुरोध का उल्लेख था। पर, आप अब इतने दिन बाद अनुरोध कर रहे है। वह भी उनके चार-पाँच पत्र पहुँच चुकने के बाद। श्री पारसनाथजी का गुण, मै देखता हूँ, आप में भी शनैः शनैः सक्रात हो रहा है। होना चाहिए।

"जमाले हम नशीं दरमन असर ।

मैं आठ-दस दिन यहाँ और हूँ [illegible] छ दिन

ठहरेंगे। वह यहाँ काम करने की को[illegible] [illegible]

पर नही जायेंगे ? आशा है, आप प्रसन्न

१४८

काव्य-कुटीर
नायक नगला, (चाँदपुर)
२९-७-३०

प्रिय राजेश्वर बाबू, नमस्कार।

आपका कृपा-पत्र २३-७ का आज मिला। मैं इन्दौर की यात्रा से २४-७ को मकान पर पहुँचा हूँ। इस बीच में कई बार आपको पत्र लिखने का खयाल आया। मैंने इन्दौर में आपके पत्र के उत्तर में एक पत्र भेजा था। घर के पते पर उसका जवाब न मिलने से सन्देह हुआ कि आप मकान पर नहीं हैं। कहीं शैल-विहार कर रहे हैं। इसलिए पत्र न लिखा था। मेरे नाम आपका एक कार्ड यहाँ मेरे पीछे आया था, जिसमें आपने भगवतीशरणसिंहजी एम० एल० सी० के नाम सतसई भेजने का आर्डर दिया था। सतसई यथासमय भेज दी गई थी। आज गया से वी० पी० लौट आई, पते की चिट भेजता हूँ। यदि फिर भेजने की जरूरत हो तो लिखिए। भेंट में भेज दी जाये?

दुकान पर आपके लेखानुसार सतसई की १५ प्रतियाँ रेलवे पार्सल से भिजवा रहा हूँ। स्टेशन का नाम आपने नहीं लिखा। अटकल से पटना स्टेशन पर भेज रहा हूँ। यहाँ कई दिन से अति वृष्टि हो रही है। गाँव के पास एक बरसाती नाला है, वह चढ़ रहा है। डाकखाना और रेलवे स्टेशन (चाँदपुर) ६ मील दूर है। कल मेह बन्द रहा और नाला उतर गया, तो पार्सल कल ही रवाना हो जायगा। वर्ना दो-एक दिन की देर होगी। इससे शीघ्र आर्डर की तामील न हो सके तो मजबूरी है। आप 'चरखा-संघ' के काम में जुट गये, यह जानकर हर्ष हुआ और आश्चर्य भी। आपके इस राष्ट्रीय अनुष्ठान की बात सुनकर स्वामीजी प्रसन्न होंगे।

मैं ६-८-३० के आस-पास गाजीपुर जेल में श्रीमान् चौ० रघुवीरनारायणसिंहजी से मिलने गाजीपुर जाऊँगा। साथ में चौधरी साहब के सुपुत्र रघुवंशनारायणसिंह भी होंगे। तीन महीने की लम्बी यात्रा से थक गया हूँ। दूसरे आजकल मच्छरों की फसल के दिन हैं। इसलिए आगे न बढ़ सकूँगा। वर्ना आप से भी मिलता।

हिन्दुस्तानी एकेडमी प्रयाग, निर्णयार्थ पुरस्करणीय पुस्तकें मँगवा रही है, १५ अगस्त तक पुस्तकें मँगाई हैं। चि० काशीनाथ पद्मपराग भेजने के लिए कह रहे हैं। एकेडमी का रंग-ढंग देखते तो उचित निर्णय की आशा नहीं है। ७ पुस्तकें भेजनी होंगी। लाटरी का टिकट खरीदना है। अस्तु। 'पद्मपराग' की निकासी कैसी हो रही है? दुकान से नई पुस्तकें कौन-कौन निकली हैं? कोई पुस्तक मेरे काम की हो तो

वी० पी० से भिजवा दीजिए। श्री पारसनाथजी महाराज कहाँ विराजमान हैं, उनका समाचार आपने कुछ न लिखा। क्या बिडलाजी को छोड दिया ? वह जो आप अंग्रेज़ी दैनिक निकालने जा रहे थे, उसका क्या हुआ, अपना कुशल समाचार लिखिए। भाई साहब से नमस्कार कहिए। इधर वर्षा गजब ढा रही है। बहुत-सी खेती मारी गई और अभी खैर नही दीखती। उस पर टिड्डी दल का उत्पात फिर प्रारम्भ होने को है। लक्षण अच्छे नही हैं। उधर क्या दशा है ? आशा है, आप सपरिवार सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४६

राजामंडी, आगरा
३-१०-३०

प्रिय राजेश्वर बाबू, नमस्कार।

आपका २८-८ का कृपा-पत्र जो हिन्दी प्रेस प्रयाग के पते पर भेजा था, मुझे यहाँ मिला। मै २९-८ को यहाँ आ गया हूँ। श्रीयुत अध्यापक रामदास रायजी से मैं परिचित हूँ। उन्होने अपनी कुछ पुस्तकें मुज़फ्फरपुर सम्मेलन के समय दी थीं। अभिज्ञान शाकुन्तल के अनुवाद की भूमिका मे खुशी से लिख देता, पर, इस समय मैं बहुत ही व्यग्र हूँ। हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद से एक लेक्चर फरवरी तक तैयार करना है। उसके लिए मसाला जुटा रहा हूँ। बा० पारसनाथजी से भी उस बारे में कुछ परामर्श करना था। प्रयाग से पटना आने का भी इरादा था। पर मौका न मिला। इधर चला आया। सोमवार तक मकान पहुँचना है।

अभिज्ञान शाकुन्तल की भूमिका पारसनाथजी बहुत अच्छी तरह लिख सकेंगे। उन्ही से लिखा दीजिए। मुझे मनोयोगपूर्वक सब पुस्तक पढने का अवकाश न मिलेगा। इसलिए मजबूरी है।

रायजी गाज़ीपुर के रहने वाले है, यह मुझे मालूम न था। वर्ना मैं उनसे गाज़ीपुर मिलता, चौधरी साहब से मिलने मैं २४-८ को गाज़ीपुर गया था। अस्तु, अब चौधरी साहब गाज़ीपुर से यहां आगरे आ गये है। सुना है, स्वामीजी छूटकर आ गये। आपकी संस्था का क्या हाल है ? आजकल कौनसी पुस्तक छप रही है ? कितनी पुस्तकें प्रकाशित हो गई। पुस्तको की बिक्री कैसी है ? आपका हेडक्वार्टर कहाँ रहता है ? श्री पारसनाथजी तो पटने ही होगे ? आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५०

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
२१-११-३१

प्रिय राजेश्वर बाबू, नमस्कार।

आपका १८-११ का कृपा-पत्र मिला। घर के पते पर भेजा हुआ पत्र मुझे नही मिला। मैं सितम्बर के शुरू से बाहर ही हूँ। एकेडमी के लेक्चर की तैयारी के लिए ही इधर आया था। पहले काशी गया था। वहाँ बीमार हो गया। एक महीना बीमारी और उसकी कमजोरी मे गया। अब जाकर लिखने-पढने लायक हुआ हूँ। उसी में लगा हूँ, जनवरी के अन्त में लेक्चर होगा। आशा है, तब तक लेक्चर तैयार हो जायगा।

पारसनाथजी वहाँ जायँगे, जहाँ बिडलाजी ले जायँगे। बिडलाजी के साथ ही लौटेंगे। पहले आना सम्भव नही है। इस बार उनसे इस यात्रा पर आप पुस्तक लिखवाइए। लिख दीजिए, नोट करते रहे। लिख देंगे तो बडी रोचक होगी। उनकी अनुपस्थिति मे भारती पब्लिशर्स कम्पनी को जो हानि पहुँची है उसकी पूर्ति हो जायगी। 'हिन्दी ससार' को एक अच्छी चीज मिल जायगी। इसके लिए उन पर अभी से पूरी ताकत से जोर डालिए। यह काम आप करा लेंगे तो मैं आपको भूरि-भूरि कोटिश धन्यवाद और बधाई दूँगा। नये 'विशाल भारत' मे वाजपेयीजी के सस्मरण छपे है। उसमे पारसनाथजी का भी जिक्र खैर है। पारसनाथजी यदि साहित्य-सेवा मे जुट जाते तो, हिन्दी का भण्डार भर जाता। पर, इस पुण्य कार्य मे बिडलाजी भरपूर बाधक हो रहे है, वह कुछ न करने देगे। स्वराज्य गवर्नमेन्ट मिल जाय तो इसके लिए एक कानून बनवाया जाय कि पारसनाथजी सिवाय साहित्य-सेवा के और कुछ न करने पावे। इसके लिए जरूरत समझी जाय तो उन्हे कही नजरबन्द कर दिया जाय। आशा है, मेरे इस विचार से आप सहमत होगे। पारसनाथजी को आप पत्र लिखें तो इसकी उन्हे सूचना दे दीजिए। पारसनाथजी से लाला हरदयालजी का पता तो पूछिए, सुना है, वह लन्दन ही मे है। उनके पास मुझे पुस्तकें 'पद्मपराग' आदि भेजनी है। यदि पता चल जाय तो मुझे सूचना दिलवाइए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५१

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
२५-३-३२

प्रियवर, नमस्कार।

बहुत दिनों से आपका कुशल समाचार नहीं मिला। 'गद्य-गौरव' की प्रति कानपुर से आपकी सेवा में भिजवाई थी, पहुँची होगी। श्री पारसनाथजी आजकल किस लोक की सैर कर रहे हैं ? पर्यटन् विवधान् लोकान्। इस मर्त्यलोक में कब पधारेंगे ?

मैं २०-३ को यहाँ मकान पर लौटकर आया हूँ। हिन्दुस्तानी एकेडमी का लेक्चर ५, ६, ७ मार्च को हो गया। विद्वान् श्रोताओं को पसन्द आया। मेहनत ठिकाने लगी। आपका आजकल क्या शुगल है ? परिवार में तो सब प्रकार से कुशल है ? यहाँ गाँव में आजकल, प्लेग का दौरदौरा है। और सब कुशल है। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८

श्री जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द' को लिखे गये पत्र

१५२

१२, आशुतोष दे लेन,
गांगेय भवन, कलकत्ता
२७-१२-२८

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते ।

आपका २३-१२-२८ का कार्ड यथासमय पहुँचा । मेरी तबीयत इस बीच मे कुछ ज्यादा खराब रही । इसलिए उत्तर देर से दे रहा हूँ । तबीयत अभी ठीक नही । फिर भी चिन्ता की कोई बात नही । दो-चार दिन मे चंगा हो जाऊँगा । चतुर्वेदीजी प्रवासी-अंक के झमेले मे मस्त है । कई दिन से मिले भी नही । न मालूम उन्होने शान्ति-निकेतन को उस बारे मे कुछ लिखा है कि नही । मैंने याद तो दिला दी थी । श्रीयुत घनश्यामदासजी बिडला तो 'विश्व-भारती' के सम्बन्ध में संतुष्ट नही है । उनसे कुछ आशा नही । अब बड़े बिडला (श्रीयुत् जुगलकिशोरजी) से मिलने का विचार हो रहा है । पर अभी वह यहाँ है नही । इस बीच मे आ गये तो मिलकर, नही तो पत्र द्वारा, 'विश्व-भारती' वाला प्रस्ताव उनके सामने रखा जायगा । 'सिद्धिस्तु दैवे स्थिता' । यहाँ 'चाँद' के मारवाड़ी अंक को लेकर नई हलचल मची है, जिसका समाचार 'स्वतन्त्र' के मारवाड़ी अंक से मालूम होगा । उसे पढिए । इसमें का 'जूते' शीर्षक लेख श्री शास्त्रीजी को भी सुनाइए । इसके लेखक वही 'पद्म-पराग' के सम्पादक महाशय है । समालोचनात्मक लेखो के छपाने का संकल्प तो है, पर सफलता कब तक मिलेगी, ठीक नही कहा जा सकता । हाँ, उस दिन वह जर्मन सज्जन ईश्वरदत्त विद्यालंकार का पता पूछते थे । उनका पता मैंने शास्त्रीजी को लिख दिया था । वह आजकल संस्कृत कालेज मे (मुजफ्फरपुर) डा० ईश्वरदत्त पी-एच० डी० के रूप मे विराजमान है । मुन्शी अजमेरी को, जिनकी चर्चा उस दिन चली थी, कलकत्ते बुलाने का विचार है । पत्र लिखा है । यदि वह आ गये और मेरी मौजूदगी मे आ गये तो उन्हे 'विश्व-भारती' मे भी लाएंगे । उनके बुलाने का एक उद्देश्य यह भी है ।

आश्चर्य और खेद है कि वहाँ रहते हुए बंगला पढने का साधन भी आपके लिए सुलभ नही है । मैं तो कहने वाला था कि आप वहाँ रहते हुए संस्कृत का अभ्यास करें । श्री शास्त्रीजी से प्रणाम कहिये ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५३

१२, आशुतोष दे लेन,
गांगेय भवन, कलकत्ता
मार्गशीर्ष सुदी ५, ८६

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

कृपा-कार्ड मिला। धन्यवाद। 'विश्व-भारती' मे हिन्दी-हित की दृष्टि से आपका कष्ट स्वीकार करके भी रहना वाछनीय है। हिन्दी के लिए उसका फल अच्छा ही होगा। हिन्दी छात्रो में हिन्दी के प्रति भक्ति और अनुराग का सचार कीजिए। अच्छे साहित्य के पढने का चसका लगाइए। बाकी समय पर सब कुछ हो जायगा। 'विश्व-भारती' में हिन्दी को समुचित स्थान दिलाने के लिए आन्दोलन करना पडेगा। 'विश्व-भारती' के विधाताओ को झँझोडना पडेगा। हिन्दी वालो को भी राह पर लाना होगा। ऐसी ज़रूरी बातो की ओर उनका ध्यान ही नही है। कल बाबू राजेन्द्र-प्रसादजी मिले थे, उन्हे सब कथा सुना दी है। उनमे सहयोग की आशा है। जैसा कि उस दिन चर्चा हुई थी, गुरुदेव एक अपील निकाल दें तो ठीक है। उसके आधार पर हम लोग आन्दोलन करे।

'प्रबन्ध-मजरी' का ११वाँ फॉर्म आज छपकर मिला है। भेजता हूँ, श्री शास्त्रीजी को दे दीजिए। बस दो फॉर्म और है। ३, ४ दिन मे वह भी छप जायँगे। उनके अतिरिक्त सम्पादकीय वक्तव्य, सम्मतियाँ और शुद्धि-पत्र, कोई डेढ फॉर्म होगा। कलकत्ते के प्रेस बडे ही रद्दी है। प्रूफ पढते-पढते आँखो का तेल और कमर का कचूमर निकल गया। पर अशुद्धियाँ फिर भी न निकली। जो छपा हुआ फॉर्म भेजता हूँ, इसमें भी इसका रोना रोया गया है कि कलकत्ते मे शुद्ध पुस्तक नही छपती। श्री शास्त्रीजी महाराज से प्रणाम कहिए। श्री हरिहरनाथ और सुरेश्वरजी को यथा योग्य।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५४

१२, आशुतोष दे लेन,
गागेय-भवन, कलकत्ता
२१-१२-२६

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

आपका पत्र यथासमय पहुँचा। मै इस बीच में ४, ५ दिन के लिए वैद्यनाथ धाम गुरुकुल के उत्सव पर चला गया था। वहाँ से आकर बीमार हो गया था। अभी तक तबीयत साफ नही है। इसी कारण पत्रोत्तर में विलम्ब हुआ। आपने जो लिखा

है ठीक तो है, पर कुछ-न-कुछ हो ही जायगा—

"रात दिन चक्कर में है सात आसमाँ,
हो रहेगा कुछ न कुछ घबरायें क्या।"

आन्दोलन, कहा-सुनी शुरू कर दी है। यहाँ अपने दो भाषणो में भी मैंने चर्चा की थी। हिन्दी प्रेमियो को 'विश्व-भारती' का ध्यान दिलाया था, किसी दिन बिडलाजी से मिलकर कहूँगा। पत्रो में लिखा-पढी करने का विचार है। चतुर्वेदीजी (प० बनारसीदास चतुर्वेदी) 'विशाल भारत' मे व्यस्त है, जरा उधर उन्हे फुरसत मिले, इधर मै निबन्धो की झंझट मे छुट्टी पा जाऊँ, तो कुछ आन्दोलन का प्रोग्राम बने। आशा है, आप सानन्द है। श्री शास्त्रीजी महाराज से प्रणाम निवेदन कर दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५५

१२ आशुतोष दे लेन,
गांगेय भवन, कलकत्ता
१४-१-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

पत्र आपके यथासमय पहुँचे। मानसिक अस्वस्थता से उत्तर न दे सका। श्री शास्त्रीजी की जो संस्कृत कविता 'विशाल भारत' के लिए आई है, वह एन्ड्रूज साहब (देशबन्धु सी० एफ० एण्ड्रूज) की जीवनी में छप चुका हूँ। कविता बहुत सुन्दर है। आजकल तो शास्त्रीजी संस्कृत से रूठे हुए है। प्राकृत के पाले पड गए है। संस्कृत का दुर्भाग्य है। मैंने याद तो कई बार दिलाई पर चौबेजी और ही उधेड-बुन में रहते है। व्यर्थ का पत्र-व्यवहार तो बहुत करते है, पर मतलब की बात भूल जाते है। मालूम हुआ, उन्होने अब तक नहीं लिखा, और अब लिखना बेकार-सा होगा। मुझे इसका अफसोस है। मै अभी उलझन में हूँ। देखिए, यहाँ से कब तक छुटकारा होना है। तबीयत अच्छी नहीं रहती और काम खतम होने मे नहीं आता।

आप शास्त्रीजी से प्रणाम कह दीजिएगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५६

गांगेय भवन
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
३१-१-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते ।

बहुत दिनों से आपका कोई समाचार नहीं मिला । आशा है, आप कुशल में हैं। आपके विरुद्ध दो लेख 'अभ्युदय' में निकले हैं । एक 'भारतेन्दु' में उद्धृत है । शायद आपने न देखे हों । भेजता हूं, पढ लीजिए । आपने नाहक इन लोगों को छेड़ दिया । आप ही के साथ बेचारे चतुर्वेदीजी को भी खरी-खोटी सुननी पड़ी । चतुर्वेदीजी का तो इसमें कुछ कसूर न था, सिवाय इसके कि आपसे परिचय है । जब तक मैंने 'त्यागभूमि' में आपका नोट नहीं पढ़ा था, मैं समझा था कि शायद उसमें आपने प्रसंगवश चतुर्वेदीजी का उल्लेख कर दिया है। पर, वैसी बात भी न निकली । फिर भी चतुर्वेदीजी धर लिए गए । अस्तु, क्या इस पर कुछ लिखेंगे ?

'प्रबन्ध-मंजरी' के दो फार्म भूमिका आदि के और छपे हैं, जो भेजता हूँ। श्री शास्त्रीजी को दे दीजिए । दो बाकी हैं, छपने पर भेज दूँगा । इतने में इन्हें पढ लें । उनसे प्रणाम भी कह दीजिए । पहुँच लिखिए ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५७

नायक नगला, चांदपुर
२०-३-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते ।

१७-३ का कार्ड मिला । यह जानकर चिन्ता हुई कि आपका अर्द्धांग बीमार है, परमात्मा कुशल करे । 'पखुरियों' का पैकट मैंने उसी दिन उसी रूप में बन्द ही लौटा दिया था । वह शान्तिनिकेतन ही पहुँचा होगा । सम्भव है, आपको मिल गया हो । उसकी भूमिका के बारे में पं० बनारसीदास ने लिखा है कि वह पं० माखनलाल चतुर्वेदी से लिखा देंगे । यही ठीक होगा । वह छायावाद के आचार्य्य हैं । उनके लिखने का कुछ अर्थ होगा । मैं लिख भी देता तो अनधिकार चर्चा होती । अपना कुशल-समाचार लिखिए ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५८

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर, (बिजनौर)
१४-४-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

२, ४ का कृपा-कार्ड मिला। आशा है, आपकी पत्नी को अब आराम होगा। रोगी की और वह भी अर्द्धांग की, परिचर्य्या बड़े पुण्य का काम है। इसे पूरी तत्परता से परम धर्म समझकर करना चाहिए। प्राय साहित्य-सेवी, कवि, उपदेशक और लीडर सेवा-धर्म का डींग मारते हैं। पर घर में कोई बीमार पड़ जाय तो उसकी खबर तक नहीं लेते। कितना पाखण्ड है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप रोगिणी की परिचर्या में संलग्न हैं। जब उन्हें अच्छी तरह आराम हो जाय, तभी कहीं जाने का विचार कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५६

काव्य कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
२४-४-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

१८।४ का कार्ड मिला। यह जानकर दुःख हुआ कि आपका स्वास्थ्य भी खराब है। अपने स्वास्थ्य को संभालते हुए गृहिणी की परिचर्य्या करते रहिए। कोई महादन को जगा रखे रहिए। इस दशा में सत्याग्रह में जाना महा पाप होगा। पाखण्ड में तो सन्देह ही नहीं। सत्याग्रह-संग्राम तो आपके बिना भी स्थगित न होगा, पर रोगिणी की परिचर्या कोई सत्याग्रही आकर न करेगा। फिर आप स्वयं भी रुग्ण हैं।

मैं भी इस बीच में १०-१५ दिन बाकायदा बीमार रहा। अब कुछ आराम है, पर निर्बलता बहुत है। कुशल समाचार लिखते रहिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६०

C/O मध्य भारत हिन्दी साहित्य-
समिति, इन्दौर
२४-५-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते ।

आपका १, ५ का पत्र मुझे यहाँ मिला । मैं प्राय. एक महीने से भ्रमण में हूँ ७, ५ को यहाँ आ गया था । मालवे के ऐतिहासिक तीर्थों के दर्शन की लालसा बचपन ही से थी, जो अब बुढापे मे आकर पूरी हुई । धार, मांडू और उज्जैन देख चुका हूँ । कालिदास की जन्मभूमि (मँदसौर) देखने की इच्छा और है । मौका मिला तो चित्तौर और उदयपुर भी देखूंगा । आपका स्वास्थ्य अब अच्छा है, यह जानकर चिन्ता मिटी। पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ होने पर ही वहाँ जाइए । शान्ति-निकेतन में वेतन तो काफी नहीं मिलता । मै इस बार चतुर्वेदीजी को या शास्त्रीजी को भी लिखूँगा ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६१

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
२२-५-३१

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते ।

'विश्व-भारती' से लौटा हुआ मेरा कार्ड मिला । 'विश्व-भारती' वालो के इस अज्ञान पर दया आई और क्षोभ भी हुआ । सचमुच बडी ही विचित्र बात है । जी चाहता है कि इस दुर्घटना को लेकर पत्रो मे आन्दोलन किया जाय । इस पत्र को प० बनारसीदास चतुर्वेदी के पास भेज रहा हूँ । जरूरत समझेगे तो वह इसकी चर्चा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उत्सव में करेंगे । क्या आप आजकल वहाँ नहीं हैं ? 'विश्व भारती' को छोड आये ? श्री प० विधुशेखरजी महाराज तो वही होगे । आप आजकल क्या कर रहे हे ? आपका जो सचित्र सग्रह प्रकाशित होने को था, उसका क्या हुआ ? आशा है, आप सानन्द है ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६२

आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
मार्गशीर्ष सुदि ३, बुधवार

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

हम लोग उस दिन यथासमय सकुशल यहाँ पहुँच गये। आपको और हिन्दी छात्रो को जो कष्ट हमारे आतिथ्य में हुआ है, उसके लिए क्षमा चाहते हैं और उस कृपाभाव के लिए अनुगृहीत हैं। श्रीमान् शास्त्रीजी महाराज से मेरा सविनय प्रणाम निवेदन कर दीजिए। उनके दर्शन और कृपा-व्यवहार से जो आनन्द प्राप्त हुआ, वह सदा याद रहेगा। शास्त्रीजी को 'पद्म-पराग' से हृषीकेश भट्टाचार्यजी की जीवनी सुना दीजिए और प्रार्थना कर दीजिए कि संस्कृत निबन्धो पर अपनी शुभ सम्मति लिखकर अनुगृहीत करें। निबन्धो के २-३ फार्म और छपने बाकी हैं। छपते ही भेजूंगा। थोडा समय निकालकर शास्त्रीजी यदि इतने में उन फार्मो को पढ जायें जो उनकी सेवा में पहुँच गये हैं, तो बडी कृपा होगी। श्री हरिहरनाथ और विश्वेश्वर वर्मा को आशीर्वाद कह दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६३

आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
मार्गशीर्ष शु० ८ सोम

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

कृपा-कार्ड मिला। 'प्रबन्ध-मंजरी' का १२वाँ फार्म भेजता हूँ। श्री शास्त्रीजी को दे दीजिए। एक फॉर्म है, जो परसो छप जाएगा। बस फिर सम्पादकीय वक्तव्य, सम्मतियाँ और शुद्धि-पत्र बाकी रहेगा। सम्मति सिर्फ शास्त्रीजी की मिल जाय तो भी काम चल जायगा। लिखा तो दो एक जगह और भी है, पर ऐसी निरर्थकता पर पंडित लोग अपनी अमूल्य सम्मति नहीं देते। शारदा बिल के विरोध में चाहे जितनी सम्मतियाँ ले लो। खैर, कहीं से आ जाय तो अच्छा है। नहीं तो न सही। गुरुदेव को अभी लिखने के लिए चतुर्वेदीजी से प्रेरणा-पत्र लिखवाऊँगा। आन्दोलन का वही क्रम ठीक है, जो आपने लिखा है। यही हम लोगो ने सोचा था। 'विश्वमित्र' और 'स्वतन्त्र' के सम्पादको को तो आन्दोलन मे सहयोग के लिए राजी कर लिया है। पुस्तकालय की ओर से हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ के लिए पत्र भिजवाइए तो कुछ पत्र-

पत्रिका पहुँचने लगे। जब तक रहने का संकल्प किया है, डटे रहिये। दिक्कतें भी दूर होती जायेंगी। आपके बारे में भी चतुर्वेदीजी से लिखवाऊँगा। वेतन के अतिरिक्त कम से कम भोजन तो और मिले। भोजन-भण्डार में मासिक क्या लिया जाता है? यह मैं जानने के लिए—दूसरी संस्थाओं से मुकाबिला करने के लिए पूछता हूँ। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

पुस्तकालय में 'सतसई' है या नहीं। यह आपने मालूम किया? न हो तो भिजवाऊँ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९

श्री द्वारकाप्रसाद 'सेवक' को लिखे गये पत्र

१६४

श्रावण वदि ४, १९७३

प्रिय सेवकजी, नमस्ते।

२३-७ का कृपा-पत्र मिला। मुझे प्रसन्नता हुई कि आपने उसे उसी भाव से समझा जिससे प्रेरित होकर मैंने उसे लिखा था। यह ठीक है कि कभी-कभी परिस्थिति आदमी को ऐसा काम करने के लिए विवश कर देती है जिसे वह हृदय से नहीं चाहता। पर अक्सर ऐसा भी होता है कि परिस्थिति किसी काम करने के लिए बहाना बनाली जाती है, प्रत्येक कार्य के लिए कारण अपेक्षित है। आजकल जितने काम देश और जाति-हित के नाम पर किए हैं, उन सबका कारण परिस्थिति ही होती है। वेदान्तियों की माया के समान परिस्थिति का कार्य अनन्त और निःसीम है। परिस्थिति पिशाची का परिवार बहुत बड़ा है। आजकल धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक जगत् में जो कुछ हो रहा है सब उसी का पसारा है। परिस्थिति का रचा रूप अनिर्वचनीय है। उसे मृग-मरीचिका समझो या गन्धर्वनगर। अनेक रूपों से धोखा देकर वह आदमियों को फसाती है। पुलिस के समान अपनी जरूरत साबित करने के लिए यह कोई न कोई काण्ड रचती ही रहती है। क्या करें परिस्थिति ही ऐसी है। इच्छा न रहते हुए भी यह सब कुछ करना पड़ रहा है। प्रत्येक कार्य का औचित्य सिद्ध करने के लिए यह एक अकाट्य युक्ति है। वेदान्त-मत से माया का नाश हो जाता है, परिस्थिति ज्ञान ही के पेट में पलती है। इसकी माया ने सबको मर्कट की नाईं नचा रक्खा है। पत्र भी परिस्थिति ही निकलवाती है, लीडर भी यही बनाती है और अनुयायियों को भी यही मुंड़वाती है। प्रतिभा-शून्यों को सद्य कवि और पल्लवलुण्ठकों को लेखक-शिरोमणि बनाकर साहित्य-निर्माण और साहित्य-सेवा भी यही कराती है। जो कौंसिलों में जाना और गवर्नमेण्ट से किसी प्रकार का सहयोग करना पाप समझते थे ऐसे असहयोगियों को और परिवर्तनवादियों को कौंसिलों में यही भेज रही है। हिन्दू-मुस्लिम मेल से स्वराज्य का सुख-स्वप्न देखने वाले आल इण्डिया लीडरों को [illegible] से यही नहीं निकलने देती। हिन्दू जाति में अनेक जयचन्द इसी परिस्थिति की कृपा से अवतीर्ण हो रहे हैं। आर्यसमाज का नाना-रूप इसी ने किया है। मज़ा हो रहा है कि एक ही उद्देश्य और एक ही लक्ष्य रखने वाले एक ही समाज के व्यक्तियों

को उँगली दिखाकर यही भिन्न दिशाओ मे सरपट दौडाती है, गर्ज़ यह कि सब अपनी-अपनी धुन मे मस्त है।

"न वह मेरी सुनता न मैं नासहो की,
नहीं मानता कोई कहना किसी का।"

आप भी इसी परिस्थिति के चक्कर में पडकर यह वेतालोत्थापन करने चले है, परमात्मा परिस्थिति को आपके अनुकूल रक्खे। कही दो कदम चलकर यह कमबख़्त धोखा न दे जाय।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६५

वनारस
भाद्रपद सुदि ३, १८७५

प्रियवर महाशयजी, नमस्ते।

आपकी भेजी हुई 'प्रवासी भारतवासी' पुस्तक मुझे कल की डाक से मिली, इससे पहले आपकी भेजी हुई रिपोर्ट और सूचनाएँ भी मिली थी। इस कृपा के लिए अनेक हार्दिक धन्यवाद। आपने 'प्रवासी भारतवासी' जैसी सुन्दर और अपने ढग की अपूर्व पुस्तक प्रकाशित करके हिन्दी और हिन्दुस्तान का बडा उपकार किया है। इस स्तुत्य कार्य से आपने अपनी 'सेवक' उपाधि को सच्ची सिद्ध कर दिया है। धन्योसि-कृतकृत्योसि। पुस्तक को आद्यन्त पढकर इस पर अपनी विस्तृत सम्मति किसी पत्र में प्रकाशित कराऊँगा।

पुस्तक पढकर 'एक भारतीय हृदय' पर मेरी श्रद्धा बढ गई है। यदि कोई नितान्त गोपनीय 'रहस्य' न हो तो मै इन महाशय का नाम-धाम जानने के लिए उत्कठित हूँ। क्या 'एक भारतीय' और 'एक भारतीय हृदय' एक ही बात है?

इस अत्यन्त परिश्रमसाध्य और अत्यधिक महत्त्वपूर्ण सुन्दर पुस्तक लिखने के लिए आप उनकी सेवा मे मेरे अनेक साधुवाद और धन्यवाद पहुँचाइए। मेरा दिल बडा कमज़ोर है। करुणाजनक दुर्घटना का वर्णन पढते उसकी दशा बडी दयनीय हो जाती है। प० तोतारामजी की पुस्तक जब मुझे समालोचना के लिए पढनी पडी थी वह बात मुझे अब तक याद है। आपने तो यह रोने का इतना मसाला—'विश्व-कोश' भेज दिया है कि इसे देखने का ताब मै ला सकूँगा, इसमें पूरा शक है।

पुस्तक में प० तोतारामजी का चित्र न देखकर खेद हुआ। उनका चित्र अवश्य होना चाहिए था और सबसे पहले चाहिए था। यह कमी बार-बार खटकती है। इस

कमी का कारण क्या है ? जिस वीर कुमारी वोलभमा के स्मरण में पुस्तक प्रकाशित हुई है उसका उल्लेख भी जरा विस्तृत होना चाहिए था। पर, इसका सर्वथा अभाव-सा है। पृ० २१२ पर एक वार उल्लेख हुआ, सम्भव है किसी दूसरी जगह इसका विशेष वृत्तान्त दिया गया है। जो मेरी नजर अभी नही पडा।

(प्रवासी भारतीयो के नेताओ में 'प्रवासी भारतवासी' के लेखक की भी गणना होनी चाहिए। इनका यह उपकार किसी से कम नही है।)

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६६

आषाढ़ सुदि
७, १७८३

प्रिय सेवकजी, नमस्ते।

आपका १३,७ का प्रेमपूर्ण कृपा-पत्र पाकर आश्चर्य भी हुआ और खेद भी। आपको पत्र-प्रकाशन का उन्माद रोग फिर प्रवल हो उठा। फिर जनून जाग गया। पत्र और पुस्तक-प्रकाशन के व्यसन मे सर्वस्व स्वाहा करके भी आपकी बुद्धि ठिकाने न आई। यही आश्चर्य है फिर आप उसी 'गलदघ्न' पक में फँस रहे हैं। इसका खेद है। क्या आपका यह रोग 'क्षेत्रज' है ? इसकी कोई चिकित्सा नही। परमात्मा इससे आपका पिण्ड छुटावे। और आप शेष जीवन सुख, शान्ति मे व्यतीत कर सकें यही प्रार्थना है। आखिर आप 'वैदिक सदेश' किसे सुनाना चाहते है? भैंस से बीन की दाद लेना चाहते है। वानर को दर्पण दिखाना चाहते है ? आर्यसमाज पर कुछ दम्भी और स्वार्थी लीडरो का कब्जा है। आपकी स्वतन्त्र आवाज़ कौन सुनेगा? किसी पार्टी का पक्ष-समर्थन करो तो सम्भव है कुछ दिन पत्र चल जाय। आर्यसमाज का इतिहास मुसल्लिमा लीडर लोग लिखते है। लीडरो का जीवन ही समाज का इतिहास है। उनका कथन ही समाज के सिद्धात है। जिसे वह आर्य कहे वह आर्य है। नक्कारखाने मे आपकी तूती की आवाज कौन सुनेगा ? अफसोस है इतने दिन आर्यसमाज में रहते हो गये और आर्य-समाज की गतिविधि का आपको ज्ञान न हुआ। मेरे लिए तो आर्यसमाज एक भूला हुआ राग है। कोई-कोई बोल याद रह गया है। भूली-बिसरी बातें याद दिलाकर अप्रिय प्रसग क्यो छेडना चाहते है। क्षमा कीजिए, मै अब इन बखेडो में नही पडना चाहता, अब आखिरी वक्त मे पुराने लीडरो से कुफ्र का नया फतवा लेने की हिम्मत नहीं है। छेडकर (हाज़) लीडर को नाहक (खुल्द) स्वर्ग से, बिस्तरा क्यो अपना फिकवाते है आप।

आपकी रगो मे अभी नया खून जोश मार रहा है। लडिए-झगडिए, पर मै वह

को उँगली दिखाकर यही भिन्न दिशाओ मे सरपट दौडाती है, गर्ज यह कि सब अपनी-अपनी धुन में मस्त हैं।

"न वह मेरी सुनता न मैं नासहो की,
नहीं मानता कोई कहना किसी का।"

आप भी इसी परिस्थिति के चक्कर मे पडकर यह वेतालोत्थापन करने चले है, परमात्मा परिस्थिति को आपके अनुकूल रक्खे। कही दो कदम चलकर यह कमवख्त धोखा न दे जाय।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६५

बनारस
भाद्रपद सुदि ३, १८७५

प्रियवर महाशयजी, नमस्ते।

आपकी भेजी हुई 'प्रवासी भारतवासी' पुस्तक मुझे कल की डाक से मिली, इससे पहले आपकी भेजी हुई रिपोर्ट और सूचनाएँ भी मिली थी। इस कृपा के लिए अनेक हार्दिक धन्यवाद। आपने 'प्रवासी भारतवासी' जैसी सुन्दर और अपने ढग की अपूर्व पुस्तक प्रकाशित करके हिन्दी और हिन्दुस्तान का वडा उपकार किया है। इस स्तुत्य कार्य से आपने अपनी 'सेवक' उपाधि को सच्ची सिद्ध कर दिया है। धन्योसि-कृतकृत्योसि। पुस्तक को आद्यन्त पढकर इस पर अपनी विस्तृत सम्मति किसी पत्र में प्रकाशित कराऊँगा।

पुस्तक पढकर 'एक भारतीय हृदय' पर मेरी श्रद्धा वढ गई है। यदि कोई नितान्त गोपनीय 'रहस्य' न हो तो मैं इन महाशय का नाम-धाम जानने के लिए उत्कठित हूँ। क्या 'एक भारतीय' और 'एक भारतीय हृदय' एक ही वात है ?

इस अत्यन्त परिश्रमसाध्य और अत्यधिक महत्त्वपूर्ण सुन्दर पुस्तक लिखने के लिए आप उनकी सेवा में मेरे अनेक साधुवाद और धन्यवाद पहुँचाइए। मेरा दिल वडा कमजोर है। करुणाजनक दुर्घटना का वर्णन पढते उसकी दशा वडी दयनीय हो जाती है। प० तोतारामजी की पुस्तक जव मुझे समालोचना के लिए पढनी पडी थी वह वात मुझे अब तक याद है। आपने तो यह रोने का इतना मसाला—'विश्व-कोश' भेज दिया है कि इसे देखने का ताब मै ला सकूँगा, इसमें पूरा शक है।

पुस्तक में प० तोतारामजी का चित्र न देखकर खेद हुआ। उनका चित्र अवश्य होना चाहिए था और सबसे पहले चाहिए था। यह कमी बार-बार खटकती है। इस

कमी का कारण क्या है ? जिस वीर कुमारी बोलभमा के स्मरण में पुस्तक प्रकाशित हुई है उसका उल्लेख भी ज़रा विस्तृत होना चाहिए था। पर, इसका सर्वथा अभाव-सा है। पृ० २१२ पर एक वार उल्लख हुआ, सम्भव है किसी दूसरी जगह इसका विशेष वृत्तान्त दिया गया है। जो मेरी नज़र अभी नही पड़ा।

(प्रवासी भारतीयो के नेताओ में 'प्रवासी भारतवासी' के लेखक की भी गणना होनी चाहिए। इनका यह उपकार किसी से कम नही है।)

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६६

आषाढ़ सुदि
७, १७८३

प्रिय सेवकजी, नमस्ते।

आपका १३,७ का प्रेमपूर्ण कृपा-पत्र पाकर आश्चर्य भी हुआ और खेद भी। आपको पत्र-प्रकाशन का उन्माद रोग फिर प्रबल हो उठा। फिर जनून जाग गया। पत्र और पुस्तक-प्रकाशन के व्यसन मे सर्वस्व स्वाहा करके भी आपकी बुद्धि ठिकाने न आई। यही आश्चर्य है फिर आप उसी 'गलदघ्न' पक में फँस रहे है। इसका खेद है। क्या आपका यह रोग 'क्षेत्रज' है ? इसकी कोई चिकित्सा नही। परमात्मा इससे आपका पिण्ड छुडावे। और आप शेष जीवन सुख, शान्ति से व्यतीत कर सकें यही प्रार्थना है। आखिर आप 'वैदिक सदेश' किसे सुनाना चाहते है? भैंस से बीन की दाद लेना चाहते हैं। वानर को दर्पण दिखाना चाहते है ? आर्यसमाज पर कुछ दम्भी और स्वार्थी लीडरो का कब्ज़ा है। आपकी स्वतन्त्र आवाज़ कौन सुनेगा? किसी पार्टी का पक्ष-समर्थन करो तो सम्भव है कुछ दिन पत्र चल जाय। आर्यसमाज का इतिहास मुसल्लिमा लीडर लोग लिखते है। लीडरो का जीवन ही समाज का इतिहास है। उनका कथन ही समाज के सिद्धात है। जिसे वह आर्य कहे वह आर्य है। नक्कारखाने में आपकी तूती की आवाज़ कौन सुनेगा ? अफसोस है इतने दिन आर्यसमाज में रहते हो गये और आर्य-समाज की गतिविधि का आपको ज्ञान न हुआ। मेरे लिए तो आर्यसमाज एक भूला हुआ राग है। कोई-कोई बोल याद रह गया है। भूली-बिसरी बातें याद दिलाकर अप्रिय प्रसंग क्यो छेडना चाहते है। क्षमा कीजिए, मै अब इन बखेडो में नही पड़ना चाहता, अब आखिरी वक्त में पुराने लीडरो से कुफ्र का नया फतवा लेने की हिम्मत नही है। छेडकर (वाइज़) लीडर को नाहक (खुल्द) स्वर्ग से, बिस्तरा क्यो अपना फिकवाते है आप।

आपकी रगो में अभी नया खून जोश मार रहा है। लडिए-झगडिए, पर मै वह

दिल कहाँ से लाऊँ। मैं तो आपको यह सम्मति दूँगा कि इन बातों में कुछ नहीं रक्खा। गड़े मुर्दे न उखाड़िए। नाहक बदबू फैलेगी, साहित्य सेवा के बिना नहीं रहा जाता तो कुछ अच्छी-अच्छी पुस्तकें (दो-चार ही सही) प्रकाशित कीजिए।

आपने जाने इतनी उम्र में क्या क्या ऊधम मचाया। दर्जन-भर पत्र निकाले और पचासों पुस्तकें प्रकाशित कीं। पर मुझे सिर्फ एक चीज पसन्द आई वही तुम्हारी अब तक साहित्य-सेवा के नाम पर की गई सब मलों का यही प्रायश्चित्त है। यानी 'प्रवासी भारतवासी'। उसे अप-टू-डेट सम्पादित कराकर फिर प्रकाशित कीजिए। जिससे आपके भी पल्ले कुछ पड़ जाए, और आपकी साहित्य-सेवा की भी एक काबिल कदर यादगार बनी रहे। बाकी बातें फिजूल हैं, व्यर्थ के आन्दोलनों में पड़कर क्यों समय और पैसा नष्ट करते हो, इस अप्रिय सम्मति के लिए क्षमा चाहता हुआ—

आपका शुभचिंतक
पद्मसिंह शर्मा

१६७

२१ अगस्त, १९२६

प्यारे सेवकजी, नमस्ते।

चिट्ठी मिल गई। समाचार ज्ञात हुए आर्यसमाज के विषय में मैं किसी हद तक निराश हूँ। मेरा खयाल है कि आर्यसमाज वेद, वैदिक धर्म और ऋषि दयानन्द को पीछे छोड़कर अधिकांश संस्था-सेवक हो गया है। मैं समझता हूँ, आर्यसमाज का यह संस्थावाद एक संक्रामक रोग की भाँति आम होता जाता है और कष्टसाध्य भी होता जाता है। इस समय आर्यसमाज का जितना भी कार्य है और उसमें जितनी भी शक्ति खर्च हो रही है उसका अधिक भाग अपनी पार्टी की दृढ़ता में लग रहा है। मैं यह मानता और जानता हूँ कि आर्यसमाज प्रचार का काम भी कर रहा है। और उस प्रचार कार्य में वैदिक धर्म भी शामिल है। मगर आर्यसमाज के भीतर रहने वाला कोई भी ईमानदार आदमी अपने को धोखा नहीं दे सकता। और यह समझे बिना भी नहीं रह सकता कि इतना कुछ ऊपर वाली दोनों बातों के लिए ही है। और इस प्रचार के भीतर भी मुख्य उद्देश्य अपनी संस्था का संचालन और अपनी पार्टी की प्रभुता ही काम कर रही है। हो सकता है मेरा यह भ्रम हो, मेरी अपनी मानसिक निर्बलता का नतीजा हो। पर आर्यसमाजियों की वर्त्तमान अवस्था और उनके कार्यक्रम को देख कम से कम मेरे मन में जो भाव पैदा हो रहे हैं, वे ऐसे ही हैं और मेरे जैसे और भी कई मनुष्यों के निराश होने में सहायक हुए हैं। आर्यसमाज इस समय दो भागों में बँट गया है। एक भाग तो पुराने हिन्दूवाद में मिलता जा रहा है, और

दूसरा नये ढग के—अंग्रेजी ढग नास्तिकवाद में। आर्गसमाज को पुराने हिन्दूवाद में मिलाने वाले उसके वे उपदेशक हुए हैं, जो वैदिकधर्मी न होते हुए वेतनभोगी प्रचारक थे और हैं। इसके विपरीत वेद, वैदिक धर्म और स्वामी दयानन्द को राजनैतिक हथियार बनाने वाले बाबुओ ने इसे अश्रद्धा, अविश्वास और वास्तविकता की खोह में ले जा फेका है। फिर भी मै स्वामी दयानन्द और उनके निर्मल परिश्रम पर विश्वास रखता हूँ कि वह सब अकारथ नही होगा, और कभी न कभी उसका सत्परिणाम अवश्य निकलेगा। आपका सन्देश यदि सचमुच 'वैदिक सन्देश' ही के रूप मे आर्यसमाज को इस गहरे गढे से निकालने में काम कर सके और एक निर्मल दूत का-सा कर्तव्य-पालन कर सके तो मै उसका जीवन सफल समझूँगा। ईश्वर से प्रार्थी हूँ कि वह आपके सन्देश में बल पैदा करे, जीवन पैदा करे और उसे चिरायु करे।

आपका एक अभागा भाई

पद्मसिह शर्मा

१०

डॉक्टर हरदत्त शर्मा को लिखे गये पत्र

१६८

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
१४-२-३१

प्रिय पण्डितजी, नमस्कार।

आपका ८-२ का कृपा-पत्र मिला, अनुगृहीत हुआ। आपकी कृपा सीमा का उल्लघन कर रही है। जर्मनी के लिए दो पुस्तकें आपकी सेवा में भेजता हूँ, एक आपके जर्मन-निवासी गुरु महोदय के लिए, एक जर्मनी के उस पुस्तक-विक्रेता के लिए। आप ही अपने पत्र के साथ वहाँ भेज दीजिये। 'प्रबन्ध-मजरी' पर २०) रु० सैकडा कमीशन दिया जाता है। वहाँ के लिए जो आप उचित समझे लिख दीजिये। 'प्रबन्ध-मजरी' अर्थ-लाभ के लिए प्रकाशित नही की गई, इसका प्रचार अभीष्ट है। जर्मनी में एक सज्जन ने 'पद्मपराग' मँगाया था। उनके पास दो प्रतियाँ 'प्रबन्ध-मजरी' की मुफ्त भेज दी थी। तीन महीने से ऊपर हुआ पहुँच नही आई। उनका पता भेजता हूँ, उन्हे भी एक पत्र आप मेरी ओर से लिख दें तो कृपा हो। 'प्रबन्ध-मजरी' की एक कापी प० रामकिशोर शुक्ल एडवोकेट को इसमें से भेंट कर दीजिये। लखनऊ भी एक कापी श्रीवास्तवजी को भेंट में ही भेज दी जायगी। और जिन सज्जनो को आप भिजवाना उचित समझे भिजवा सकते है। आपके मित्रो को वी० पी० से भेजना उचित नही मालूम होता। 'साख्यकारिका' की टीका पहुँच गई, अनेक धन्यवाद। उसकी भूमिका आपने सस्कृत मे न लिखी। एक काम और है, और आप ही के करने का है। स्वर्गीय प० रामावतारजी ने 'सदुक्तिकर्णामृत' लाहौर से प्रकाशित कराया था। वह उसकी भूमिका लिखने न पाये थे कि स्वर्गवासी हो गये। दो वर्ष से पुस्तक छपी पडी है। मै उसे देखने के लिए लालायित हूँ। प्रकाशक से मैने अनुरोध किया कि उसे शीघ्र निकालो। उन्होने लिखा कि डा० हरिश्चन्द्र भूमिका लिख रहे है। मैने फिर लिखा कि वह भूमिका लिखने में विलम्ब करें तो किसी और से लिखा लो। उनका (प्रकाशक का) आज पत्र आया है। लिखा है कि भूमिका आप लिख दीजिए। पर, यह काम आप अच्छा कर सकेंगे। सस्कृत और अग्रेजी में एक अच्छी भूमिका लिख दीजिए। कुछ

सहायता मे भी दे दूंगा। शुद्धि-पत्र भी दूंगा। और भी यथामति परामर्श दूंगा। इस काम को जरूर कर दीजिये। बडा ही अदभुत और अलभ्य ग्रन्थ है। सस्कृत में जितने सग्रह है उन सबसे श्रेष्ठ है। उसकी सिर्फ एक ही कापी प० रामावतारजी के पास थी। प्रकाशक ने पारिश्रमिक के लिए भी पूछा है। सो जो आप उचित समझे बतलाइए। उनसे तै कर लूं। लाहौर के प्रकाशक लोभी बहुत हैं। कुछ अधिक तो आशा नही, फिर जितना कम से कम उचित हो तै कर लिया जाय। पुस्तक ४२८ पेज की बतलाते है। सब तैयार है। सिर्फ शुद्धि-पत्र और भूमिका बाकी है। इस काम को आप कर ही डालिये। यश और परोपकार दोनो प्राप्त होगे। विचारकर उत्तर दीजिए।

जर्मनी मे पुस्तक भेजने का जो व्यय हो कृपया लिख दीजिये। भेज दिया जायगा। मेरे घर मे पाँच-छ महीने से बीमार है। दशा चिन्ताजनक हो रही है। इसी कारण व्यग्रता की दशा मे हूँ। जल्दी-जल्दी पत्र घसीट रहा हूँ। क्षमा कीजिये जर्मनी का जो छपा हुआ पता भेज रहा हूँ, इसे देखकर लौटा दीजिये। इस पते पर २ प्रतियाँ 'प्रबन्ध-मजरी' की १४ अक्टूबर सन् ३० को भेजी थी। पहुँच नही आई। इन्हे आप एक पत्र लिख दे तो अच्छा हो। पुस्तके पहुँची कि नही। आपको बहुत कष्ट दे रहा हूँ, क्षमा कीजिये। 'लीडर' में समालोचना भेज दूंगा। इसके लिए बहुत कृतज्ञ हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
१७-४-३१

प्रिय डाक्टर साहब, नमस्ते।

आपका १४,४ का कृपा-पत्र अभी शाम के वक्त मिला। इसी समय रात मे पार्सल बँधवा रहा हूँ, जिससे कल पोस्ट हो जाय। क्योकि परसो रविवार है। शार्ङ्गधर पद्धति मे भूमिका है ही नही। सम्पादन पीयर्सन साहब ने किया है। उन्हे जो कुछ मालूम था वह सब सुभाषितावलि की भूमिका में लिख चुके है। कवीन्द्र-वचनसमुच्चय और सोसाइटी वाले दोनो अक भेजता हूँ। 'सदुक्तिकर्णामृत' का सम्पादन और मुद्रण बडा भद्दा हुआ है। अशुद्धियाँ बहुत और 'पकचुएशन' तो है ही नही। कागज की बहुत किफायत की गई है। इसकी कोई कापी और मिल जाय तो जो कई पद्य इसमें खडित है उन्हे ठीक कर दीजिये। मै शुद्धि-पत्र बनवा रहा हूँ, बाकी बाते

फिर लिखूंगा। प्रकाशक भूमिका शीघ्र मांग रहे हैं। ये कापी उन्हें लौटानी होगी। दूसरी कापियाँ भूमिका छपने पर आवेंगी। ऐसा उन्होंने लिखा है। आप अधिक परिश्रम न कीजिये। चलता काम कर दीजिये। प्रकाशक पुरस्कार कुछ भी नहीं दे रहे। सिर्फ ५०) और चार कापियाँ देंगे। अस्तु।

जर्मनी से आपके मित्र प्रोफेसर साहब ने 'प्रबन्ध-मंजरी' की पहुँच का एक कार्ड भेजा है, जो कल ही मिला है। आपकी कृपा से 'प्रबन्ध-मंजरी' की चर्चा जर्मनी में भी हो गई है। यह बड़ी बात हुई। 'मंजुभाषिणी' वालों का क्या उत्तर आया, अभी मालूम नहीं हुआ। पं० हरिदत्त शास्त्री ने ज्वालापुर से समालोचना भेजी थी, उनसे पूछता हूँ। पुस्तकें डाक से भेजता हूँ, रेलवे से दिक्कत होती है।

प्रहसन की कापी भेज रहा हूँ। इसे नागराक्षरों में लिखवाइये। फिर देख दूँगा। भाषा खासी है। पर यह प्रहसन विलायती समाज की चीज़ है। भारतीय संस्कृति के अनुकूल न होने से कुछ अटपटा-सा मालूम होता है। जर्मन भाषा से किसी अच्छे उत्कृष्ट साहित्य का हिन्दी में अनुवाद कीजिये। इन्फ्लुएंजे की निर्बलता अभी बाकी है। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७०

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)

स्वस्ति। श्रीमन्तं विनयार्जवादिगुणगरिष्ठं विद्वद्वरिष्ठं डाक्टर पण्डित श्रीहरदत्तशर्माणमन्तस्तलोद्धृतेनाशीर्वचसा नमस्कारेण चप्रीतिप्रह्वेन चेतसा सस्नेहं सभाजयति तत्सौजन्यवशीकृतस्वान्तः पद्मसिंह शर्मा। समवाप्य श्रीमतः कृपापत्रं हर्षपात्रमस्मि संवृत्तः। यत्सत्यं पठ्यमानं तत्प्रत्यक्षरं प्रक्षरति सुधासोदर्यं किमपि माधुर्यम्। विनयमहिम्नाऽनेन सर्वानपि समुत्तीर्णसागरान् दृष्टविद्यापारावारान् डाक्टरपण्डितानतिशेते भवान्। यदेवमसंस्तुतेऽपि मादृशि जने विनयमधुरमात्मीयोचितं व्यवहरति, स्निह्यति, चाहैतुकं तदेतज् ज्ञापयति सहजं भवदौदार्यम्। दुर्लभा एवैवंविधा लब्धवर्णा समुपलब्धपाश्चात्यदर्शनेषु विद्वत्सु। अचिन्तितचरमेतच्चकितं करोति चेतः। परं शतानि धन्यवादानर्हति प्रेष्ठ. श्रीहरिशंकर शर्मा, येन निर्माय प्रशस्यं यथार्थं परिचयं प्रापितः सौजन्यवान् भवान्। अपिच कार्यवशाद् असौडा ग्राम गतेन ेमिता साकमायुष्मता काशीनाथ शर्मणा साक्षात्कारः समजनि, सोऽपीदानीं भवत्पत्रमनुवाच्य संस्मृत्य च तं तत्साक्षात्कारमसमयं सुतरां प्रशंसति भवद्गुणगणान्। एवमाप्तसाक्षिद्वयसद्भावे भवन्त-

मधि क प्रतारणावसर । भवानेवात्मनिह्नुत्या मामभिसन्धातुमीहते ।

इग्लिशभाषामाघ्रायापि प्राय संस्कृतज्ञा विपश्चितो दैवी वाच प्रति वीतरागा भवन्ति, सर्वत्र इग्लिशभाषयैव व्यवहरन्ति । भवतस्तु तद्भाषापारदृश्वनोऽपीत्थ संस्कृतानुराग विलोक्य परम प्रमोदप्रवाह समाप्लावयति हृदयक्षेत्रम् । वाछामि-चेममुत्तरोत्तर वर्धमान गीर्वाण-वाणीप्रेमाण भवत ।

मन्ये समवलोकिता समयेनैतावता प्रबन्धमजरी श्रीमता । यदि तत्र सुरभारती-भक्ताना विदुषा विद्यार्थिना वोपादेय किमपि वस्तु प्रतीयेत, तर्हि 'माडर्न रिव्यू', लीडरादिके कस्मिश्चिद् इग्लिशभाषापत्रे 'विशालभारते' वा तत्समालोचना विधायोप-कुर्वन्तु सुरभारतीमिति । विनिवेद्य विरमामि

भवदीय

...मसिंह शर्मा

पुनश्च—

मदीयो निबन्धसग्रह पद्मपरागाभिधो दृष्टिपथमुपगत श्रीमत ? अस्तिचेद्दि दृक्षा प्रेषयामि किमु ?

११

श्री वैद्य कल्याणसिंहजी को लिखे गये पत्र

१७१

'आर्यमित्र', आगरा

आश्विन पितृपक्ष, १०, १९८२

प्रियवर, नमस्ते।

आपका वह कार्ड जिसमे आपने मुझे रात को आराम मे सोने की सलाह दी थी और फिर पार्सल और मज़ेदार विस्तृत पत्र भी मिला। मै इस बीच में बहुत ही व्यग्र रहा था। या आपकी सलाह पर अमल करके सोता रहा। जो कुछ हो, अब तक आपके पत्र का उत्तर और पुस्तक की पहुँच न लिख सका। इस जुर्म का मै कोरे कागद पर इकबाल करता हूँ। मुझे भी ओझाजी की सम्मति दरकार थी। उसके लिए जल्दी थी। फार्म रुका हुआ था। इस दशा में 'नार्त काल प्रतीक्षते' के अनुसार तकाजे की चुटकी आपकी ली थी। सो भई, तुम तलमला उठे। खाने वाले और परोसने वाले का ताना देने लगे। खैर, माफ कीजिए और सम्मति तथा पुस्तक भिजवाने के लिए अनेक धन्यवाद स्वीकार कीजिए। श्री ओझाजी महाराज से भी मेरा प्रणाम निवेदन कीजिए। कृतज्ञता प्रकाश पूर्वक मेरी ओर से।

आशा है, आप सानन्द है। पुस्तक की छपाई से कल छुट्टी पा जाऊँगा। अभी दस-पाँच दिन यही हूँ।

भवदीय

पद्मसिह शर्मा

१७२

काव्य-कुटीर, नायक नगला,

चांदपुर (बिजनौर)

असोज सुदि १, १९८४

प्रिय मित्र, नमस्ते।

इधर बहुत दिनो से आपका कुशल समाचार नही मिला, आशा है, आप सपरिवार सानन्द है। श्रद्धेय ओझाजी से एक बात पूछकर शका-समाधान कराइये।

सम्राट् हर्षवर्धन वैश्य गुप्त बनिये थे कि विशुद्ध क्षत्रिय। बैस वंशी क्षत्रिय क्या वैश्य वर्ण का ही अपभ्रंश है, या केवल शब्द-साम्य के आधार पर बैस की शुद्धि करके 'वैश्य' बनाया जा रहा है। बा० भगवानदास एम० ए० ने अपने एक नवीन लेख में हर्षवर्धन और उज्जयिनी के गुप्तवंशी राजाओं को वैश्य वर्ण के पूर्व पुरुष सिद्ध किया है और अपने अनुकूल प्रसिद्ध ऐतिहासिक विद्वान् वैद्य महाशय का भी यही मत लिखा है। श्री ओझाजी की इस बारे में क्या सम्मति है, सो मैं जानना चाहता हूँ, सो भी स्वान्त सन्तोषाय, किसी विवाद में पड़ने के लिए नहीं। एक महाशय चौधरी धनराज सिंह बी० ए० हैं वह अपने लेखों में बड़ी-बड़ी अश्रुतपूर्व कल्पनाएँ उपस्थित करते रहते हैं। क्या उन पर आस्था की जा सकती है, श्री ओझाजी का उन कल्पनाओं के सम्बन्ध में क्या मत है यह भी मैं जानना सिर्फ जानना वह भी प्राइवेट तौर पर चाहता हूँ। 'माधुरी' में श्री ओझाजी ने रेऊजी को अच्छा पाठ पढ़ाया है। तबीअत खुश हो गई।

श्री ओझाजी की सेवा में मेरा प्रणाम निवेदन कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७३

गुरुकुल, कांगड़ी,
(बिजनौर)
ज्येष्ठ सुदि १४, १९८५

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते।

आपका घर के पते पर भेजा हुआ १४-५ का 'बधाइयाँ वाला' कार्ड मुझे कल मिला। मैं कोई दो महीने से यहीं आ गया हूँ। सम्मेलन के सभापतित्व के लिए बधाई नहीं सहानुभूति चाहिए। परिस्थिति संकटमयी है। रंग-ढंग अच्छे नहीं हैं, जो कुछ हो।

"बीम वादा वाद मा कश दराब अन्दाखतम।"

मौसम अच्छा नहीं, जगह दूर है, बहुत कम साहित्य-सेवी इस धर्म-संगर में सम्मिलित हो सकेंगे। आपके सम्मिलित होने की तो सम्भावना ही नहीं। उधर गर्मी का क्या हाल है ? यहाँ तो भयानक गर्मी है। बाढ़ के बाद शायद आप इधर नहीं आये, नकशा ही बदल गया। वह दिन याद आते हैं। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७४

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
अगहन सुदि ६, १९८५

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते ।

आपका २४-११ का कृपापत्र मिला । पढकर प्रसन्नता हुई । देश में महत्त्वाकाक्षा और प्रतिष्ठा-लोलुपता का दौरात्म्य बुरी तरह बढ रहा है । यह सक्रामक रोग क्षेत्रीय हो गया है । अस्तु, होने दीजिये । इलाज ही क्या है ? आप यहाँ पधारे तो चश्मे मा रोशन दिले माशाद । उस वक्त मैं ज़बाने हाल और जबाने काल मे पढूं—

"वह आयें घर हमारे खुदा की कुदरत है"

कभी मै उनको, कभी अपने घर को देखता हूँ । यहाँ आने का मौसम तो यही जाडो का अच्छा है । गुड-गन्ने की बहार है । इस वर्ष कुछ पौंडे भी बोये है । दूध भी हो रहा है । चने, बथुए और सरसो का साग भी है । धान की रोटियाँ जो यहाँ की और सिर्फ यहाँ की खास न्यामत है । गर्ज़ कि अल्पव्ययेन…ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति का मामला है । हो सके तो आइए । मै कल असौडे (हापुड) काशीनाथ के पास जा रहा हूँ । पूर्णिमा के पीछे लौटूंगा । वही गढ में श्री स्वामी सोमतीर्थजी भी टिके है । दो-एक दिन उनके सत्संग में भी रहूँगा । इस वक्त जल्दी मे हूं । इस हडबडी में आपकी अपेक्षित पुस्तक मिलनी दुर्लभ है । कई आलमारियाँ ठसाठस भरी है । सूचीपत्र और क्रम शुद्धचन्द्रोदय की तरह है नही, कहाँ ढूँढूँ । प्राचीन काव्य-सग्रह की कुछ पोथियाँ इधर-उधर मँगनी भी गई हुई है । क्या अजमेर में कोई अच्छा पुस्तकालय भी है ? कालिज में था तो सही । हां, आपने विद्यासागरजी क. जीवनी पढी है, न पढी हो तो सौ काम छोड़कर जरूर पढिए । पढकर गद्गद् हो जाइएगा । आशा है, आप सानन्द है ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७५

नायक नगला, चांदपुर (बिजनौर)
२४-२-१९२८

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते ।

श्री ओझाजी महाराज यदि वहाँ हो तो उनसे प्रार्थना कर दीजिए । कुछ प्रसादस्वरूप इस सख्या के लिए भेज दें तो अनुग्रह हो । गुरुवर मुरारिलालजी घर पर ही हैं । १५-२० दिन से मिले नही । सर्वनाश का उपक्रम कर रहे हैं । यानी अब

इस उम्र मे व्याह करने की धुन सवार हुई है। लेई-कुचेई इसमें लगा देंगे। और रोने के लिए यादगार के तौर पर किसी अभागिनी को छोड जायँगे। मैंने जब यह सुनगुन सुनी थी तो समझाया था, मुझ से तो साफ मुकर गये पर उसी दिन से कन्नी काटने लगे। फिर एक बार समझाने की चेष्टा करूँगा। पर, वह मिलते नही। दुर्धर्ष खीच रहा है मानेंगे थोडा ही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७६

गुरुकुल, कांगड़ी
२५-७ २८

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते।

मै सम्मेलन की यात्रा से एक महीने बाद परसो २४, ७ को ही यहाँ लौटकर पहुँचा हूँ। आकर आपका पत्र पढा (७, ७ का)। आपको भाषण पसन्द आया। सन्तोष की बात है। आज की तरह दूसरे पत्रो ने भी भाषण पर अग्रलेख लिखे है। खूब दाद दी है। 'मतवाला', 'विश्वमित्र', 'भारतमित्र', 'लोक-सग्रह' इत्यादि ने बहुत कुछ लिखा है। सम्मतियो की कटिंग्स का फाइल भाषण से कई गुना बढ गया है। 'बीडिया' शब्द टकसाली है, हाली ने भी इसका प्रयोग किया। हाली ने हैदराबाद की तारीफ में एक कसीदा लिखा है उसमें—

"दूसरे प्रान्तो में बेशक यह शब्द व्यवहृत नही है। पर 'बीडिया' जोता सब जगह जाता है, पूरब में बिहार तक मैंने देखा है। यह टकसाली शब्द प्रचार पाने योग्य है। इसीलिए मैंने इसका प्रयोग किया है। बनारस में बीडिया को शायद 'घौरा' कहते है।"

भाषण की समालोचना से छायावादी बहुत बिगड़े थे। पर, किसी भी समझदार विद्वान् और प्रतिष्ठित पत्र ने इस समालोचना को अनुचित नही बतलाया।

हाँ, मै गुरुकुल में शाहपुर की चेयर पर ही नियत हुआ हूँ। आशा है, आप प्रसन्न है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७७

आर्यमित्र, आगरा
२९-८-१९५०

अजी वैद्यजी, नमस्ते।

मर्दे खुदा ऐसी भी क्या खुदगर्जी। माना कि 'फसल के दिन है' फिर भी दीन-ओ-दुनिया से इतनी बेखबरी। गर्जमन्दो की अर्ज सुनने तक की फुर्सत नही। जवाब

तक नदारद, लाहौल विला कूवत, उस दिन एक दरख्वास्त भेजी थी, पहुँची जरूर होगी, मैंने खुद पोस्ट की थी। पता बहुत साफ लिखा था, न पहुँचती तो लौटकर आती। भेजने वाले का पता भी दर्ज था। इसलिए न पहुँचने का हीला नही बन सकता। आखिर आपने उत्तर क्यो नही दिया? खत तो 'जवावतलव' जरूरी था। ओझाजी से सम्मति लिखाकर भेज देते कोई बडी बात न थी, इन्तजार करते-करते आँखे पथरा गई जिस तरह रोगियो की हाय-हाय सुनते सुनते तुम्हारा दिल पथरा गया है। अब भी परसो-परले दिन तक सम्मति भेज सको तो काम आजाय, बस टायटिल और सम्मतियाँ ही छपने को बाकी है, आशा है, आप भले-चगे है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७८

१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
४-१२-२८

प्रिय महोदय, नमस्ते।

दिवाली की खुशखबरी का कार्ड मिला, खुशी से दिवाली बीतने पर बधाई है। पर मै अपने को तो इसके लिए बधाई नही दे सकता। हम है गुरबत में और घर में बहार आई है। श्रावणी, जन्माष्टमी, दशहरा, दीवाली सब यही बीत गये। कातकी भी यही होगी। किसी में आनन्द न आया। यहाँ आकर बेतरह फँस गया। खैर, देह धरे का दण्ड है।

चि० रामनाथ ने घर से दो-तीन बार छाजन, दाद और मुहासो की दवा के लिए लिखा है। यहाँ इश्तहारी वैद्यो के नोटिसो पर विश्वास नही होता। किससे लेकर भेजूं। आपके पास कोई अनुभूत दवा इन रोगो की हो तो रामनाथ को भेज दीजिए, या लिख दीजिए। भूलिए मत।

मेरा स्वास्थ्य कई दिन से खराब है। मकान तो बहुत अच्छा है, पर वायु-मडल कहाँ से लाऊँ।

श्री ओझाजी से मैंने अमरचन्द्र सूरि के सम्बन्ध में कुछ पूछा था। उत्तर नही मिला। 'विशाल भारत' जारी रहेगा। मूल्य जब सुभीता हो भेज दीजिए। आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
१०-२-३१

प्रिय मित्र, नमस्ते ।

४-२ का कृपा-पत्र आज मिला। बहुत दिनो बाद आपने पत्र भेजकर सुध ली। मै कई महीने से एक सकट मे हूँ। काशीनाथ[1] की माता मार्च महीने से बीमार है, दो महीने से कष्ट अधिक है। सारा परिवार दवादारू के चक्कर मे है। लम्बी बीमारी, ग्राम का वास, आसपास कोई सद्वैद्य नही—एक मुसीबत का सामना है। ऐसे सकट मे प० मुरारिलालजी याद आते है, और दिल से आह निकलती है। खैर, कर्मों का भोग है। प्रो० देवकीनन्दन शर्माजी से मै सरसरी तौर से वाकिफ हूँ। हमवतन है। आपके मित्र है। यह दो रिश्ते काफी से ज्यादा है। 'पद्म-पराग' से लेख लेना मुबारक है। डर इसी बात का है कि काट-छांट में कोई शह रग न कट गई हो। खैर, जो हो मुझे कोई आपत्ति नही, बल्कि इस इज्जत-अफज़ाई पर फख्र करूँ तो बजा है। सरदी यहाँ भी खूब है। निमोनिया चमक रहा है। वर्षा नही हुई। खेती के साथ किसानो के प्राण निकल रहे है। ज़िले में कही-कही वर्षा भी हो गई है। भयकर समय है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८०

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
२३-२-३१

मित्रवर, नमस्ते ।

कृपा-कार्ड से आश्वासन मिला, अनुगृहीत हुआ। घर का हाल यह है कि मलेरिया के मौसम में जाडा-बुखार आना शुरू हुआ था। आराम भी होता रहा। बीच-बीच में आता भी रहा कोई तीन महीने से ज्वर जड पकड गया। १०३ तक तापमान रहने लगा, कमज़ोरी बढ गई। मेरठ से वैद्य हरिशकरजी को बुलाया। उन्होने देखकर क्षय बतलाया, यह निदान उन्होने देखकर रात्रि-स्वेद के आधार पर किया था। ८-१० दिन रात्रि के वक्त पसीना आता रहा था। जिगर भी बढ गया था। उनकी चिकित्सा

---

१. आचार्य पद्मसिंह शर्मा के ज्येष्ठ पुत्र ।

से इतना लाभ हुआ कि ज्वर छूट गया। अब २०-२५ दिन से तापमान ९७ रहता है, भूख लगती है। पसीना भी नही आता। जिगर भी कम हुआ है। पर, आश्चर्य है कि निर्बलता वैसी ही है। करवट तक नही ली जाती। उन्होने एक योग सिद्ध मकरध्वज मोती, कस्तूरी आदि औषधो का बनवाया था। पर वह अनुकूल न पडा। गरमी को सुदर्शन चूर्ण दिया गया। और उसका सेवन जारी है यह अनुकूल पडा। प० शालग्रामजी शास्त्री को भी सब हाल लिखकर परामर्श लिया था। वह तो क्षय नही बतलाते। खाँसी आदि कोई उपद्रव न पहले था न अब है। अब तो कमजोरी की ही खास शिकायत है। आपको इतनी दूर मे क्यो कष्ट दूँ। इलाज हो ही रहा है। फल ईश्वराधीन है। आशा है, आप प्रसन्न है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८१

नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते।

आशा है, आप सानन्द है। आपके कृपा-पत्र के उत्तर मे मैंने एक कार्ड भेजा था। पहुँचा होगा। पर उसकी पहुँच नही पहुँची। जो काम आप मुझसे लेने लगे थे, उसका पता भी न चला। अब मैं समझता हूँ आपकी प्रेरणा से और आपके ही अक्षरो से अकित ऐड्रेस से 'शु द्ध चन्द्रोदय' की एक प्रति मेरे पास पहुँची है। इस कृपा के लिए आपको और ग्रन्थकर्ता को कोटिशो धन्यवादा.। मैंने पुस्तक अभी इधर-उधर से सरसरी तौर पर देखी है। पुस्तक की रचना में रचयिता ने स्वाध्यायशीलता और परिश्रम का प्रचुर परिचय दिया । पुस्तक काम की है। विस्तृत सम्मति तो यदि हो सका तो पूरी पुस्तक पढकर पीछे मे दूँगा। हाँ, कुछ छोटी-छोटी और मोटी-मोटी बातें अभी निवेदन कर दूँ तो उचित होगा। फिर शायद भूल जाऊँ। पुस्तक में 'फॉरन मैटर' बहुत है। सशोधन और करेक्शन के 'स्टीमबाथ' और 'सिटिजे बाथ' की जरूरत थी, किसी वैद्य कवि ने कहा है। '**कृशताभिमता लोके पीनता नतु शोयत**'—पुस्तक पढने से मालूम होता है किसी आर्य उपदेशक का लेक्चर सुन रहे है। इधर-उधर की सारी बातें एक ही प्रसग में कह डाली है। विषय-विभाग शायद अविवक्षित है। एक विद्वान् ग्रन्थकर्त्ता की रचना में यह बात खटकती है। पुस्तक भर में छापे की और संशोधन सम्बन्धी अशुद्धियो की भरमार है। वैदिक प्रेस की ऐसी भद्दी छपाई को देखकर दुःख होता है। उर्दू-फारसी शब्दो के नीचे नुक्ते बेहिसाब है। 'जहाद' और

'मस्जिद' इसका एक छोटा-सा उदाहरण है। बहुत-सा कविताश छन्दोभग, दूषित और भ्रष्ट है। '**जिन्हो की भयभीत गर्जना से था कांपता यह तमाम आलम।**' ज़रा सोचिए तो जो 'गर्जना' स्वय 'भयभीत' थी उससे तमाम आलम कैसे काँपता था। भयभीत क्रन्दन से करुणा आती है कि कँपकँपी। इसी तुकबन्दी का अन्तिम चरण छन्दोभग से डगमगा रहा है। भाषा भी बहुधा संशोधनीय है। पुस्तक मे कई चित्र ऐसे हैं जिनका पुस्तक के विषय मे विशेष सम्बन्ध नही बादरायण सम्बन्ध भले ही हो। कई चित्रो का अभाव खटकता है। प० भोजदत्तजी और प० मुरारिलालजी शर्मा के चित्र क्यो नही दिये गये। आखिर ये लोग भी तो शुद्धि-सम्प्रदाय के महारथी थे। एक बात और ऐसी है जिसे कहते सकोच होता है, पुस्तक मे जहाँ-तहाँ विज्ञापनबाज़ी की बू आती है। टाइटिल पेज पर ग्रन्थकर्त्ता का जो 'सरापा' दिया गया है वह यदि वहाँ न होकर उनकी जीवनी में होता तो इतना न खटकता। ये बाते विस्तार के साथ आपकी या रामपालजी की भूमिका मे दी जा सकती थी। ये बाते मै आपको अपने तौर पर लिख रहा हूँ। इनमें से जिन बातो को आप ग्रन्थकर्त्ता के नोटिस में लाना चाहे, अपने तौर पर ला सकते है। नोचेन्न। वाजिब था सो अर्ज़ किया। आगे आप मालिक है। यहाँ सब कुशल है। अपना कुशल समाचार कभी-कभी लिखते रहिए।

हाँ, एक बात तो फरमाइए, 'शुद्धिचन्द्रोदय' में जो ऐतिहासिक बातें है, वे श्री ओझाजी (प० गौरीशकर हीराचन्द ओझा) महाराज को सुनाकर ठीक कर ली गई है ? उनमें कोई बात निराधार या अटकलपच्चू तो नही। यह मै अपने लिए जानना चाहता हूँ।

पत्र की पहुँच लिखिये। आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२

श्री जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी को लिखे गये पत्र

१८२

महाविद्यालय,
ज्वालापुर
८-८-१६

माननीय चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

मैं इस 'दौरान' मे बराबर इधर-उधर 'दौरे' मे रहा, और अनेक झंझटो में फँसा रहा, इसलिए पत्र न लिख सका। क्षमा कीजिए। आपका श्रावण वदि ९ का कृपा-कार्ड कल घर से वापस आने पर मुझे मिला, इसीलिए उत्तर मे विलम्ब हुआ, जो क्षन्तव्य है। तलाश, झंझट, पेशवाज़, दफा, पीतल, मूँग और गेंद, ये सब बराबर स्त्रीलिंग मे ही बोले-सुने जाते है। इधर देहली क्लास के अनुयायी किसी लेखक को इन्हे पुल्लिग में व्यवहार करते नही देखा न किसी शिक्षित या अशिक्षित को बोलते ही सुना। लखनऊ वालो की दुनिया बेशक दूसरी है। वह माला को भी पुल्लिग के डोरे में गूँथते है। मेरी नाचीज राय में हिन्दी वालो को भी इन्हे स्त्रीलिंग ही रहने देना चाहिए। मै हिन्दी में देहलवी क्लास के अनुसरण का पक्षपाती हूँ। यो तो बनारस और उसके आस-पास के हिन्दी लेखक लिंग-व्यत्यय मे लखनऊ के उर्दू लेखको से भी बहुधा बढ जाते है। प्रातःस्मरणीय भारतेन्दु और भट्टजी तक के लेखो में अनेक उदाहरण मिलते है। आगे जो पचो की राय हो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८३

महाविद्यालय
ज्वालापुर
१७-८-१६

माननीय चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

आपके सलूनो के सलोने पत्र का माधुर्य पान कर अन्तःकरण आप्यायित हुआ। झंझट को गुप्तजी ने पुल्लिग माना है। लो यो ही सही उनका अदब भी लाजमी है। 'झंझट' दोनो लिंगो में हो सकता है, सम्भव है, कुछ अहले जबान या जबानदा इसे

मुजवकर भी बोलते हो पर दफा, मूंग और पीतल कभी पुल्लिग नही, हर्गिज नही हो सकते । कभी ऐसा नही सुना गया है। 'मारवाडी' मुन्शीजी इस वात में 'सनद' नही माने जा सकते । मारवाड के 'उर्दू वाले' वैसा करते हो तो अजव नही । प्रमाण पीछे ढूंढ-भाल कर लिखूंगा । विशेष श्री वाजपेयीजी की सेवा मे प्रणाम ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८४

महाविद्यालय,
ज्वालापुर
३१-८-१६

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम ।

कृपा-पत्र पहुँचा । कृतार्थ किया । 'पीतल' और 'झझट' के वारे मे मेरी राय नाकिस में यही आता है कि इन्हे स्त्रीलिग में ही माना जाय । कोश की अपेक्षा लोक-यवहार प्रवल है । महाभाष्यकार भगवान् पतजलि की आज्ञा है **"लिंगमशिष्य लोकाश्रयत्वाल्लिगस्य"** अर्थात् लिगानुशासन की आवश्यकता नही है, क्योकि लिंग व्यवहार लोक के अधीन है। लोक में जो शब्द जिस लिंग में बोला जाता है वही उसका लिंग है । सस्कृत में कई शब्द ऐसे हे जिनके लिंग का निर्देश कोशकारो ने दो लिंगो में किया है, पर कवि लोग उनका व्यवहार किसी एक ही लिंग में करते हे । यदि कोई लेखक उन शव्दो का प्रयोग कोश के आधार पर उस लिंग में भी करे जिसमें कवियो ने नही किया तो वह दोष माना जाता है । यही नियम हिन्दी-उर्दू शव्दो के लिंग-निर्णय में भी लागू हो सकता है । आगे जो जनाव की राय । 'राय मेरी है वही जो राय हो सरकार की' ।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

१८५

महाविद्यालय, ज्वालापुर
श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, ७३

हिन्दी 'कृष्ण-चरित्र' के लेखक को कृष्ण-जन्म की वधाई है, चौवेजी महाराज, प्रणाम । कृपा-पत्र के उत्तर में एक कार्ड भेज चुका हूँ, आज और लिखता हूँ ।

'झझट' के झगडे मे आपकी सर्वतोमुखी जीत हुई । उर्दू के कोश का 'फरहगे आसफिया' के लेखक देहलवी और जलाल तथा जलील, लखनवी, इसमे मुजवकर, ही

[illegible]

[illegible] हाक़िम न जाहीं ह[illegible]

[illegible] जैसा लमर की तलाश'।"

[illegible] यह सब गद उनके उछाले हुए हैं

[illegible] क्यों न हो कभी

"जो नज़ाकत मे कलाई की घड़क

हाथ में गेंद उठा तुमने उछाली

'पीतल' को 'जलाल लखनवी' और 'फरहंग[illegible]

कहते हैं, पर मिसाल कोई नहीं देते, पर यह ज़बरदस्त

झुण्ड ने लोहा, कासा, तांबा, सोना आदि ने बेचारी

पहनाकर अपने गिरोह मे मिला लिया। चाँदी गरीब [illegible]

हमारी राय में पीतल को चाँदी की तरफ ही रखा जा[illegible]

को छोड़कर प्रायः पढ़े-लिखे ऐसा ह बोलते हैं, आगे जो

और जो आज्ञा।

१८६

ज्वालापुर
७-४-२८

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

मुरादाबाद से भेजा हुआ कृपा-पत्र और सिहावलोकन मिला, कृतार्थ भया। मुझे अत्यन्त खेद है कि आपके मुरादाबाद आने की मुझे सूचना न मिली, वर्ना मैं उडकर वहाँ पहुँचता, यह काँटा सदा खटकता रहेगा। सिहावलोकन के लिए आपको भूरि-भूरि धन्यवाद और सफेद-सफेद बधाई देता हूँ। आपका सिहावलोकन ब्रजभाषा के विरोधियो के लिए सचमुच सिहावलोकन है, और कविता-प्रेमी रसिको के लिए कामिनी का कमनीय कटाक्ष है। बडी चुभती चुटकियाँ है। हँसाने वाली गुदगुदियाँ है, दिल से दाद देता हूँ। परमात्मा आपकी इस चुलबुली तबीयत को हमेशा बरकरार रखे।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१८७

हरदुआगंज
३०-५-१८

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

आपका पत्र उस दिन मिला था जिस दिन मै इधर आ रहा था, इसलिए उत्तर में विलम्ब हुआ।

माताजी के स्वर्गवास का समाचार सुनकर दु ख हुआ, निस्सन्देह अब आपको गृहस्थ के झझटो का अधिक सामना करना पडेगा, इससे स्वतन्त्रता और साहित्य-सेवा में भी बाधा पहुंचेगी, पर विधि के विधान में किसी की नही चलती, आप जैसे विवेकी विद्वान् को मै क्या सान्त्वना दूँ?

मैने आज यहाँ श्रीयुत् प० नाथूरामजी शकर शर्मा को सिहावलोकन की 'भीतरी दशा' विशेष रूप से पढकर सुनाई। सुनकर उन्होने बहुत पसद किया और इस विषय में अपनी अनुकूल सम्मति प्रकट की। इस सम्मति-सम्मेलन के उपलक्ष्य में अपना 'अनुराग रत्न' आपकी सेवा में भेजने को कहा, सो आज की डाक से भेजता हूँ। इसे स्वीकार कीजिए। अवकाश मिलने पर कभी इसे भी देख जाइए, उचित समझिए तो सम्मति भी लिख भेजिए।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१८८

बनारस

१-११-१८

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

कृपा-कार्ड मिला, अनुगृहीत हुआ, पुनीत हुआ, और 'आश्चर्यान्वित' एवं भयभीत भी हुआ। आपके विकट काफियो की टकार ने डरा दिया। मैं बनारस मे आकर, सच पूछिए तो एक दिन भी तन्दुरुस्त नहीं रहा। फिर भी न जाने अब तक यहाँ कैसे पडा रहा, अब यहाँ से जाता हूँ, कल घर जा रहा हूँ, देखिए फिर कब लौटता हूँ। 'बिहारी की सतसई' आज प्रेस से निकली है सो आपकी सेवा मे पहली कापी भेजता हूँ, इसे अपनाइए, स्वीकार कीजिए, यानी कबूल फर्माइए। इसे कडा जी करके शुरू से आखिर तक एक बार पढ जाइए तो बडी बात हो, सम्मति लिख सकें तो और भी अनुग्रह हो और बिहारीजी के सम्बन्ध मे कोई छिपा भेद बतलावें तो क्या ही बात है। मैं अगले भाग मे बिहारी की जीवनी देना चाहता हूँ, इसमें सहायता दीजिए। उनके वशज सुना है बूँदी मे या कही है। आपको यह बात अवश्य मालूम होगी। मेरी तो प्रार्थना है कि बिहारी की जीवनी आप ही लिख दे तो बडा अच्छा हो। बिहारी के विषय मे आप जो लिखेंगे सो प्रामाणिक होगा, यह आपका एक 'कौमी फर्ज' भी है। मैं आपसे इसकी अदायगी का मतालबा करता हूँ और सुनना चाहता हूँ कि आप क्या फरमाते है।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१८९

ज्ञान-मंडल, काशी

वैशाख सुदि ६-१७-७६

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

कृपा-पत्र के साथ 'हिन्दी-लिंग-विचार' मिला, धन्यवाद, मैनी थैंक्स। बाबू शिवप्रसाद जी से 'लिंग-विचार' का सुसमाचार सुना था, वह बहुत तारीफ करते थे, मैं आपको लिखने वाला था कि आ गया। लिंग-विचार के प्रहार से बेचारे 'लिंग-भक्त' लोग बिलबिला उठेंगे। आप भी गजब ढाते है, खूब लिखा है! क्यो न हो, आपने लिखा है। आप सम्मेलन की हज्ज कर आये, मै महरूम रह गया, इसका अफसोस है। अब बिहारी की बारी कब आयगी? आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१९०

नायक नगला,
पो० ग्रॉ० चाँदपुर (बिजनौर)
चैत्र ३०, '७६

प्रणाम।

चैत्र वदि १० का कार्ड मिला। ग्रापने मकान खरीद लिया, खुशी की बात है। यानी अब ग्राप रईसे-कलकत्ता हो गये। वधाई है, पर भाई, अच्छा तो यह होता कि ग्राप व्रज मे रहते, यू० पी० की शोभा बढाते। बगाले का 'जादू' ग्राप पर चल गया। अब ग्रापको 'जादूगर' कहा जाय तो बेजा नही है। 'दाग़' ने कहा था, 'तुमने जादूगर उसे क्यो कह दिया? देहलवी है दाग़ बगाली नही'। अकबर ने कहा है और खूब कहा है—'स्पीच बगाली की सुन, बगालनो के बाल देख।' ग्राप भी इन्द्री मे उलझकर रह गये।

मै इस बीच मे बराबर इधर-उधर फिरता रहा, एक बडे झझट मे फँसा रहा, इस कारण पत्र न लिख सका, कटिंग्स पढ लिये। पाटलिपुत्र के 'किरानी' की करतूत पर अफसोस हुग्रा, क्या कहिये दुनिया मे भी कैसे-कसे विचित्र जन्तु भरे पडे है, और यह हज़रत तो ग्रापके मिलने वालो मे थे। एक उर्दू के कवि ने क्या ही अच्छा कहा है—'**है ये दुनिया खुदगरज किस पै भरोसा कीजिए ? दोस्त दुश्मन बन के दगा दे तो फिर क्या कीजिए**' हिन्दी वालो का बाबा ग्रादम ही निराला है। साहित्य-सेवियो की कद्र कैसे हो। इन्हे तो रायबहादुर, कोई बडे भारी लीडर और लक्ष्मी-वाहन चाहिएँ। साहित्य-सेवी लोग तो यहाँ बेगारी और मजूर है। मेरी राय में तो साहित्य-सेवियो को चाहिए, यदि उनमें कुछ भी ग्रात्मसम्मान का माद्दा है, कि ऐसे सम्मेलन का बायकाट कर दें, कितना अधेर है चाहे जो सभापति बन बैठता है। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की मेम्बरी के लिए भी कुछ नियम है, यहाँ कोई नियम नही, जो दौड़-धूप करके वोट हासिल करले वही प्रधान। पहले सुना था प० गौरीशकर ओझा चुने गये है। मुझे यह चुनाव दिल से पसन्द था, पर जाने यह चुनाव क्यो रद हो गया। इसमें भी कुछ भेद होगा। अब लिखने-पढने से क्या होगा सिवाय 'नक्कू' बनने के। अब कुछ भी लिखने का अर्थ सम्मेलन की सफलता में विघ्न डालना समझा जायगा, लिखने वाले को नफरत से देखा जायगा और खूब कोसा जायगा। इसके सिवाय कुछ नतीजा न निकलेगा। ग्रान्दोलन करके सभापति के चुनाव के नियमो में कुछ विशेष परिवर्तन अवश्य कराना चाहिए, सभापतित्व के लिए साहित्य-सेवा और योग्यता की कैद लगाना चाहिए, इसके लिए ग्रान्दोलन कराइये मैं भी इसमें योग दूंगा।

अनावृष्टिजन्य अकाल के लिए 'सूखा पडी' बोलते तो हैं, इस वक्त कोई

१८८

वनारस
१-११-१८

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम ।

कृपा-कार्ड मिला, अनुगृहीत हुआ, पुनीत हुआ, और 'आश्चर्यान्वित' एव भयभीत भी हुआ । आपके विकट काफियो की टक्कार ने डरा दिया । मै वनारस मे आकर, सच पूछिए तो एक दिन भी तन्दुरुस्त नहीं रहा । फिर भी न जाने अब तक यहाँ कैसे पडा रहा, अब यहाँ से जाता हूँ, कल घर जा रहा हूँ, देखिए फिर कब लौटता हूँ । 'विहारी की सतसई' आज प्रेस से निकली है सो आपकी सेवा मे पहली कापी भेजता हूँ, इसे अपनाइए, स्वीकार कीजिए, यानी कबूल फर्माइए । इसे कडा जी करके शुरू से आखिर तक एक वार पढ जाइए तो वडी वात हो, सम्मति लिख सकें तो और भी अनुग्रह हो और विहारीजी के सम्वन्ध मे कोई छिपा भेद वतलावें तो क्या ही वात है । मै अगले भाग में विहारी की जीवनी देना चाहता हूँ, इसमें सहायता दीजिए । उनके वशज सुना है बूँदी में या कहीं है । आपको यह वात अवश्य मालूम होगी । मेरी तो प्रार्थना है कि विहारी की जीवनी आप ही लिख दें तो वडा अच्छा हो । विहारी के विषय में आप जो लिखेंगे सो प्रामाणिक होगा, यह आपका एक 'कौमी फर्ज़' भी है । मै आपसे इसकी अदायगी का मतालवा करता हूँ और सुनना चाहता हूँ कि आप क्या फरमाते हैं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८९

ज्ञान-मंडल, काशी
वैशाख सुदि ६-१७-७६

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम ।

कृपा-पत्र के साथ 'हिन्दी-लिंग-विचार' मिला, धन्यवाद, मैनी थेंक्स । वावू शिवप्रसाद जी से 'लिंग-विचार' का सुसमाचार सुना था, वह वहुत तारीफ करते थे, मैं आपको लिखने वाला था कि आ गया । लिंग-विचार के प्रहार से वेचारे 'लिंग-भक्त' लोग विलविला उठेंगे । आप भी गजव ढाते हैं, खूब लिखा है । क्यो न हो, आपने लिखा है । आप सम्मेलन की हज्ज कर आये, मै महरूम रह गया, इसका अफसोस है । अव विहारी की वारी कब आयगी ? आशा है, आप सानन्द हैं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६०

नायक नगला,
पो० ऑ० चाँदपुर (बिजनौर)
चैत्र ३०, '७६

प्रणाम।

चैत्र वदि १० का कार्ड मिला। आपने मकान खरीद लिया, खुशी की बात है। यानी अब आप रईसे-कलकत्ता हो गये। बधाई है, पर भाई, अच्छा तो यह होता कि आप ब्रज में रहते, यू० पी० की शोभा बढाते। बगाले का 'जादू' आप पर चल गया। अब आपको 'जादूगर' कहा जाय तो बेजा नही है। 'दाग' ने कहा था, 'तुमने जादूगर उसे क्यो कह दिया? देहलवी है दाग बगाली नही'। अकबर ने कहा है और खूब कहा है—'स्पीच बगाली की सुन, बगालनो के बाल देख।' आप भी इन्स्त्री मे उलझकर रह गये।

मै इस बीच मे बराबर इधर-उधर फिरता रहा, एक बडे झझट मे फँसा रहा, इस कारण पत्र न लिख सका, कटिंग्स पढ लिये। पाटलिपुत्र के 'किरानी' की करतूत पर अफसोस हुआ, क्या कहिये दुनिया में भी कैसे-कसे विचित्र जन्तु भरे पडे हैं, और यह हज़रत तो आपके मिलने वालो मे थे। एक उर्दू के कवि ने क्या ही अच्छा कहा है—'है ये दुनिया खुदगरज किस पै भरोसा कीजिए ? दोस्त दुश्मन बन के दग़ा दे तो फिर क्या कीजिए' हिन्दी वालो का बाबा आदम ही निराला है। साहित्य-सेवियो की कद्र कैसे हो। इन्हे तो रायबहादुर, कोई बडे भारी लीडर और लक्ष्मी-वाहन चाहिएँ। साहित्य-सेवी लोग तो यहाँ बेगारी और मजूर है। मेरी राय में तो साहित्य-सेवियो को चाहिए, यदि उनमें कुछ भी आत्मसम्मान का माद्दा है, कि ऐसे सम्मेलन का बायकाट कर दें, कितना अधेर है चाहे जो सभापति बन बैठता है। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की मेम्बरी के लिए भी कुछ नियम है, यहाँ कोई नियम नही, जो दौड़-धूप करके वोट हासिल करले वही प्रधान। पहले सुना था प० गौरीशकर ओझा चुने गये है। मुझे यह चुनाव दिल से पसन्द था, पर जाने यह चुनाव क्यो रद हो गया। इसमें भी कुछ भेद होगा। अब लिखने-पढने से क्या होगा सिवाय 'नक्कू' बनने के। अब कुछ भी लिखने का अर्थ सम्मेलन की सफलता में विघ्न डालना समझा जायगा, लिखने वाले को नफ़रत से देखा जायगा और खूब कोसा जायगा। इसके सिवाय कुछ नतीजा न निकलेगा। आन्दोलन करके सभापति के चुनाव के नियमो में कुछ विशेष परिवर्तन अवश्य कराना चाहिए, सभापतित्व के लिए साहित्य-सेवा और योग्यता की कैद लगाना चाहिए, इसके लिए आन्दोलन कराइये मै भी इसमें योग दूँगा।

अनावृष्टिजन्य अकाल के लिए 'सूखा पडी' बोलते तो हैं, इस वक़्त कोई

१८८

वनारस

१-११-१८

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

कृपा-कार्ड मिला, अनुगृहीत हुआ, पुनीत हुआ, और 'आश्चर्यान्वित' एव भयभीत भी हुआ। आपके विकट काफियो की टकार ने डरा दिया। मै वनारस मे आकर, सच पूछिए तो एक दिन भी तन्दुरुस्त नहीं रहा। फिर भी न जाने अब तक यहाँ कैसे पडा रहा, अब यहाँ से जाता हूँ, कल घर जा रहा हूँ, देखिए फिर कब लौटता हूँ। 'विहारी की सतसई' आज प्रेस से निकली है सो आपकी सेवा में पहली कापी भेजता हूँ, इसे अपनाइए, स्वीकार कीजिए, यानी कबूल फर्माइए। इमे कडा जी करके शुरू से आखिर तक एक बार पढ जाइए तो वडी बात हो, सम्मति लिख सकें तो और भी अनुग्रह हो और विहारीजी के सम्बन्ध में कोई छिपा भेद बतलावें तो क्या ही बात है। मै अगले भाग मे विहारी की जीवनी देना चाहता हूँ, इसमें सहायता दीजिए। उनके वशज सुना है बूंदी मे या कही है। आपको यह बात अवश्य मालम होगी। मेरी तो प्रार्थना है कि बिहारी की जीवनी आप ही लिख दे तो बडा अच्छा हो। विहारी के विपय में आप जो लिखेंगे सो प्रामाणिक होगा, यह आपका एक 'कौमी फर्ज' भी है। मै आपसे इसकी अदायगी का मतालवा करता हूँ और सुनना चाहता हूँ कि आप क्या फरमाते है।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१८९

ज्ञान-मंडल, काशी

वैशाख सुदि ६-१७-७६

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

कृपा-पत्र के साथ 'हिन्दी-लिंग-विचार' मिला, धन्यवाद, मैनी थैंक्स। बाबू शिवप्रसाद जी से 'लिंग-विचार' का सुसमाचार सुना था, वह बहुत तारीफ करते थे, मै आपको लिखने वाला था कि आ गया। लिंग-विचार के प्रहार से बेचारे 'लिंग-भक्त' लोग बिलबिला उठेंगे। आप भी गजब ढाते है, खूब लिखा है! क्यो न हो, आपने लिखा है। आप सम्मेलन की हज्ज कर आये, मै महरूम रह गया, इसका अफसोस है। अब विहारी की बारी कब आयगी? आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१६०

नायक नगला,
पो० ऑ० चाँदपुर (बिजनौर)
चैत्र ३०, '७६

प्रणाम।

चैत्र वदि १० का कार्ड मिला। आपने मकान खरीद लिया, खुशी की बात है। यानी अब आप रईसे-कलकत्ता हो गये। बधाई है, पर भाई, अच्छा तो यह होता कि आप ब्रज मे रहते, यू० पी० की शोभा बढाते। बगाले का 'जादू' आप पर चल गया। अब आपको 'जादूगर' कहा जाय तो बेजा नही है। 'दाग' ने कहा था, 'तुमने जादूगर उसे क्यो कह दिया? देहलवी है दाग़ बगाली नहीं'। अकबर ने कहा है और खूब कहा है—'स्पीच बगाली की सुन, बगालनो के बाल देख।' आप भी इन्द्री मे उलझकर रह गये।

मै इस बीच मे बराबर इधर-उधर फिरता रहा, एक बडे झझट मे फँसा रहा, इस कारण पत्र न लिख सका, कटिग्स पढ लिये। पाटलिपुत्र के 'किरानी' की करतूत पर अफसोस हुआ, क्या कहिये दुनिया मे भी कैसे-कसे विचित्र जन्तु भरे पडे है, और यह हज़रत तो आपके मिलने वालो मे थे। एक उर्दू के कवि ने क्या ही अच्छा कहा है—'है ये दुनिया खुदगरज किस पै भरोसा कीजिए ? दोस्त दुश्मन बन के दग़ा दे तो फिर क्या कीजिए' हिन्दी वालो का बाबा आदम ही निराला है। साहित्य-सेवियो की कद्र कैसे हो। इन्हे तो रायबहादुर, कोई बडे भारी लीडर और लक्ष्मी-वाहन चाहिएँ। साहित्य-सेवी लोग तो यहाँ बेगारी और मजूर है। मेरी राय में तो साहित्य-सेवियो को चाहिए, यदि उनमें कुछ भी आत्मसम्मान का माद्दा है, कि ऐसे सम्मेलन का बायकाट कर दें, कितना अधेर है चाहे जो सभापति बन बैठता है। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की मेम्बरी के लिए भी कुछ नियम है, यहाँ कोई नियम नही, जो दौड-धूप करके वोट हासिल करले वही प्रधान। पहले सुना था प० गौरीशकर ओझा चुने गये है। मुझे यह चुनाव दिल से पसन्द था, पर जाने यह चुनाव क्यो रद हो गया। इसमें भी कुछ भेद होगा। अब लिखने-पढने से क्या होगा सिवाय 'नक्कू' बनने के। अब कुछ भी लिखने का अर्थ सम्मेलन की सफलता में विघ्न डालना समझा जायगा, लिखने वाले को नफ़रत से देखा जायगा और खूब कोसा जायगा। इसके सिवाय कुछ नतीजा न निकलेगा। आन्दोलन करके सभापति के चुनाव के नियमो में कुछ विशेष परिवर्तन अवश्य कराना चाहिए, सभापतित्व के लिए साहित्य-सेवा और योग्यता की कैद लगाना चाहिए, इसके लिए आन्दोलन कराइये मै भी इसमें योग दूँगा।

अनावृष्टिजन्य अकाल के लिए 'सूखा पडी' बोलते तो है, इस वक्त कोई

मिसाल तो याद नहीं आती पर फसाहत का फैसला फसीह लोगों के इस्तेमाल पर है। यानी आप जैसे फसीह लोग बोलें तो फसीह है नहीं तो नहीं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६१

नायक नगला,
पो० आॅ० चाँदपुर (बिजनौर)
का० सु० ६, १९७७

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

मैं बहुत दिनों से बीमार हूँ, सम्मेलन के दिनों में भी बीमार था, मुरादाबाद से कनखल सेहत की मरम्मत कराने चला गया था। आज ही यहाँ लौटा हूँ, अब कुछ अच्छा हूँ। कार्ड मिला, भाषण आपको पसन्द आ गया, इस पर मैं कुछ फख़्र कर सकता हूँ। मेवा को उर्दू वाले प्रायः पुंल्लिंग ही मानते हैं, पर किसी-किसी ने कभी स्त्रीलिंग में भी प्रयोग किया है। इधर ज्यादातर स्त्रीलिंग में ही बोलते हैं। चौबा सम्प्रदाय भी इसी पक्ष में है। यह और भी अच्छी बात है। ऐसे मामलों में—"राय मेरी है वही जो राय है सरकार की।"

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३

श्री प० ज्वालादत्त शर्मा को लिखे गये पत्र

१६२

नायक नगला

का० कृ० ५, '८४

प्रणाम ।

का० व० का कृपा-कार्ड पहुँचा । इस बीच में तीमारदारी के चक्कर मे बहुत फँसना पडा । अब तक छुटकारा नही । कभी कोई और कभी कोई । बदाबदी से बीमार हो रहे है । मुझे परिचर्या और चिकित्सा दोनो करनी पड रही है । इसके अलावा बाहर के बीमार भी ठोक-पीट कर वैद्यराज बनाकर घेरे रहते है । तबीअत परेशान रहती है । हाँ, मै तो फिर कहूँगा कि आप 'विद्यासागर' को अवश्य पढे और शीघ्र पढे । शुभस्यशीघ्रम् । यह टुकडा आपने सुना ही होगा । मुझे तो वह आनन्द आया कि कह नही सकता । यो तो मुझे पढने का भस्मक रोग है । जाने क्या-क्या पढ डालता हूँ, फिर भी नीयत नही भरती । पर ऐसी सुन्दर पुस्तक बहुत दिन बाद पढने को मिली । अफसोस हुआ कि अब तक क्यो न पढी थी । आप मूल बगला पढे । एक बगाली विद्वान ने मुझे लिखा है और ज़ोर देकर लिखा है कि इस पुस्तक के लिए आप बगला पढें । चडीचरणजी बगला के कोई नामी लेखक है । यो तो हमारे अनुवादक पुगव श्री पाडेयजी ने अनुवाद भी अच्छा किया है, पुस्तक सब प्रकार से अच्छी हुई है । मूल और अनुवाद दोनो मँगवाइये और मज़ा ले लेकर पढिये ।

श्री महाप्रभुजी को चरण छूना जी । इधर पढा कि श्री प० भवानीदत्तजी का स्वर्गवास हो गया है । हा हन्त ! बडे विद्वान अध्यापक थे । मैने भी उनसे पढा था ।

भवदीय

पद्मसिह शर्मा

१६३

काव्य-कुटीर, नायक नगला,

विजयादशमी, १९८४ गुरुवार

प्रणाम ।

असौज सुदि ७ का पत्र परसो ही मिल गया था । रमेशचन्द्र की सगाई चढ गई, यह सुनकर प्रसन्नता हुई । इस प्रसन्नता की मात्रा इसमे और बढ गई कि

श्री महाप्रभु-चरण उस दिन वहाँ स्वय विराजमान हो गये। यह आपका नही रमेश-चन्द्र का सौभाग्य है, क्या हुआ जो उडिया स्वामी न आये जब कि साक्षात् महाप्रभुजी उपस्थित थे। ऐसा योग और सयोग कभी-कभी आता है और "प्रमादचिन्हानि पुर फलानि" की शुभ सूचना देने वाला होता है। श्री महाप्रभुजी को मेरा चरण छूना, पाँव लगना या पाँव लेना पहुँचे और जरूर पहुँचे। देखिये, अमानत में खयानत न कर जाइये यानी भूल न जाइये। मैंने इस बीच में इस बार और पहली बार विद्या-सागर की जीवनी पढी। उसे पढकर जो आनन्द पाया, वाणी से जाए वह क्योंकर बताया'। यह एक आर्यसमाजी-भजन का अन्तरा है, 'ईजादे बन्दा' नही है। मेरी तो धारणा हो गई है कि विद्यासागर-सा पर-दुख कातर परोपकारपरायण महात्मा इधर इस कलियुग मे नही हुआ। कोई हुआ हो तो आप बतावे। मै समझता हूँ आपने विद्यासागर की जीवनी मूल बगला में, पहले आश्रम में जब आपको पढने-लिखने से इतनी अरुचि नही थी, जरूर पढी होगी। न पढी हो तो मै 'जोरपूर्वक' प्रार्थना करूँगा जैसे भी हो सके, तबीयत पर जब्र करके भी विद्यासागर पढिये। अद्भुत जीवनी है। ऐसी सुन्दर जीवनी मैंने इस जीवन मे नही पढी थी। इसी प्रसग में थोडा-सा कष्ट और भी दूँगा। इस हफ्ते का मतवाला' न पढा हो तो पढ जाइये। बहुत खूब है। अखबारी दुनिया की सैर, चलती मछली, चडूखाने की गप, सभी अच्छा है कि 'बौत अच्छा' है। 'सुधा' पर ९-१० पृष्ठ पर जो लिखा है, उसे पढकर आपकी तोद, क्षमा कीजिए, फडक जायगी। 'सुधा' वाले एक विशेषाक सम्पादन कराने के लिए बेतरह पीछे पडे है। मै इनकार करता हूँ अपनी अयोग्यता और अक्षमता की दुहाई दे-देकर और वह है कि मानते ही नही। कहिये, क्या करूँ, इस मसले के बीच मे आप क्या फरमाते है? मिजाज अच्छे है। कही जाने का पहला प्रोग्राम तो है नही पर पता नही कब पाँव में गर्दिश आजाय। आबोदाना के हाथ बात है।

आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१९४

नायक नगला, चाँदपुर
भा० सु० १२, १९८४

प्रणाम।

कई दिवस व्यतीत भये जो है सो आपका एक कार्ड श्री काशीधाम से आइ रहिल। नई 'सरस्वती' में श्री साहित्याचार्यजी का छायावाद पर एक लेख

पठनीय निकला है। आपने पढा ही होगा। ये छायावादी वडा अन्धकार फैला रहे है, आप देख रहे है। 'छायाश्चरन्ति परित पिशिताशननाम्'।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१६५

महाविद्यालय, ज्वालापुर,
भा० सु० ७, १६८५

प्रणाम।

कल का पत्र आज मिल गया। आपका 'नवाह' देखने की इच्छा होती है। वह देखने को चीज होगी, यह मै वही से कहे देता हूँ। 'नवाह' सफलता से समाप्त हो। आपको आसन-सिद्धि और तन्द्रा पर विजय प्राप्त हो। ······ का ध्यान बीच-बीच में चित्तवृत्ति को चचल न करे, यही इस वारे में जगदीश से प्रार्थना है। मसूरी अकेले जाने को जी नही चाहता। आप आते तो देख आता। फिर देखा जायगा। हां, मुख्याध्यापकजी का श्राद्ध कर दिया। इस कर्तव्य-पालन ने मुझे वहुत ही अधीर कर दिया। वार-वार हृदय उमडता था और आँखो के रास्ते वह पडता था। इतनी विकलता मुझे किसी लेख के लिखने में नही हुई। एक-एक वात दिल से टकराकर निकली है।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१६६

गुरुकुल, कांगडी
अगहन वदि ११, १६८५, शुक्रवार

प्रणाम।

कार्ड आज मिल गया। चिन्ता मिटी। 'सुधा' वालो को मैने ८-१० दिन हुए एक कडा पत्र लिखा था कि लेखको को यथेष्ट पुरस्कार दो जिनके लेख छप चुके है, वाकी वापस करो। चित्रो के वारे में भी लिखा था कि कुछ लेखको के चित्र तो रगीन छपे है, वाकी के व्लाक भी भद्दे वने है। यह अन्धेर, याद रखो, काठ की हडिया दुवारा नही चढा करती। इत्यादि वहुत कुछ लिखा था, पर वह उसे पी गये। यहाँ से दो प्रोफेसर लखनऊ गये थे। उनकी मार्फत ज़वानी सफाई पेश की गई है। पुरस्कार के वारे में फर्माया है, "हमारा नियम है कि पुरस्कार सिर्फ उन्ही लेखको को देते है, जो पुरस्कार के लिए ही लिखते है, वाकियो को नही।" पुरस्कार के लिए कौन लिखते है, इसका निर्णय उन्ही के हाथ में है।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१६७

गढमुक्तेश्वर
१०-१२-२७

प्रणाम ।

आपका पिछला, सबसे पिछला, कार्ड पाकर मै समझ बैठा था कि आप बम्बई मे विराज रहे है । पर परसो हापुड से इधर आते हुए रेल मे लोकल गाधी लीडर-उल् (मुरादाबाद) बदहवासाचार्यजी मिल पडे थे । उनसे मालूम हुआ, अभी आप वही है और गौड महासभा की आयोजना मे सलग्न है । सुनकर खुशी हुई । देखता हूँ हिरनो पर भी घास लदने लगी है ! यह भी सुना था कि इस मौके पर शकरजी (महाकवि शकर) को बुलाया जा रहा है । यदि ऐसा आप कर ले तो मै भी बदूँ । फिर आप भी साहिबे-मौजिजा समझे जाने लगेगे । यानी स्थावर को जगम बनाकर । हाँ, यह भी मैने उनसे डरते-डरते सुना कि आप अब बम्बई जा रहे है । परसो चन्द्रग्रहण पर आपके दर्शनो की लालसा थी । जनावे लीडर से भी मैने कह दिया था कि आवें और स्नान से गंगा को पवित्र करें । पर यह न हुआ । यानी आप न आये । देखिए, कब दर्शन होते है । मै कल यहाँ से असौडे और वहाँ से घर पहुँचूंगा । आशा है, आप सानन्द है ।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१६८

गुरुकुल, कांगड़ी
२०-८-२८

प्रणमामि महाराज ।

कहिये क्या बात है ? किसी बात पर नाराज हो गये ? एकदम यह चुप्पी क्यो साध ली ? सबब, वजह, कारण, हेतु आखिर कुछ तो फरमाइए । मसूरी की सैर कर रहे है कि चौपाटी के बगले में विराजमान है ? या काशी में बैठे मौन अनुष्ठान कर रहे है । नसीबे दुश्मना कोई ऐसी-वैसी बात तो नही ? कुशल तो है ?

"यां लब पै लाख-लाख सखुन इजतराब में
वां एक खामोशी तेरी सब के जबाब में ।"

१५ दिन हुए एक पत्र भेजा था, उतर नही मिला । चिन्ता बढ रही है ।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१६६

गुरुकुल, कांगड़ी,
चैत्र सुदि १३, १९८६, रविवार

प्रणाम ।

कृपा-पत्र मिला । शुक्लजी का उत्तर वास्तव मे बडा विचित्र है । पुरस्कार मे भी तमादी आरिज़ हो जाती है । यह नई बात मालूम हुई । बात यह है कि सम्पादक लोग लेखको से सेतमेत मे बेगार लेकर मालिक के सामने अपनी कारगुजारी दिखलाते है । सुर्खरू बनते है और मुट्ठी गरम करते है । गौडजी (प्रो० रामदास गौड) के एक लेख का पुरस्कार भी 'सरस्वती' वालो से आठ महीने के बाद भी हीलोहुज्जत के बाद मिला था । खैर, जाने दीजिए । शुक्लजी को अधिक 'लज्जित' न कीजिए । बेचारे पहले ही पीले पड गये है । पुरस्कार के टके मिल भी गये तो क्या काल कट जायगा । शाकाय वास्याल्लवणाय वा स्यात् ।

रामावतारजी और रघुवरदयालजी का उठ जाना बहुत बुरी दुर्घटना है । अफसोस ।

"ज़ाहिर है वक्त आखिर हमारी क़ौम का ।
मरसिया है एक का नौहा है सारी क़ौम का ।"

हरद्वार आइए तो एक दिन यहाँ भी आकर रहिए । इस उजडे हुए दियार की भी सैर कर जाइए ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२००

८८-बी० बलराम दे स्ट्रीट
कलकत्ता
का० व० ५, ८६ बुधवार

प्रणाम ।

मोम का कार्ड आज बुध को मिला । समाचार जानकर चिन्ता मिटी । मैं समझता था कि आप कही बाहर टूर पर है । क्या कहूँ मै तो इस बार कलकत्ते में आकर मर मिटा । 'पद्म-पराग' के तैयार होने में देर देखकर मैंने प० हृषीकेश शास्त्री के सस्कृत-निबन्धो का काम शुरू कर दिया । एक प्रेस ने १५ दिन में छाप देने का वायदा किया था, पर प्रेस वालो और दर्जियो का वायदा एक-सा होता है । आज २० दिन में ३ ही फार्म छापे है और अभी ७-८ और बाकी है । उसकी छपाई

का प्रबन्ध बा० मूलचन्द्रजी 'विश्वामित्र'-सम्पादक की सहायता से हुआ है। तीन सौ का खर्च है। निबन्ध १५-२० वर्ष से छपने को पड़े थे। फटकर नष्ट होने लगे थे। बड़े यत्न से संग्रह-संशोधनादि हुआ था। शास्त्रीजी छपने से पहले ही चल बसे। उनकी प्रबल इच्छा थी कि ये निबन्ध प्रकाशित हो जायँ। इस बारे में जो उत्तेजना के पत्र उन्होंने मुझे लिखे थे, कभी सुनाऊँगा। तो आप कहेंगे, यह काम तभी हो जाना चाहिए था। मुझे इन निबन्धों की इतनी चिन्ता थी कि कह नहीं सकता, उनके प्रकाशन का सुयोग देखकर मैं इस काम में लग गया। पर पिण्ड छूटना कठिन हो रहा है। यहाँ से कब चलूँगा, क्या बतलाऊँ। कुछ पता भी हो। या तो मैं आऊँगा या समाचारपत्रों में आप खबर पढ़ेंगे कि कोई कलकत्ते में आया था। पुस्तक निकलते-निकलते जान न निकल गई तो आऊँगा। बस यही कह सकता हूँ। मेरे हक में दुआ कीजिए कि पुस्तक निकले या जान निकले। बहरहाल मैं किसी तरह कलकत्ते से निकलूँ। कल २४, १० को पूरे तीन महीने यहाँ आये हो जायँगे। स्वास्थ्य का संहार होगया। आप समझते होंगे यह कलकत्ते में यों ही पड़ा है। न किसी से मिलता हूँ, न कहीं जाता हूँ। न नाटक न सिनेमा, न सैर-सपाटा। बस प्रेस, प्रूफ और मैं। रात के एक-एक बजे तक आँखों का तेल निकल जाता है। बैठे-बैठे कमर का कचूमर निकल जाता है। फिर भी वक्त पर और ठीक काम नहीं होता। सोचता हूँ, कहीं व्यासजी को अपने पुराण प्रेस में छपाने पड़ते तो क्या करते। लोक छोड़कर भाग खड़े होते! स्वर्ग में जाकर ही दम लेते। एक बात और भी सोचता हूँ, कहीं दुर्वासाजी मिल जाते और उन्हें किसी ढब से इन प्रेसवालों से भिड़ा दिया जाता तो इस दुःख-दायी प्रेस सिस्टम का अन्त हो जाता। साहित्य-सेवियों की एक बड़े संकट से रक्षा हो जाती! कहीं मिलें तो खयाल रखिएगा।

हाँ, शारदोत्सव में अबकी बार नटराज रवीन्द्र का अभिनय देखा। अलबत्ता यह काम हुआ। बाकी तो कलकत्ते रहकर भाड़ झोंकता रहा। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०१

गुरुकुल, कांगड़ी,
१-१-२९, मंगलवार

प्रणाम।

बम्बई में नये वर्ष का नया दिन 'मंगल' हो। मैं वृन्दावन-गुरुकुल से लौटता हुआ दो दिन के लिए घर गया था। इसी संक्षिप्त समय में से आपके लिए भी वक्त निकालकर कल ४ बजे मुरादाबाद दरे-दौलत पर हाज़िरी दी। पर "नसीब हो न

सकी दौलते-कदम वोसो" अदब और हसरत से आस्ताना चूमकर चला गया। थोडा ताज़ा गुड खास तौर पर तैयार कराकर भेंट के लिए ले गया था, सो दे आया। और गुड वाद को पहुँचेगा, अभी अपने गन्ने नही चले। यह तो वैसे ही जल्दी में 'नमूनार्थ' बनवा लिया था। 'रिक्तपाणिनपश्येत्' इस शिष्टाचार के पालनार्थ। पर बना अच्छा था। आप चखते तो दाद देते, यद्यपि था निकृष्ट कोटि के गन्नो का, महाराजजी की घडी की तरह! इस वार रामनाथ को कह आया हूँ कि गुड बनवा-कर खुद मुरादावाद पहुँचा आवें। इति गुडाध्याय।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०२

१२, आशुतोष दे लेन
गागेय भवन, कलकत्ता
१६-११-'२९

प्रणाम।

"ज़रा ध्यान धर के इधर कान दीजे"--आज एक चिन्ताजनक सूचना मिली है। यानी नायक-नगला', चांदपुर पोस्ट ऑफिस से निकलकर नूरपुर पोस्ट ऑफिस में मिलने जा रहा है। इससे मुझे वडी असुविधा हो जायगी। चाँदपुर अकसर जाने-आने का काम रहता है। कोई-न-कोई किसी-न-किसी काम से आता-जाता रहता है, इससे डाक मँगाने और भेजने में आसानी रहती है। नूरपुर गैर मुताल्लिक-सी जगह है। नूरपुर पोस्ट ऑफिस में तार-घर भी नही है, चाँदपुर में है। कोई उपाय ऐसा होना चाहिए जिससे यह आई वला टल जाय, चाँदपुर पो० ऑ० से सम्बन्ध-विच्छेद न हो। कोई कोशिश ऐसी हो सकती हो तो कीजिए। मुरादावाद या लखनऊ में कोई आपका परिचित डाक के महकमे में हो तो नज़र दौडाइए और कोशिश कीजिए। मेरी नज़र आप ही पर जा रही है। मुल्ला की दौड मस्जिद तक वाली वात है। लोगो को स्वराज्य मिलने जा रहा है या मिल रहा है। क्या इस फैयाजी के दौर में हम पर इतनी इनायत भी न होगी। आप ही इन्साफ कीजिए।

मामला वहुत अहम् है। इस पर मेरी नज़र से गौर फरमाइये और कोई तदवीर, जो कारगर हो सके, सोचिए। कोशिश की शक्ल क्या होनी चाहिए, यह मैं नही सोच सका। यह मामला आप ही पर छोडता हूँ। आज इस ख़त में सिवा इसके और कुछ न लिखूंगा। और आप से यही दरख्वास्त करूंगा कि कुछ कीजिए। लिल्लाह

कुछ कीजिए और मुझे तसल्लीबख्श या 'सन्तोषबख्श' अथवा 'तसल्लीप्रद' (पंजाबी आर्य भाषा मे ऐसा भी बोला जाता है।) जवाब दीजिए। ईश्वर करे यह पत्र आपको वक़्त पर मिल जाय। इसके पहुँचने के वक्त आप कही दूर पर न हो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०३

१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
२४-११-२६

प्रणाम।

२०-११-२६ का कृपा-कार्ड कल मिला। मेरे पहले कार्ड की सद्गति गंगाजी पर हो गई, यह जानकर खुशी हुई। कार्तिक पर मैं न पहुँच सका तो मेरा कार्ड ही पहुँच गया, मानो इस रूप मे मैं ही पहुँच गया। मालूम होता है आप इस बार गढ नहा आये। यहाँ से छुटकारा पाकर तो मैं कुछ दिनो कही गंगा-तट पर धूनी रमाऊँगा। रेत मे लोट लगाऊँगा। इस शहरी ज़िन्दगी से तंग आ गया। जंगल का पछी कलकत्ते के चिड़ियाघर में आ फँसा! कयामत का सामना है। कब तक छुटकारा होगा, कह नही सकता। संस्कृत-निबन्धो के चार फार्म और बाकी है। काम निहायत सुस्ती से हो रहा है। शायद बीच मे ही छोड़कर भागना पड़े। परशुराम कृत्रिम नाम है बा० राजशेखर बोस का। यह बंगाल कैमीकल कम्पनी के डायरेक्टर है। हास्य-रस के आचार्य है। भेड़ियाधसान आपके पास दो-चार दिन मे पहुँच जायगी। पढकर दो-चार शब्द लिख भेजिये। बस।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०४

१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
१२-१२-२६

प्रणाम।

दोनो कार्ड आगे-पीछे पहुँचे। धन्यवाद की विभूति तकसीम कर दी है। सब ने सिर-माथे पर चढाई, आँखो से लगाई। आपको 'भेड़ियाधसान' पसन्द आई, यह सुनकर अपने भाग्य की जो है सो 'विशाल भारत' वाले सिर धुन-धुन कर सराहना कर रहे है। आपकी दाद को वे ('विशाल भारत' वाले) छापना चाहते है। आपको कोई आपत्ति तो नही। छापने दूं ? आप उसमें से कुछ वापस तो नही लेना चाहते। हिन्दी

के भडवे इस कडवे सार्टिफिकेट से बिगड उठे तो जो होगा उसे आप सहर्ष स्वीकार करेंगे। इस प्रकार बेधडक सम्मति देना आफत मोल लेना है, जरा सोचकर जवाब दीजिएगा। आज्ञानुसार परशुरामजी के दर्शन की चेष्टा करूँगा और चरण-धूलि मिल सकी तो बटोरकर थैली मे भर लूंगा और जो 'भडवा' रास्ते मे मिलेगा, उसी पर बखेरता आऊँगा, यानी हास्य रस का बीज ऐसे बोता आऊँगा जैसे गया मे जौ बोये जाते है।

आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०५

गांगेय भवन,
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
'स्वातन्त्र्यस्य तृतीय दिवसे' शनिवारे, ३० ई०

प्रणाम।

ता० २८ का कृपा-पत्र परसो ही मिल गया था। परसो आपके उस आर्डर की तामील में श्री परशुरामजी के दर्शन करने 'भेडियाधसान' के अनुवादक को साथ लेकर गया। मिले और बडे तपाक से मिले। बडे मिलनसार, गम्भीर पर प्रसन्नवदन है। एक बंगला डिक्शनरी 'चलन्तिका' लिख रहे है। लिख चुके है, छपा रहे है। एक चीज़ होगी। उसका बहुत-सा हिस्सा सुनाया। कई शब्दो की निरुक्ति पर परामर्श-विमर्श हुआ। उन मुरादाबादी पण्डितजी की परिभाषा में पूर्व पक्ष उत्तर पक्ष चला। वह मुलाकात उसी में खत्म हुई। उस दिन सवेरे साढे सात बजे पहुँचे थे। जगह तीन मील दूर है। कारखाना अभी खुला न था। आज देखने की बात ठहरी थी। तीन बजे हम लोगो को अपनी मोटर में लेने आये और लिवा ले गये। एक-एक चीज़ दिखाई और खूब दिखाई। तबीयत खुश हो गई। बहुत बड़ा कारखाना है। १५ सौ आदमी काम करते है। १६ लाख मूलधन से कम्पनी खडी की गई थी। आज चालीस लाख के ऊपर की सम्पत्ति है। शेयर होल्डरो को जो मिल चुका है वह उससे अलग है। परशुरामजी (श्री राजशेखर वसु) कम्पनी में मैनेजिंग डाइरेक्टर है। कम्पनी की उन्नति का श्रेय इन्ही के सुप्रबन्ध को है। ऐसा कहा जाता है। मतलब यह कि कोरे 'हास्य-रसावतार' ही नही है। ठोस कामकाजी आदमी है। आपके उस पत्र का ज़िक्र किया। चरण-रज वाली बात कही। सुनकर मुस्कराने लगे। जब हम लोग कारखाना देख रहे थे, आपका खयाल भर साथ था। आप होते तो और भी अच्छा होता।

'स्वतन्त्र' के मारवाडी अंक पर आपकी सम्मति मार्के की रही । वह मस्त मतवाले में उद्धृत होगी, पर नाम न रहेगा । उसे लोगों ने पसन्द किया है । मस्त मतवाले का पहला अंक भेजता हूँ । पढ़िए, खासकर 'मेरी तो बस यही मान्यता' और 'पंजाब मेल में' !

लोक-संग्रह की कटिंग भी मुलाहज़ा फरमा लीजिए । पारसनाथसिंहजी का 'सन् सत्तावन की स्मृति' लेख देखिए, यह वही 'जूते' वाले पारसनाथजी हैं । अच्छा लिखते हैं । आप किसी यात्रा में बिठुर जायँ तो टोपे की कुञ्ज का भी दर्शन करें ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०६

नायक-नगला, चांदपुर
ता० ७-४-१९३०

प्रणाम ।

अयोध्याजी का पेन्सली कार्ड मिला । मुरादाबाद से चाँदपुर पहुँचते ही मैं बीमार हो गया । उसी दिन मैं बिजनौर गया । रक्तातिसार का दौरा बढ़ गया, निर्बलता बहुत हो गई । पढ़ना-लिखना बन्द है । गज़ब यह कि चायामृत-पान भी नहीं कर सकता । इसी से आप मेरी बेकसी और मजबूरी का अन्दाज़ा कर सकते हैं । बिजनौर में पं० सुमित्रानन्दन पंत से भेंट हुई, वह अपने बहनोई पं० दयानन्द जोशी मुन्सिफ के पास ठहरे हुए हैं । पन्तजी से मिलने का यह पहला ही मौका था । आदमी जैन्टिलमैन हैं । आने पर व्यासजी की पोथी पढूंगा और सम्मति लिख भेजूंगा । आप खातिर जमा रखिए । समझ में न आयेगी तो भी सम्मति लिख भेजूंगा । इससे ज्यादा और क्या होगा ? श्री शास्त्रीजी से बहुत-बहुत प्रणाम कहिए । और पं० श्रीदत्तजी से भी ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०७

इन्दौर
७-७-३०

प्रणाम ।

आपके पत्र के उत्तर में एक पत्र इसी पते पर १०-१२ दिन पहले भेजा था । पर उसकी पहुँच न पहुँची । आपको अवकाश कहाँ होगा? स्वर्ग में पहुँचकर मर्त्य-लोक

की खबर किसे रहती है। अच्छी बात है। कभी तो लौटोगे ही। सदा काश्मीर में तो न रहोगे। न बोलो।

मैं आज यहाँ से उज्जैन जा रहा हूँ। वहाँ से चित्तौर, उदयपुर देखकर आगरे होता हुआ १०-१२ दिन मे घर लौटूँगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०८

c/o हिन्दी प्रेस, प्रयाग
१-६-१६३० सोम

प्रणाम।

उस दिन का कार्ड पहुँचा होगा। 'लीडर' मे आपने पढ लिया होगा कि परसो श्री प० रामजीलाल शर्माजी का सहसा स्वर्गवास हो गया। बीमार तो वह बहुत दिनो से थे, पर ऐसी आशा-आशका न थी। पाँव के अँगूठे में मामूली चोट थी। बढते-बढते फैल गई। डाक्टर ने देखते ही झट काट दिया। पाँव कटेगा, ऐसे मामलो मे डाक्टरो के हुक्म की अपील नही, सबकी राय एक ही होती है। एक डाक्टर ने कहा—सिर्फ अँगूठा कटेगा, दूसरे ने कहा—'नही, पजा कटेगा; तीसरे ने कहा—पिडली तक ऑपरेशन होगा। फिर ऑपरेशन के ऊपर राय हुई पाली से ऊपर तक। टाँग काट डाली गई और उसी दिन शाम को साढे सात बजे पण्डितजी चल बसे! बडी ही भयकर दुर्घटना हो गई। शोक!

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०६

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
२६-६-१६३०
(रात को ११½ बजे)

प्रणाम।

मै अभी यही अटका हूँ। कही नही जा सका। इस बीच में इसलिए चुप रहा कि क्या लिखूँ, कोई बात ठिकाने की हो तो लिखूँ भी। जिस काम के लिए आया था वह तो हो गया। यानी पुस्तक छपकर कमेटी में पहुँच गई। बस। अभी इतना ही हुआ है। जिल्द बाकी है। इस बीच में एक और काम सिर पर आ पडा है,

हिन्दुस्तानी एकेडमी ने एक लेक्चर देने का निमन्त्रण दिया है जो लिखकर फरवरी या मार्च मे देना, सुनाना; होगा। इसकी फिक्र है। काम बडा है, वक्त थोडा है। दुआ दीजिए। सफलता के लिए चडी का पाठ कर दीजिए।

मै कल शाम को या रात को यहाँ से चलूँगा। परसो लखनऊ रहूँगा और वहाँ से आगरे होता हुआ, हो सका तो शकरजी के दर्शन करता हुआ घर पहुँचूँगा। इसके बाद मौका मिलने पर आप से मुलाकात होगी। हाँ, इस बीच में यह काम मैने और किये। अकबर के मजार की जियारत, श्री मालवीयजी के जेल मे दर्शन, यहाँ के अनेक प्रोफेसरान से भेट-मुलाकात इत्यादि-इत्यादि।

कल से यहाँ वर्षा फिर नये सिरे से शुरू हुई है। आज तो हद कर दी। ५ बजे से झडी लगी है और अब १२ बजने को है और मेह है कि थमने का नाम नही लेता।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१०

C/O हरिशङ्कर शर्मा,
राजामण्डी, आगरा
२६, १२, १६३१

प्रणाम, महाराज !

पत्रोत्तर न पाने से और बिना मिले लौट आने से मै सचमुच चकित-स्तम्भित एव भीत था, और सोच रहा था कि ऐसा क्या अपराध इस शरीर से बन पडा, जिसका यह गुरुतम दड मिला है। अब आपका पत्र पाकर 'तन-तन' तसल्ली हुई है, वर्ना मै बडी ही दुविधा में पड गया था। मै इस बार बाहर आकर बराबर बीमार ही रहा। लेक्चर का काम अभी खत्म नही कर सका, कोशिश कर रहा हूँ। आशीर्वाद दीजिए। बम्बई की इस यात्रा में एक परोपकार का काम करते आइये तो बडा अच्छा हो। निर्णयसागर वालो या गुजराती प्रेस वालो से मिलकर मालूम कीजिए, प्रेरणा कीजिए, कल्हण की 'सूक्ति मुक्तावली' यह लोग प्रकाशित कर सके तो मेरे एक परिचित विद्वान उसका सम्पादन कर देना चाहते है। ग्रन्थ उन्हे मिल गया है, जो अब तक कही नही छपा है। ग्रन्थ बहुत महत्त्वपूर्ण है। आपकी प्रेरणा से यह काम हो जाय तो बडा उपकार हो। इस पुण्य कार्य के लिए थोडा-सा समय ज़रूर निकालिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२११

C/O पं० हरिशंकर शर्मा
राजामंडी, आगरा
८, १, १९३२, शुक्रवार

प्रणाम, महाराज !

अफसोस के मारे मैं दो दिन तक पत्र भी नही लिख सका । उस दिन आप पधारे, हम लोगो का दुर्भाग्य कि दर्शनो से वचित रह गये । घर पर गगा आई और स्नान न कर सके । हम लोग ९½ बजे के बाद लौटे । पत्र पढकर राजामडी स्टेशन पर पहुँचने के लिए दुबारा कपड़े पहन ही रहा था कि इतने ही में वह गाडी आ गई, जिसमें आप आ रहे थे, रह गया । मैंने इरादा किया था कि या तो आपको उतार लाऊँगा या सिटी स्टेशन तक बाते करता चला जाऊँगा । दिल की दिल में ही रह-गई । वम्बई की ताजा-ताज़ा नई-नई बाते सुनते । महात्माजी के समाचार सुनकर आनन्द-लाभ करते । उन दिनो की वम्बई की वे घटनाएँ और आँखो देखा वह दृश्य और उस पर आपके कहने का ढग । कुछ न पूछिए, दिल पर क्या गुज़री । मैं और पण्डित हरि-शकरजी बहुत देर तक पछताते रहे । हरिशकरजी को मुझसे भी ज्यादा मलाल रहा, वह आप से बहुत मुद्दत से नही मिले थे । आपका यो अचानक आना और न मिलना सपने की माया हो गई या दरिद्र के मनोरथ ! सचमुच बडा ही अफसोस रहा और रहेगा । आपने भी यह क्या किया ? न सूचना न ख़बर । एक कार्ड लिख देते तो कौन बडी बात थी ।

उस दिन हम उन रामायणी पण्डितजी की कथा सुनने गये थे, जिनकी कथा में आप गत वर्ष लखनऊ ले गये थे । वह बहुत दिनो से यही कथा कर रहे हैं । कई अभिज्ञ और पारखी नेताओ ने प्रशसा की । गये तो देखा वही प्रशसित पण्डितजी है । उसी वक्त सोचा कि कल आपको वम्बई के पते पर उसकी सूचना दूंगा । जब तक मैं कथा में रहा, बराबर आपकी याद आती रही । कुशल समाचार लिखिये ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४

श्री भवानीप्रसाद गुप्त को लिखा गया पत्र

१९२

पंजाबी क्षेत्र

वं० कृ० १३, १६८२

प्रिय महोदय, नमस्ते।

कार्ड का उत्तर कल दे चुका हूँ, आज लिफाफा मिला। दोहे का अर्थ स्पष्ट है। वश और कोटि मे श्लेष है। जिहि का अर्थ 'ज्या' करने की क्या जरूरत है? जिहि—जिसका—या जिसके—(यस्य) के अर्थ मे समझिए। मतलब यह है कि वह भले वंश का पुरुष है, जो बहुत धन पाकर भी झुके, इसी की पुष्टि उत्तरार्व मे धनुष के दृष्टान्त से की गई है। जिसके दो 'कोटि' (दो करोड और दो किनारे हैं) है वह सदेश का धनुष अच्छे बांस का धनुष—झुकता है। जिहि 'जिह' का अर्थ ज्या भी सही हो सकता है पर यहाँ उसमें अर्थ-स्वारस्य नही प्रतीत होता। यदि जिहि का अर्थ 'ज्या' ही करना अभीष्ट हो तो यो कह सकते है कि 'ज्या' (चढाने पर) दोनो किनारे (झुके) दिखाई देते हैं।

एक करोड के दो करोड दीखने लगते है। पुरुष के पक्ष में यह अर्थ लगाना ठीक नही है। वहाँ तो 'बहुधन पाय' पडा ही है। दोहे में 'कोटि' और वश के श्लेष का चमत्कार है, एक संस्कृत कवि ने भी इस मजमून को दूसरे ढग पर बांधा है, पूर्वार्ध इस समय याद नही आता, भाव यह है कि धनवान की तृष्णा धन-प्राप्ति से उत्तरोत्तर बढती ही है। उत्तरार्ध है, पश्य कोटिद्वयोपेतं लक्षाय प्रवर धनु। धनुप के (प्रतीयमान पुरुप के) पास दो कोटि (दो करोड) है फिर भी लक्ष-लाख और निशाना-लक्ष्य के लिए झुका है। दो करोड पास है फिर भी लाख की तलाश में ताक लगाए, कमर झुकाए बैठा है। 'वृन्द-विनोद' किसी परीक्षा मे है? आशा है, आप सपरिवार सानन्द है।

भवदीय

पद्मसीह शर्मा

पुनश्च—

भयानक भूल

लिफाफे में पत्र बन्द करते समय भूल से आपका ही पत्र रख दिया, जब वह पोस्ट हो चुका तब इस पत्र पर दृष्टि पडी, इस भूल पर अफसोस भी हुआ, हँसी भी

आई । यदि दोनो पत्र एक साथ न पहुँचे, वह पहले पहुँचा और यह बाद को तो अपना ही पत्र अपने नाम लौटा देखकर आप क्या कहेंगे । मज़ाक, शोखी, गुस्ताखी, इन्सल्ट इत्यादि बहुत-से विकल्प उठ सकते हैं । डाक देवता से प्रार्थना है कि यह दोनो पत्र साथ ही पहुँचे । देखिए क्या होता है ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५

श्री प० झाबरमल्ल शर्मा को लिखे गये पत्र

२१३

नायक नगला
पो० ग्रो० चाँदपुर (बिजनौर)
श्रा० व० ३, ७७

प्रिय महोदय, प्रणाम।

२६ जुलाई के सा० 'भारत-मित्र' में 'पुस्तकालयो को सूचना' पढकर मै आपसे अनुरोध करता हूँ कि भारतीय प्राचीन लिपि-माला[1] की १ प्रति महाविद्यालय ज्वालापुर को प्रदान कराने की कृपा कीजिए। म० वि० एक उपयुक्त और दान-पात्र सस्था है। उसका एक पुस्तकालय भी है। मै वहाँ के पुस्तकाव्यक्ष को सूचना दे रहा हूँ। यह भी इस विषय में आपसे प्रार्थना करेगे।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

२१४

कनखल
आषाढ़ वदि १८८२, शुक्रवार

श्रीमत्सु, सादर प्रणाम।

१०,६ का कृपा-पत्र आज मिला। एतदर्थ भूरिशोधन्यवादा:।

स्वर्गीय प० गणपति शर्माजी के सम्बन्ध में 'गणपति-वियोग-विलाप' और 'स्थावर मे जीव विचार शास्त्रार्थ' नामक दो ट्रैक्टो में मैने लिखा था, उनके लिए आज घर को पत्र लिख दिया है। वहाँ से आपकी सेवा में पहुँच जायँगे। न पहुँचे तो एक हफ़्ते बाद मुझे फिर याद दिलाइये।

---

१ भारतीय प्राचीन लिपिमाला रायबहादुर महामहोपाध्याय स्व० गौरीशकर हीराचन्द ओझा महाशय रचित। इस पुस्तक का मूल्य २५) है। इन पक्तियो के लेखक का अनुरोध स्वीकार कर इस पुस्तक की प्राय ६० प्रतियाँ सार्वजनिक पुस्तकालयो को श्रीमान् बा० घनश्यामदासजी बिड़ला महाशय ने प्रदान करने की उदारता दिखाई थी।

श्री प० चन्द्रधरजी गुलेरी के लेखो का सग्रह जितनी जल्दी प्रकाशित हो जाय उतना ही अच्छा। मै उनके विषय मे अवश्य अपने विचार श्रद्धा-भक्ति सहित प्रकट करूँगा। पर आप लेखो का सग्रह तो कराइये। यह बहुत जरूरी काम है कि प० माधवप्रसादजी मिश्र और प० चन्द्रधरजी गुलेरी के लेख एकत्र किये जायँ। यह हिन्दी साहित्य की एक स्थायी सम्पत्ति है, और यही उनकी सच्ची जीवनी है। खेतडी नरेश स्वामी विवेकानन्द के मित्र राजा अजीतसिहजी की जो जीवनी आपने तैयार की थी वह भी प्रकाशित हो जानी चाहिए। आजकल क्या लिख रहे है? हाँ, इधर वर्षा तो कुछ हो गई है, पर अभी जी ठिकाने नही हुआ, "जी ठिकाने हो तो सब कुछ हो सके।" विवाह की मीमासा भी तभी होगी।

जिस पत्र का मुझे उत्तर नही मिला या जो आपको नही मिला, उसमे मैने अपनी पुस्तक छपाने की बाबत पूछा था। इधर मै इसी उद्देश्य से आया था। यहाँ भी एक प्रेस खुला है, पर वह ठीक नही निकला। सुदर्शन प्रेस को कह-सुनकर ठीक किया है, पर वहाँ काम देर में होगा और कोई इधर अच्छा प्रेस नही। मेरी पुस्तक का भूमिका-भाग समाप्त हो गया है उसे कही जल्द छपवाना चाहता हूँ, यही चिन्ता इस समय परेशान किए हुए है।

सुना है, 'कलकत्ता-समाचार' फिर कलकत्ते से निकलने वाला है। एक ही समय मे विष्णु के भी दो अवतार भगवान् रामचन्द्र और परशुराम के रूप में हुए थे। यह भी कुछ ऐसी ही बात है।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

२१५

C/O 'आर्यमित्र'-सम्पादक, राजामंडी, आगरा
भादो सुदि १८८२, शुक्रवार

श्री पण्डितजी महाराज, प्रणाम।

आज आपको अपने मतलब की सुनाता हूँ। तवज्जअ के कानो से सुनिए।

मै कोई डेढ महीने से यहाँ अकबराबाद में यानी आगरे में अथवा 'अर्गलपुर' मे हूँ, भूमिका-भाग का तृतीय सस्करण छपा रहा हूँ। पुस्तक छप चुकी है। सिर्फ विषय-सूची के दो फार्म बाकी हैं। इस बार नज़रसानी में दो फार्म के करीब मैटर बढ गया है। प्रकाशित होने पर भेजूँगा ही। आप देखकर इन्शा-अल्लाह खुश होगे।

कुछ मित्रो का अनुरोध है कि इस पुस्तक के अन्त में कुछ प्रसिद्ध विद्वानो की सम्मतिया और समालोचनाओ का साराश अवश्य दिया जाय। इसलिए

दरखास्त है कि श्री ओझाजी, हाँ, श्री ओझाजी महाराज से "सक्षिप्त सारार्थ विलास-गर्मां शुभा सम्मति मादाय" शीघ्र भेजिये । श्री ओझाजी महाराज की शुभ सम्मति से पुस्तक को चार चाँद लग जायँगे । 'ऐतिहासिकता' प्राप्त हो जायगी ।

आशा है, आप यह काम सौ काम छोडकर भी मित्रानुग्रह-काक्षया अवश्य करा देगे । ऐसी दृढ आशा है । एक बात ।

कल नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका के नये अक मे श्री ओझाजी महराज के इतिहास की समालोचना पढी, उसी वक्त से पुस्तक के पढने के लिए बेताब हूँ । किसी विज्ञापन या सूचना में कुछ दिन पहले पढा था कि इस इतिहास के पृथक् खण्ड नही बिकेंगे । पूरी सीरीज का ही ग्राहक होना होगा । मै आजकल 'अर्थ-सकट' में हूँ । बजट मे गुजाइश नही है । सतसई छपाने का खर्च और सिर पर आ पडा । प्रेस का बिल चुकाने की चिन्ता है । अकबर ने इस मतलब को अपने एक शेर में बडी खूबी से जाहिर किया है । पूरा शेर इस वक्त याद नही आता । पहले मिसरे के शुरू में कहा है कि कलामे अकबर पढा जा रहा था । वाह, वाह के दाद का दौंगडा बरस रहा था । ऐन इसी वक्त 'कुल्लियाते अकबर' की छपाई का बिल मतबे से आ गया । शायकीने कलाम समझे कि कलामे अकबर के कुछ सुना दीजिए । इस मौके का समा अकबर ने एक शेर में बाँधा है । पूरा याद नही है, अधूरा लिखता हूँ ।

'शोरे-तहसी बज्म में उठ्ठा—
मगर सब हो गये खामोश जब मतबे का बिल आया ।

हाँ, तो मै कह रहा था कि प्रेस का बिल चुकाना है । इसलिए सरेदस्त इतिहास-माला का ग्राहक हो नही सकता और पुस्तक पढने का लोभ भी सबरण नही हो सकता । सो इस समस्या को आप सुलझाइए । जैसे बने इतिहास की एक कापी भिजवाइये जरूर । यह हुई दूसरी बात । हाँ, बा० हीरालाल साहब कौन सज्जन हे । जिन्होने समालोचना पर एक और लेख ना० प्र० प० की इस सख्या में लिखा है । आदमी मजेदार मालूम होते हैं ।

अपना कुशल समाचार लिखिए । मै अभी १०-१५ दिन पुस्तक प्रकाशित होने तक यहाँ हूँ । हाँ, एक ज़रूरी बात तो रही जाती है, श्रीवृन्दावन में होने वाले हि० सा० स० के प्रधान-पद पर ओझाजी महाराज को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं । क्या यह सम्भव है ? यानी वह लोकानुग्रह-काक्षया स्वीकार करने की कृपा कर सकेंगे ? कोई कहता था कि वह कारण विशेष से स्वीकार करने में असमर्थ हैं । ऐसा अनिवार्य कारण कौन-सा हो सकता है, जो इस पद की स्वीकृति में बाधक है ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१६

नायक नगला
पो० ओ० चांदपुर (बिजनौर)
का० सु० ३, १८८२

श्रीमत्सु, सादर प्रणाम निवेदयति ।

मै परसो सायकाल घर पहुँच गया। उस दिन दिवाली की सन्ध्या को, इधर आँधी-मेह का तूफान खूब आया। रोशनी कही न हो सकी। विधि का दौरात्म्य।

विशेषाङ्क आपका 'घणा चोखा' निकला। लेख मार्के के है। विस्तृत सम्मति पीछे भेजूंगा। वह चिट्ठी भी। अभी तबीयत ठीक नही हुई है।

'स्वतन्त्र' यहाँ नही आता, नही मालूम वह लेख छपा या नही ? छपा हो और आप उसे उद्धृत करे तो उस लेख को पहले मैं देख लूं। तब आप उद्धृत करें। पूरा उद्धृत करे। और अशुद्धियो का परिमार्जन करके स्वतन्त्र में छपा होगा तो अवश्य अशुद्ध होगा। उस दिन जल्दी मे श्री व्याख्यान-वाचस्पतिजी के दर्शन न कर सका। इस अपराध के लिए मेरी ओर से प्रणाम निवेदन पुर सर क्षमा माँग दीजिए। श्री प० बाबूरामजी तथा श्री अजितजी को प्रणाम।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

२१७

C/O बेताब प्रिंटिंग प्रेस
चाह रहट, दिल्ली
पौष सुदि ४, '७८, शनिवार

प्रिय पण्डितजी, प्रणाम।

मै इस बीच मे एक आत्मीय की बीमारी का समाचार पाकर मकान चला गया था। १२ दिन बाद अभी परसो लौटा हूँ। आकर आपका कृपा-पत्र पाया। ब्लाक भी मिल गया। इस कृपा के लिए अनेक धन्यवाद। ब्लाक बहुत अच्छा बना है। ब्लाक मेकर से ब्लाक का 'वुड कट' लेकर भी भिजवाइये और ब्लाक का बिल भी। आशा है, कि अब तक आप देश से कलकत्ते लौट गये होगे। मै यहां होता तो उस दिन स्टेशन पर आपके दर्शन अवश्य करता। मै १० दिन तक अनुपस्थित रहा। इसलिए छपाई का काम बन्द रहा और पुस्तक गया-अधिवेशन तक प्रकाशित न हो सकी।

यह मौका निकल गया। खैर, समालोचना पढ़ी। इस कृपा के लिए अत्यन्त अनुगृहीत एव आभारी हूँ।

कृपा-दृष्टि रखिये। वैद्यजी वहाँ हो तो उनसे प्रणाम कहिये।

आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१८

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
मिति फाल्गुन सुदि ८, १८८२

श्रीमत्सत्रपावनतेन मूर्ध्ना भूयो भूयः प्रणाम्य निवेदयति।

क्षमा कीजिये, महाराज, क्षमा, आपकी आज्ञा का पालन नही हो सका। जैसा कि मैने पहले पत्र मे सूचना दी थी, मै १८ ता० को दिल्ली आने वाला था। विचार था वही सामने विषय को लक्ष्य करके कुछ लिखूंगा, तो मजेदार होगा। पर अचानक ऐन वक्त पर प्रोग्राम बदल गया। मै आता-आता रह गया। आप मुझ पर झुंझला रहे होगे कि कमबख्त ने अच्छा चकमा दिया। दुर्दैव बडे-बडो के मनोरथ मिट्टी में मिला देता है। यह उसी की लीला है कि उस लेख की जगह यह पत्र लिख रहा हूँ। धन्यवाद पाने के स्थान में क्षमा चाह रहा हूँ। अब क्षमा कीजिये या धिक्कार दीजिये। यह आपका अधिकार है।

आपका वही
जो आज्ञा का पालन नहीं कर सका।

२१९

नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
फाल्गुन वदि २, ८३

प्रिय पण्डितजी महाराज, प्रणाम।

कृपा-पत्र मिला। अत्यन्त अनुगृहीत हुआ। कई महीने हुए मै दिल्ली गया था, दर्शनार्थ दरे-दौलत पर हाजिर हुआ था, आप कही बाहर गये हुए थे। हाजिरी देकर लौट आया।

देखिये, आपके दर्शन कब होते है, और कहाँ होते है। भरतपुर-सम्मेलन में

पधारने की सम्भावना तो बहुत कम है। भरतपुर का सम्मेलन क्या एक साका होगा। बड़े आदमियो की एक बहुत बडी प्रदर्शनी होगी।

सम्पादक-सम्मेलन के प्रधान-पद पर वाजपेयीजी का बैठाया जाना सर्वथा समुचित होगा। यही होना चाहिए। आपके इस शुभ विचार से मैं सहमत हूँ। यद्यपि रावजी की घोषणानुसार मैं सम्पादक-सम्मेलन का एक 'बागी' व्यक्ति हूँ। इसलिए इस सम्बन्ध मे सम्मति देने का कोई अधिकार नही रखता। सम्मति प्रकट करनी पडी।

मेरा विचार इसी बीच मे कुछ-कुछ दिल्ली आने का भी हो रहा है, आया और आप वहाँ हुए तो दर्शन करूँगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६

श्री भवानीचरणराय को लिखा गया पत्र

२२०

हिन्दी प्रेस, प्रयाग

प्रियवर, स्वस्ति।

आपका २३-१० का पत्र यथासमय मिल गया था। उत्तर मे विलम्ब इसलिए हुआ कि सम्मेलन-कार्यालय मे चिट्ठियो के लिए बराबर प्रयत्न करना पडा फिर भी काम न बना, कोई पत्र भी वहाँ से उपलब्ध न हो सका। पुरानी चिट्ठी की कोई फाइल न मिल सकी। हाँ, एक लाभ इस खोज मे यह हुआ कि विद्यापति विपयक निबन्ध की हस्तलिखित प्रति हाथ आ गई। उसे भेजता हूँ, साथ ही सम्मेलन से प्रकाशित पुस्तिका भी। 'मनोरमा' में प्रकाशित उस लेख की मूल कापी भी 'मनोरमा' के वर्त्तमान सम्पादक से प्राप्त करके भेज रहा हूँ। इस लेख की प्रकाशित (मुद्रित) कटिग मिल सकेगी तो चेष्टा करूँगा। वर्माजी ने अपने लेख में 'माधुरी' मे प्रकाशित जिस लेख का उल्लेख किया है, उसका मुझे इस समय स्मरण नही है, यथासमय मालूम करके सूचना दूंगा। पद्यकल्पतरु के आरम्भ में जिन हिन्दी निबन्धो का उल्लेख है उनके अतिरिक्त और कोई निबन्ध मुझे याद नही आ रहा है। शायद इतने ही हिन्दी 'निबन्ध' उन्होंने लिखे थे। 'माधुरी' वाले निबन्ध के सम्बन्ध में मालूम करूँगा। श्री भुवनेश्वरसिंहजी को पत्रो के लिए आप एक पत्र लिखिए, उसका कुछ उत्तर न मिले तो मुझे सूचना दीजिए। मै लिखूंगा। इसी प्रकार 'वीणा'-सम्पादक को भी लिखिए। पैकट की पहुँच लिखिए।

मै अब स्वस्थ हूँ। आशा है, आप सपरिवार सानन्द है।

पुनश्च :

आपने स्वर्गीय रायजी के विपय में कुछ अग्रेजी-बगला पत्रो की कटिग्स भेजी थी। वह वापस भेजता हूँ। आपको शायद कभी इनकी जरूरत पडे।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१७

आचार्य श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी को लिखा गया पत्र

२२१

पूज्य द्विवेदीजी महाराज, प्रणमामि ।

कृपा पत्र मिला, अनुगृहीत किया । स्वास्थ्य-भग के समाचार से चिन्ता हुई, जाने दीजिए, समालोचना ऐसी आवश्यक नही है । यही क्या कम है कि आप इस निर्बलता और अस्वस्थ दशा में भी पढने का कष्ट उठा रहे है । यही उन निबन्धो के परम सौभाग्य और उपादेयता का प्रमाण है ।

'विबुधामन्त्रणम्' बेशक उतना रोचक या समाज की दशा के अनुकूल तो नही है, पर प्राचीनता-प्रेमी और वर्णाश्रमधर्माभिमानी लोगो के मत का अच्छा निदर्शन है । जोरदार अपील है । उसमे बाण की शैली का सफल अनुकरण है । मुझे तो वह बहुत पसन्द है । वर्णाश्रमधर्मसघ तो आज भी उन बातो का समर्थन और प्रचार कर रहा है जो विबुधामन्त्रणम् में कही गई है । शास्त्रीजी सनातनधर्मी तो थे ही इसलिए वे उनके धार्मिक विचार है । प्राप्त पत्रम् भी पठनीय है । स्त्रियो की अच्छी वकालत है । उद्भिज परिषत् में दार्शनिक तत्त्व का विवेचन बडा सरस और सरल है । महारण्य पर्यवेक्षणम् तो बकिम के लोकरहस्य से भी बहुत बढा-चढा है । इन बाकी निबन्धो को भी शनै शनै देख डालिये । कुछ न कुछ मनोरजन होगा ही ।

आपकी इतनी क्षीणता 'सरस्वती' की सेवा के परिश्रम का फल है । आजकल के सम्पादको के सम्पादन से जब आपके सम्पादन की तुलना करता हूँ तो अन्तरम् महदन्तरम् प्रतीत होता है । एक बार आपने स्वामी सत्यदेव के प्रसग में कहा था कि कच्चा माल मांगकर उसे व्यवहारोपयुक्त बनाना पडता है । बात बिल्कुल ठीक थी । आजकल तो हिन्दी के अनेक सम्पादक कच्चे माल में भी कूडा-करकट मिलाकर उसे भद्दा बना देते है । शब्द-शुद्धि की ओर तो ध्यान नही देते, या ज्ञान ही नही रखते ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१८

राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त को लिखा गया पत्र

२२२

महाविद्यालय, ज्वालापुर
२७-५-१२

श्रीयुत् सुहृद्वर, नमस्ते।

मै परसो वापस आया हूँ। 'सतसई' की टीका मिली। इमे देखकर तो मुझे भी ज्वर चढता है।

समालोचना आपकी मार्के की निकली है। कोई उसके विरुद्ध लिखे तो देखा जायगा। कुशल समाचार लिखते रहिये

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

१६

श्री प० भीमसेन शर्मा को लिखे गये पत्र

२२३

महाविद्यालय, ज्वालापुर
७-१२-१२

नमो ब्रह्मणे।

मैं कल यहाँ आया हूँ। एक कार्ड सूचना का कल ही भेज चुका हूँ। आज नायक नगले से लौटे हुए दो पैकिट पहुँचे। २-३ फार्म और शास्त्रार्थ, इस दशा में शुद्धि-पत्र तो छापना ही पडेगा। अस्तु, जैसा छप रहा है, गनीमत है। कुल शास्त्रार्थ के कै फार्म होगे। किस तारीख तक शास्त्रार्थ समाप्त हो जायगा।

कविता के लिए कल फिर सख्त तकाज़ा भेजा है शायद आ जाय।

जीवनी भी लिखने की कोशिश करूँगा। क्या कहूँ, घर इसी ख़याल से गया था कि ४-५ दिन एकान्त में निश्चिन्तता से बैठकर लिख डालूँगा। पर, वहाँ एक तो बैठना कम मिला, इधर-उधर फिरना पडा और इसी बीच मे रायसाहब रामावतार के बारे में लम्बा-चौडा जवाब तलब कर बैठे, जिसके लिए मुझे लम्बी-चौड़ी अपोलोजी लिखनी पडी। "कभी फुर्सत में सुन लेना, बडी है दास्ता मेरी", इसलिए कुछ न हो सका। देखिए, अब कोशिश करूँगा। हो गया तो अहोभाग्य, नही चित्रमय जगत् के लिए जो लिखी थी उसे ही बढाकर भेजूंगा, और भी पत्र के लिए कुछ फुटकर लेख भेजूंगा।

मेरा इरादा पक्का दुगड्डे आने का था परन्तु साथ में असबाब बहुत हो गया था, इस झझट से सीधा यही आना पड़ा। नही तो सब कुछ ठीक हो जाता। यह जगह अब शान्तिदायक नही रही। चित्त नही लगता। आपके स्वच्छन्द निवास के लिए एक बडी अच्छी एकान्त और सुन्दर जगह ठीक कर आया हूँ, जगल भी है, नदी भी है। बनी-बनाई रोटी मिलने का प्रबन्ध भी है। रसपान और गन्ने चूसने का भी मजा है। आप निबटकर आजायँ तो चलें, आपकी पसन्द हो तो वहाँ कुटीर निर्माण करा दिया जायगा। बैठे-बैठे लेटे-लेटे वेदान्त विचारते रहा करना। मैं भी कभी-कभी आ जाया करूँगा। हो सका तो सतसई वही बैठकर लिख डालेंगे। अस्तु।

आपके पास कपडा तो थोडा नही है। आप दुलाई क्यो नही ले गये ? सर्दी का ख़याल प्रेस की अशुद्धियो से अधिक रखियेगा। वी० पी० कहाँ से होगी, यह पीछे

निश्चय करके लिखूंगा। हाँ, बा० मैथिलीशरणजी शिकायत करते हैं और सिफारिश चाहते हैं कि दुगड्डे से उनके पत्रों का उत्तर तक नहीं दिया जाता। नैथाणीजी से कह दीजिए कि ऐसे भले आदमी को दिक करना ठीक नहीं। श्री स्वामी ब्लाकटानन्दजी का प्रेस यहाँ न आया तो प्रेस का और 'भारतोदय' दोनों का खात्मा समझिये। क्या हाल है ?

भवदीय
पदमसिंह, शर्मा

२२१

महाविद्यालय, ज्वालापुर
८-१२-२२

नमोब्रह्मणे, त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि, त्वामेव ब्रह्म वदिष्यामि।

सो महाराज ! इस प्रकार आप अपनी स्तुति सुनकर प्रसन्न हूजिए, खिन्न न हूजिए।

आपका कृपा-पत्र चौथे फार्म के साथ अभी मिला, पढकर दुःख हुआ। मुझे कल से जुकाम और बुखार भी है। रात-भर नींद नहीं आई, "नाक से बहता है मेरी दोस्ते मन दरयाए गंग, सिर मेरा क्या आज यह कैलास पर्वत हो गया।" इसलिए आज अधिक नहीं लिख सकता। लाला द्वारकादासजी वास्तव में महापुरुष थे। उनकी मृत्यु से आर्यजाति को एक सख्त धक्का लगा है। आर्य-गज़ट भेजता हूँ। लाला लाजपतराय ने उनके विषय में जो कुछ लिखा और कहा है, इसका दर्दभरी इबारत में तर्जुमा कर लीजिए। 'भारतोदय' में निकल जायगा, अवश्य निकलना चाहिए। एक नोट मैं भी इस विषय में लिखकर भेज दूंगा जो लाला लाजपतराय के लेख के ऊपर रहेगा। अब की बार घर के कागज़ों में पुराने प्रचारक का एक पर्चा मिला है जिसमें श्री पं० गणपतिजी का एक शास्त्रार्थ झालरापाटन दर्ज है। पण्डितजी इसका ज़िक्र प्राय किया करते थे, इसका अनुवाद भी कर लीजिए। काम आवेगा, इसी में दे देंगे या जीवनी में। इसी पर्चे में कांगडी के उत्सव के हाल में जो पण्डितजी के व्याख्यानों पर लिखा गया है, उसे भी उद्धृत कर लीजिए। प्रचारक का यह पर्चा सुरक्षित रखिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२२५

नायक नगला,
पो० ओ० चाँदपुर, (बिजनौर)
फाल्गुन कृष्ण १४, १६८४

श्री १०८ मन्तः स्वामिपादाः साष्टागपात प्रणम्यते।

महाराज, क्षमा कीजिए, मै उत्सव पर नही पहुँच सका। इस समय कई विघ्न ऐसे ही आ पडे जिनका उल्लेख व्यर्थ ही लेख को वढा देगा, आशा है, उत्सव सफलता से समाप्त हो गया है।

एक प्रार्थना है, प० बनारसीदासजी चतुर्वेदी कलकत्ते से 'विशाल भारत' पत्र निकाल रहे है। उसके लिए वह एक लेख महाविद्यालय पर मुझसे माँग रहे है। मै भी लिखना चाहता हूँ। मै अपने ढग पर लिखना चाहता हूँ, उसमें वावू सीताराम, स्वा० दर्शनानन्द, आप यानी श्री मुख्याध्यापकजी, श्री गुरुजी गणपतिजी इत्यादि का वृत्तान्त होगा। विदेहजी आप अपने समय की घटनाओ का सक्षेप में उल्लेख कर दीजिए क्योकि सवसे पहले आप ही ने काम सँभाला था। जव आप पहुँचे क्या दशा थी, कितने छात्र थे। आपने एकाकी कितने दिनो काम किया था। उस समय सस्था रजिस्टर्ड थी या नही। तव सवत् क्या था आपके समय में मुख्य उल्लेख्य घटनाएँ क्या हुई फिर आचार्यजी, रावजी और सपादकजी कव पहुँचे। इत्यादि और जो वातें आपको महाविद्यालय के सम्बन्ध में याद आवें, लिखिए। गुरुकुल सिकन्दरावाद किस सवत् मे खुला था, यह भी लिखिए। इसका जिक्र भी स्वा० दर्शनानन्द के कारनामो में आवेगा। अपनी जीवनी के सम्बन्ध में भी कुछ नोट लिखा दीजिए। उपाध्यायजी लिख देंगे, यह सव जल्दी ही भिजवा दीजिए। लेख शीघ्र ही भेजना है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०

श्री मास्टर रामस्वरूप गर्ग को लिखा गया पत्र

२२६

C/O आर्यमित्र, आगरा
२१-६-१६२५

प्रियवर मास्टरजी, नमस्ते।

आपके दोनो कार्ड मिले, एक आज और एक परसों-परल्ले रोज़। आपकी इस तवील अलालत का हाल मालूम करके मुझे अफसोस और तग्रज्जुब है। आप-सा मोहतात मेहनती, वर्जिशी और तकरीरपसन्द हट्टा-कट्टा हेडमास्टर इस तरह बुखार की जद में कैसे आया। पढने से जी चुरानेवाले शरीर लडकों की बद्दुआ का असर तो नही। फिर यह इतने लंघन आपने किसके मशवरे से कर डाले। अगर लघन करने थे तो फिर डाक्टर का एहसान लेने की क्या ज़रूरत थी। आठ रोज़ तक आपने मुंह में एक दाना भी नही दिया तो भी बुखार ने नही छोड़ा। आखिर इसकी वजह क्या है? क्या फसली बुखार का इस कदर जोर है।

'तुलसी के पत्ते', 'दारचीनी', 'सोंठ', 'स्याह मिरच' और अगर आपका ज़ाहदे खुश्क इजाज़त दे तो कदरे चाय की चाय पीजिए और पिलाइये उन सबको जिन्हें बुखार आता हो या आने का अन्देशा हो। मलेरिया नही होगा यह मुजर्रब नुस्खा है। मैं वहाँ होता तो जब्रन आपको पिलाता और दो रोज में चगा कर देता। उम्मीद है आप अब अच्छे हो जायेंगे और इसके ज़वाब में पढूंगा आप बिल्कुल दुरुस्त हैं···।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१

श्री वैद्य रामचन्द्र शर्मा को लिखा गया पत्र

२२७

महाविद्यालय, ज्वालापुर

७-१०-२८

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते।

आशा है, आप भले-चगे है। मै छुट्टियो मे यही बैठ गया था। अभी मकान नही पहुँचा। अब दो-तीन दिन में जा रहा हूँ। यहाँ बैठकर मैने दो-एक लेख लिखे है। एक छप गया है, जो भेजना हूँ। दिल थामकर पढ लीजिए और ससार की कृतघ्नता पर आँसू बहाइए। खुदपरस्त मक्कारो पर लानत भेजिए। यह सस्मरण मैने बडे दर्द से मजबूर होकर लिखे है। और शायद कुछ और भी इस पर लिखना पडे।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२२

श्री श्यामसुन्दरजी खत्री को लिखा गया पत्र

२२८

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
२५-३-१९३०

प्रियवर श्यामसुन्दरजी, सप्रेम प्रणाम।

आपका १९-३ का कृपा-पत्र आया, समाचार जानकर प्रसन्नता हुई। भई बात यह है 'बिस्मिल हो या सय्याद', सच बात किसी को नही सुहाती। सब तारीफ सुनना चाहते है। मैने बहुत टाला पर वह न माने। मै आखिर और करता क्या। जो बात थी लिख दी। बँधी गत मुझे बजानी नही आती। आजकल समालोचना और भूमिका की एक ढग की बँधी हुई इबारत मुकर्रिर हो गई है। समालोचक और भूमिका-लेखक उसी की नकल-सी कर देते है। खैर, जो हो बिस्मिलजी इससे खुश न हुए। एक लबा पत्र लिखकर अपनी सफाई पेश की, कुछ तरमीम चाही। मैने लिख दिया अब यह नही हो सकता। या तो ज्यो का त्यो जाने दो या बिल्कुल ही जाने दो।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

२३

प० मदनमोहनलालजी दीक्षित को लिखा गया पत्र

२२९

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
३-११-३१

प्रिय दीक्षितजी, प्रणाम।

प० रघुनन्दनजी के कार्ड पर आपकी पक्तियाँ पढी। सचमुच वे दो दिन बडी मौज में गुजरे। जीवन मे ऐसा समय कभी-कभी आता है जो कुछ सुखद स्मृति छोड जाता है। मै इस बीच मे कालाकाकर कवि-सम्मेलन मे चला गया था। वहाँ भी खूब काव्य-चर्चा रही। वहाँ से कानपुर के कविवर हितैषी साथ आ गये थे। कई दिन साथ रहकर अभी कल गये है।

प्राचीन पाचाल प्रदेश देखने की मेरी इच्छा बहुत दिनो से है। कभी आऊँगा। श्रीमान् दुबेजी से प्रणाम कहिये। 'पद्म-पराग' पढकर लिखिए कैसा है, मै अभी कुछ दिन यही हूँ। एकेडेमी का लेक्चर अब जनवरी में होगा। उसे लिखकर पूरा करना है। और सब कुशल है। रघुनन्दनजी सपरिवार सानन्द है। आपके पत्र का उत्तर उन्होने दे दिया है। आशा है, आप सकुशल है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२४

श्री प्रो० रामदास गौड़ को लिखे गये पत्र

२३०

महाविद्यालय, ज्वालापुर
श्रावण सुदि ८, ८२

मातृभाषा सुभक्ताय ज्ञान-विज्ञानशालिने। गौडेन्द्राय नमस्तुभ्यं चरखा, चक्र धारिणे।

कृपा-पत्र पाकर प्रसन्नता हुई और चिन्ता मिटी। गरमी का दौरा इस वर्ष सचमुच पराकाष्ठा को पहुँच गया था—फिर आगरे का तो कहना ही क्या है।

अयोध्या से निकलने वाला मानस-पीयूष मैंने नहीं देखा। उसमें कुछ आपने देना शुरू कर दिया है या लमगोडाजी ने? इसमें सन्देह नहीं कि श्री लमगोडाजी रामायण के विशेषज्ञ है। आगरे में रामायण पर उनके भाषण सुनने का मुझे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ है। पर वह भाष्य स्वय नहीं लिख सकते। सुना है वह उर्दू में या अंग्रेजी में लिखते है, उसका अनुवाद दूसरे सज्जन करते है ऐसा श्री प्रेमचन्दजी कहते थे। राम जाने कहाँ तक ठीक है। रामायण का भाष्य तो आप ही कर सकते है। नाटक के सम्बन्ध मे भरत मुनि का नाट्यशास्त्र और धनञ्जय का दशरूपक ये दो ग्रन्थ सस्कृत में है। पहले का मूल्य तीन रुपये और दूसरे का चौदह आने है। निर्णय सागर प्रेस, बम्बई में छपे है। हिन्दी में हरिश्चन्द्रजी का नाटक आपके पास है ही। साहित्यालोचन मे रायसाहब बाबू श्यामसुन्दरजी ने भी इधर-उधर से लेकर कुछ लिखा है। सो आपने देखा ही होगा। अंग्रेजी में इस विषय पर कोई उत्तम ग्रन्थ अवश्य होगा। जिसका पता आपको होगा ही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३१

महाविद्यालय, ज्वालापुर
ज्येष्ठ सुदि ३, १९८४

श्री गौडेन्द्राय नमः।

मै अभी यही हूँ। चैत्र के आरम्भ से। आपका १३-२-८४ का कृपा-कार्ड घर से लौटकर आज ही यहाँ मिला। मै आपको पत्र लिखने का कई दिन से विचार कर रहा था। एक पत्र शायद यहाँ आकर भेजा भी था। नाटक घर पर रखा है। मै

आज ही चि० रामनाथ को लिखता हूँ वह वहाँ से आपकी सेवा मे रजिस्टर्ड पार्सल से पत्र पहुँचते ही भेज देगा। नाटक की सुध आपको आ गई। यह जानकर हर्ष हुआ। आप उस पर जो कुछ लिखेगे मै समझता हूँ, मुझ से तो अच्छा ही लिखेंगे और उसे देखकर मुझे कहना पडेगा कि 'मैंने यह जाना कि गोया यह भी मेरे दिल मे था'। समालोचकों की कुछ न पूछिए। आपका और मेरा तो जिक्र ही क्या, वह तो नाट्याचार्य भरत मुनि को भी बख्शने वाले नही।

आजकल और क्या लिख-पढ रहे हैं? जबलपुर के एक सज्जन हैं (या थे)। शायद विनायक मिश्र नाम था। जिन्होने रामचरितमानस पर टीका की है, जिसे आप सराहते थे, उन्होने अलकार पर एक छोटी-सी पोथी लिखी थी, जिसका नाम भूल गया हूँ। आपको याद हो तो लिखिए उसका नाम और मिलने का पता भी। हाँ, छायावाद के अन्धकार पर आपकी शुभ सम्मति क्या प्रकाश डालती है, यह देखना चाहता हूँ। छायावाद का दौरात्म्य प्रतिदिन बढता जा रहा है। मई की 'सरस्वती' मे भी श्री द्विवेदीजी ने सुकवि किंकर के छायावाद पर लेख लिखा है। आपने देखा होगा, न देखा हो तो देखिए। बहुत दिनो से आपका कोई लेख पढने को नही मिला।

सञ्जीवन भाष्य की ओर जो आपने मार्मिक शब्दो में ध्यान दिलाया है, इसने मुझे थोडी देर के लिए इस समय विचित्र दशा में पहुँचा दिया है। अफसोस होता है कि कुछ न हुआ।

"ए बसा आरजू कि खाक शुद:।"

अपनी हालत को देखकर हिम्मत छूट रही है। मीर का यह शेर हस्बहाल मालूम होता है—

"है सुबह का-सा अर्सा पीरी का इसमें क्या है?
अब वक्त ही है कितना? फुरसत कहाँ रही है।"

फिर भी जब तक साँस तब तक आस। वहाँ तो आजकल खूब गरमी होगी। आगरे की गरमी का वर्णन हरिशंकरजी ने एक कवित्त में किया है सुनने लायक है—

"घरतें निकसिबे को चाहत न चित्त नेंक,
घोर घाम तप्त धाम सम सरसत है।
लूअन को लोय तेज तीर-सी लगत तीखी,
जम की बहिन-सी दुपैरी दरसत है।

नारी नर, पंछी-पसु, पेडन की कौन कहे,
ठौर-ठौर ठडक के ताईं तरसत है।
छत्तन पैं, पत्तन, पैं, हट्टन पैं, अट्टन पैं,
आजकल आगरे में आग बरसत है ॥"

मैं अभी दस-बीस दिन यहीं हूँ। पत्रोत्तर देने की कृपा कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२५

प० नन्दकुमारजी को लिखे गये पत्र

२३२

नायक नगला, चाँदपुर
(बिजनौर)
फाल्गुन सुदि १०, १९८१

प्रिय शर्माजी, नमस्ते ।

मैं जन्म-शताब्दी पर मथुरा की 'हज' को चला गया था । अभी दो-एक दिन हुए लौटा हूँ । वहाँ आप बहुत याद आये । प० बनारसीदास चतुर्वेदी भी आये थे । पूछते थे, प० रुद्रदत्तजी के लेखो का संग्रह जैसे बने जल्द करा डालिये, बंगवासी-सम्पादक प० रामदत्त रायजी से आप भी कहिए मैं भी उन्हे लिखूंगा । प० जी का फोटो चौबेजी के पास है । उन्हे कही से मिल गया है, और भी उनके पास कुछ सामग्री है, लेख-संग्रह का काम आपके सिर है और यही सबसे महत्व का काम है । किसी चतुर क्लर्क को नियुक्त कर दीजिए । दाम दिला दिये जायँगे । 'पद्म-पराग' छपे तो आपकी आज्ञा का पालन किया जायगा । श्री लाला लाजपतरायजी को लिखकर उनसे अपनी उन पुस्तको के बारे में सम्मति मँगाइये । कम से कम उनकी जीवनी के सम्बन्ध मे ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३३

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चाँदपुर, (बिजनौर)
मिति फाल्गुन कृष्ण ४, १९८२

प्रिय पण्डितजी, प्रणाम ।

माघ कृष्ण १३ का कृपा-कार्ड मिला । इस बीच मे मैं १५ दिन प्रवास में रह अभी लौटा हूँ । आकर आपका पत्र पढा । उत्तर में इसीलिए विलम्ब हुआ ।

प० जनार्दन भट्टजी का पता चल गया । बम्बई से उनका पत्र आगया । बात मालूम हो गई । हाँ, यह जाड़े तो गये और कुछ न हो सका । 'अब के भी दिन बहार के यो ही निकल गये ।' दिसम्बर की 'माधुरी' भी देखी और जनवरी की भी । अब तो इसी पर अमल है—'देख जो कुछ सामने आ जाय मुँह से कुछ न बोल' ।

कांगडी के प० ब्रह्मानन्द जी तो अब स्वामी ब्रह्मानन्द परिव्राजकाचार्य हैं। शताब्दी पर स्वामी श्रद्धानन्दजी से दीक्षा ली थी, पता नहीं कहाँ हैं, प० रुद्रदत्तजी के सम्बन्ध में उनसे मालूम तो बहुत कुछ हो सकता है। आपकी यह सूचना याद कर लूंगा। कहीं पता चल गया तो पूछूंगा। क्या वहाँ पता नहीं चल सकता, कि 'भारत-मित्र' 'बंगवासी' में वह कब थे। आप पूरा प्रयत्न करें तो मालूम हो सकता है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३४

नायक नगला, चांदपुर (बिजनौर)
चैत्र सुदि ८, १९८२

प्रिय पण्डित नन्दकुमार देव शर्मा, नमस्ते।

चैत्र सुदि २ का कृपा-कार्ड कल मिला। मैं समझता था कि मेरा पहला कार्ड नहीं पहुँचा। भई, जैसे हो प० रुद्रदत्तजी के लेखों का संग्रह जरूर कर डालिए। मैंने प० रामदत्तराय जी (हि० व० सम्पादक) को भी इस विषय में लिखा है। आशा है, उनसे भी आपको सहायता मिल सकेगी। प० रामजीलाल शर्माजी को भी मैंने लिखा था कि आपसे निवेदन करें। शायद उन्होंने कहा भी हो। हाँ, होली का हिन्दू समार आपने देखा था? उसमें एक अद्भुत 'संन्यासि गीता', किसी की थी। आप उन सन्यासी को जानते हैं? कोई वास्तव में ऐसे व्यक्ति हैं। या वह लेखक की निरी कल्पना ही है? आप एक ऐतिहासिक पुरुष हैं। इतिहास-मूर्ति हैं। इससे शायद आपको कुछ पता हो उन अद्भुत संन्यासीजी का। आखिर आपने हिन्दु-सभा कलकत्ते में कर ही डाली। लालाजी से अपनी उन पुस्तकों पर सम्मति जरूर लीजिए। अलवर-नरेश को मैं पुस्तक नहीं भेज सका, उनकी उपाधियाँ याद नहीं। निरुपाधि नाम कहीं मान-हानि का कारण न बन जाय। जैसा कहिये करूँ, आजकल तो आप महासभा के कार्य में व्यस्त होंगे। मैं ४-५ दिन बाद हरद्वार जा रहा हूँ। वहाँ भी ईस्टर में कई उत्सव हैं। अबकी गर्मियों में हरद्वार आइये। आशा है, आप सपरिवार सानन्द हैं। भाई साहब का नमस्कार, बच्चों को आशीर्वाद।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३५

शंकर-सदन, हरदुआगंज
विजयादशमी, रविवार, १९८२

प्रिय पण्डितजी, नमस्ते।

आगरे से भेजा हुआ पत्र मिला होगा। मैं और हरिशंकरजी कल सकुशल

यहाँ पहुंच गये, आप सानन्द आ सकते हैं। कोई विघ्न-बाधा नही।

"मुसाफिर रोज आते हैं ये रस्ता रोज चलता है।"

तार देने का विचार था पर आज रविवार है। खुदा के आराम करने का दिन। कल ८-१० बजे तक यह कार्ड आपको मिल जायगा। ऐसी सम्भावना है, १० बजे या दो बजे की गाडी से चलकर आप कल ही दिन मे यहाँ पहुँच सकते हैं। हम लोग परसो तक यहाँ रहकर आपकी प्रतीक्षा करेगे। सूचना मिल जाय तो अलीगढ स्टेशन पर आपकी अभ्यर्थना को उपस्थित रहे। हरदुआगज के अड्डे पर हर वक्त इक्के मिलते है। अड्डा स्टेशन के नजदीक ही है। १०-१२ आने का पूरा इक्का हो जाता है, वैसे चार पांच आने सवारी लेते है। घन्टे-भर का रास्ता है। आइए, शकरजीके दर्शन कर जाइए। अच्छा मौका है। हरिशकरजी नमस्ते कहते है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२६

प० नरदेव शास्त्री को लिखा गया पत्र

२३६

नायक नगला

फाल्गुन कृष्ण १०, सं० १९८४

श्री रावजी, प्रणाम

कार्ड मिला, समाचार विदित भये। 'विशाल भारत' के लिए चतुर्वेदीजी महाविद्यालय के सम्बन्ध मे मुझ से मेरे सस्मरण माँग रहे है। आपकी कुरेद ने उन्हें उकसाया है। महाविद्यालय के विषय में अनेक मधुर सस्मरणो—कटु अनुभवो के सस्कार जो धुँधले पडते जा रहे थे, उन्हे उजाल-उजालकर रग भरना पडेगा, तब कहीं चतुर्वेदीजी का मतालबा पूरा किया जा सकेगा। घटनाएँ तो अनेक है जो लिखी जा सकती है पर कौन घटना कब घटी, इसका लेखा नही, महाविद्यालय किस सवत् में किस दिशा मे खोला गया, पहले कार्यकर्ता कौन-कौन थे, फिर क्रम-विकास की अनुक्रमणिका, आचार्यजी कब निकाले गये, श्री मुख्याध्यापकजी महाविद्यालय में किस सवत् में पहुँचे, इन लोगो के तत्त्वावधान मे प्रथम उत्सव किस सवत् में हुआ, हम मे से कौन कब मन्त्री, मुख्याधिष्ठाता आदि बने इत्यादि विवरण, मै वहाँ किस सवत् में पहुंचा और कब तक रहा इत्यादि बातें।

बाबू सीतारामजी के सम्बन्ध में कुछ बातें, उनका फोटो, मृत्यु-तिथि सवत्। बाबू जगदम्बाप्रसादजी से पूछकर और प्राप्त करके। श्री गुरुजी महाराज किस वर्ष महाविद्यालय में पधारे, कब तक रहे।

श्री भाष्याचार्यजी किस सवत् में थे।

श्री स्वर्गीय चौ० जयकृष्णजी अमृतसरी का सहयोग कब प्राप्त हुआ।

श्री ज्योति स्वरूपजी का समय।

श्री वैद्यजी का जीवन-दान, ऐसी ही अन्य मुख्य-मुख्य बाते जो आपको मालूम हो सके, हिन्ट्स-रूप में मुझे लिख भेजिये। किसी पुरानी रिपोर्ट में कुछ ऐसी बातें निकली हो तो देखिये। श्री गुरूजीका कोई अच्छा फोटो वहाँ हो, उसकी भी जरूरत होगी।

बाबू सीतारामजी का फोटो जन्म मरण तिथि, इत्यादि बातें जरूर मालूम करके लिखिये ।

श्री गुरुजी, स्वामी दर्शनानन्दजी, भाष्याचार्यजी, बाबू सीतारामजी इनमें से जिनका फोटो वहाँ हो वह सब 'विशाल भारत' के पते पर, ९१ अपर सरक्यूलर रोड, कलकत्ता, चौबेजी को वहीं से सीधे भेज दीजिए। बाकी नोट मुझे लिख भेजिए। वैदिक पाठशाला जालन्धर में किस वर्ष खुली थी, जिसमें आचार्यजी काशी से आये थे, यह सब बातें आप नोट कर भेजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२७

श्री मदनलालजी चतुर्वेदी को लिखे गये पत्र

२३७

गुरुकुल, कागडी (बिजनौर)
आषाढ वदि ७, १९८५

प्रिय मदनलालजी, नमस्कार।

कृपा-पत्र मिला, समाचार विदित हुआ। सचमुच वाजपेयीजी की मुझ पर अनन्य कृपा है। उनकी यह कृपा ही मेरे फँसाने का कारण हो गई, फिर भी मैं हृदय से उनका कृतज्ञ हूँ। उनकी सेवा मे मेरा प्रणाम पहुँचा दीजिए। उनका स्वास्थ्य अब कैसा है ? पिछले दिनो मालूम हुआ था अस्वस्थ थे। मैंने बाबू पारसनाथसिंहजी को लिखा था कि श्री वाजपेयीजी को साथ लेकर स्वास्थ्य-सम्पादनार्थ हरद्वार आ जाइये। वहा भी कुछ बीमार थे पर मेरे उस पत्र का उन्होंने कुछ उत्तर न दिया, अस्तु।

आपकी जो कविता ब्रजभाषा में पुराने ढग की होती है वह मुझे अधिक पसन्द आती है, आप उसी ढग पर लिखा कीजिए। सीग कटाकर बछडो में दाखिल न हूजिए, अपना स्टाइल न बिगाडिये, चाहे गीत हो या कवित्त हो, ब्रजभाषा मे 'पिंजरवा, दरवजवा', अच्छे नही मालूम होते। शुद्ध ब्रजभाषा में भी तो गीत लिखे जा सकते है। शकरजी के अनेक गीत ऐसे है। पुराने कवियो ने भी लिखे है। फिर ब्रज-भाषा आपकी तो मातृभाषा है। नई जाति के कवि सब के सब विशुद्ध छायावादी बनते जा रहे है। दो-चार तो पुरानी चाल के प्रकाशवादी भी रहने चाहिएँ। जो कुछ भी हो कविता की भाषा होनी चाहिए। भाव चमत्कार-युक्त हो। पर समझ में आ जायँ। अज्ञेय मीमासा न हो। जो बात किसी की समझ मे ही न आवे वह लोकप्रिय कैसे होगी ? उसकी कोई दाद कैसे देगा ? आजकल के छायावाद का अधिकाश ऐसा ही होता है। कविता के दो प्रधान गुण है प्रसाद और चमत्कार। उर्दू वाले इसे फसाहत और बलागत कहते हैं। अकबर ने कितने अच्छे ढग से इस बात को समझाया है, आप भी समझ लीजिए।

"समझ में साफ़ आ जाये फसाहत इसको कहते है।
असर हो सुनने वाले पर बलाग़त इसको कहते है॥"

कविता चाहे छोटी हो एक ही पंक्ति हो, पर अच्छी हो, जी में जगह कर ले, और

यह तभी होगा जब कविता परिश्रम से लिखी जायगी और दिल से लिखी जायगी। आजकल सद्य कविता के खब्त ने और भी गजब ढा रक्खा है। फसाहत और बलागत की जरूरत ही नही समझी जाती। कविता के सम्बन्ध मे यही ध्यान देने की बातें है। छन्द भी कंडे का होना चाहिए। आपको तो अच्छा अभ्यास है, उसे ही और दृढ कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३८

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चाँदपुर (बिजनौर)
४-४-१६३२

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपने अचानक ही इस मामले मे पडकर बडी सफाई दिखलाई। यह मामला मुझे तो शुरू से ही बेकार मालूम दे रहा है। इसकी ज़रा भी ज़रूरत न थी। सफ़र सर्व-सम्मत पाठ है। राजा शिवप्रसादजी 'सितारेहिन्द' ने अपने गुटके में यही पाठ लिखा है। गुटको के अनेक सस्करणो में ऐसा ही पाठ छपता रहा है। इस पर कभी किसी को आपत्ति नही हुई। आपत्ति होने की कोई बात भी नही, यह व्यर्थ का वितंडा है।

मैं २६-३-३२ रविवार की शाम से प्लेग में बीमार हूँ। पत्र भी चि० रामनाथ से लिखाया है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२८

श्री मोहनलाल महतो वियोगी को लिखे गये पत्र

२३९

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
मा० कृ० १४, ८३

प्रियवर वियोगीजी, नमस्कार।

आपका मा० कृष्ण ७/८३ का कृपा-पत्र और अमूल्य 'निर्माल्य' पाकर परम प्रसन्नता हुई। इस कृपापूर्ण स्मरण के लिए अनेक धन्यवाद।

यह देखकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि आप जैसे चतुर-चितेरे प्रसिद्ध हैं वैसे ही कुशल कवि भी सिद्ध हो रहे हैं। आपकी चित्रकला में व्यंग्य रहता है तो कविता में भी बाँकपन है। आप कवि और चित्रकार दोनों हैं। इस विशेषता के लिए बधाई देता हूँ। निर्माल्य की कवितायें मुझे पसन्द आईं। रचना सुन्दर है। स्थान-स्थान पर प्रतिभा का परिचय मिला है। भाषा साफ है। भाव समझ में आते हैं।

छायावाद की कविता प्राय पहेली के ढंग की होती है और इसलिए कभी-कभी नितान्त दुर्बोध, 'गूंगे की सैन' हो जाती है। पर निर्माल्य की कविताओं का अधिकाश इसका अपवाद है। आपको छायावाद के विषम मार्ग मे सफलता प्राप्त हुई है। मै छायावाद का विशेषज्ञ क्या 'विद्यार्थी' हूँ। छायावाद के बडे-बड़े महारथियों की शुभ और सुन्दर सम्मतियो के सामने मेरी तुच्छ सम्मति का मूल्य ही क्या है? फिर भी यह आपका सौजन्य है जो मेरी सम्मति जानना चाहते है। जो बात समझ में आई, निवेदन कर दी—

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च

निवेदन के अन्त में जो संस्कृत पद्य छपा है, वह बहुत ही भ्रष्ट हो गया है। बेतरह खटकता है। उस पर चिट लगनी चाहिए थी, उत्तरार्ध का पाठ ऐसा होना चाहिए—

'सिकतागत शर्कराकणान तुचिन्वन्ति परं पिपीलिका:"

पूर्वार्ध में—'स्वचिदर्थो' की जगह 'क्वचिदर्थो' हो तो ठीक हो।

२४०

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
फाल्गुण कृ० ११, '८४

प्रिय वियोगीजी,

आपका कृपा-पत्र मिला, सम्मति के लिए आपको बहुत प्रतीक्षा करनी पडी। इसका मुझे खेद है, पुस्तक को मनोयोगपूर्वक पढने का मुझे अब तक अवकाश नही मिला था। इसलिए विलम्ब हुआ क्षमा कीजिए।

'इकतारा' मुझे 'निर्माल्य' से भी अधिक पसन्द आया, आपकी रचना मे उत्तरोत्तर चमत्कार बढता जाता है। 'इकतारे' की कई कविताएँ तो बहुत ही सुन्दर है। यथा 'समय' 'रजकण' 'चित्रपट', 'आँसू', कवि, मोहन और राम। छायावादियो मे आपके लिखने का ढग अभिनन्दनीय है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२६

श्री कुँवर सुरेशसिंह ज को लिखा गया पत्र

२४१

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (विजनौर)
श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी, सवत् १६८८

प्रिय कुंवर साहव, नमस्ते ।

मै प्रयाग से अभी कल लौटकर यहाँ घर पर आया हूँ । आपका २१-८-३१ का कृपा-पत्र यहाँ आने पर मिला ।

श्री सूरदासजी के पदो का सकलन जैसे-जैसे छपता जाय मेरे पास भेजते जाइए । सव छप जाने पर प्रस्तावना के रूप मे मै कुछ लिखूंगा । मं अभी परसो फिर वाहर काशी जा रहा हूँ । और सम्भवत एक महीने तक वही रहूँगा । वहाँ पहुँचने पर आपको पत्र लिखूंगा । पदो के छपे हुए फार्म वही भेजिएगा ।

श्री सूरदासजी का कोई अच्छा चित्र मेरे देखने में नही आया । नागरी प्रचारिणी सभा के चित्र-सग्रह में शायद हो ।

आशा है, आप सानन्द है ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३०

प० शालग्रामजी शास्त्री को लिखा गया पत्र

२४२

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
मार्गशीर्ष कृ० १३, १९८०

श्रीमत्सु कविराजेषु, सस्नेह सबहुमानचप्रणम्य निवेदनम् ।

आखिर आप बेचारे 'पन्थजी' पर 'हन्टर पाणि', हो ही पडे, बरस ही पडे । महाकवि भाम के नाम पर गरीब पन्थजी का काम तमाम कर ही डाला । 'माधुरी' के मधुर प्याले मे गरम मसाले और नमक की पुडिया घोल ही तो दी । भार्गवजी का सुरुचि-मचार व्रत भग कर ही डाला । उन्होने कई बार गर्व के साथ अपनी 'विशेष' विशेषताओं का उल्लेख करते हुए लिखा था कि 'माधुरी' समालोचना-मार्ग को सुरुचि-सम्पन्न बनावेगी । 'सतसई-सहार' की शैली की जहरीली समालोचनाओ का साहित्य की वाटिका मे एक दम बहिष्कार करके दम लेगी । श्रीमान् ने कोठे वाली को जीने पर नही, सहन मे ला पटका । बधाई है, कविराजजी की बहादुरी को ।

मै बहुत दिनो से बराबर बीमार हूँ । इससे बहुत कम लिखता-पढता हूँ । कल जो 'माधुरी' आई तो मै बुखार में पडा था । चि० काशीनाथ को 'माधुरी' देकर कहा कि कोई अच्छा-सा लेख पढकर सुनाओ । उसने पत्रिका के पन्ने पलटने शुरू किये, इधर मै बुखार की पीनक में आ गया । कुछ देर बाद देखा वह पढते-पढते हँस रहा है । पूछा, क्या बात है ? बोला, शास्त्रीजी का लेख पढ रहा हूँ । कैसा लिखा है ? बहुत ही अच्छा । रात को ज्वर का वेग कम होने पर मैने स्वय पढा । कमजोरी थी पर तबीयत नही मानी । एक बार सरसरी तौर पर सब पढ गया । फिर एक-एक कर पढा । एक बजे तक यही करता रहा । कर्णधार का अर्थ कान पकडने वाला (पजाबी महाविरे मे कान से पकडने वाला) पढकर बेअख्तियार हँसी आ गई । उपाधि का तौक लटकाना '५७ के गदर मे उपाधि का लूटना, काना कौआ आँख को अन्दर की ओर करके, यह तो सब ठीक है पर आँखो मे उँगली डालकर आँखें बन्द करके यह आख की जगह आँखे, शायद सम्पादको का सशोधन है । यह इन लोगो में प्रधान रोग है, लेख में कुछ-न-कुछ इसलाह ज़रूर दे डालते है ।

' पन्तजी तो साहित्य के तमाम दोषों से मुस्तसना है। इसकी जगह पन्थजी साहित्य पथ की दफा ३४ से मुस्तसना हैं। यानी वे रोक-टोक चाहे जहाँ मल-मूत्र विसर्जन कर सकते हैं। दफा ३४ में कानूनन उनका चालान नहीं हो सकता।' हो तो कैसा! खैर, यह तो एक लतीफा है। बात यह है पन्थजी सताये बहुत गये। पर पचराम से अधिक पन्थजी की मरम्मत हो गई। इसमें 'माधुरी' वालों को भी बेहद रंज हुआ होगा। कहाँ बेचारी दुधमुँही 'माधुरी' कहाँ यह 'बनानेवाली' 'जहरीली' समालोचना का गरम मसाला, आपने भी जादू कर दिखाया।

श्री शंकराचार्यजी को आठवीं सदी से ऊपर पहुँचाने में आपने अच्छी युक्ति दी। पर हर्षवर्धन तो केवल हिन्दू सम्राट् नहीं थे। उनका झुकाव तो बौद्धों की ओर अधिक था। ऐतिहासिक लोग तो ऐसा ही कहते हैं। हर्षवर्धन धर्म के मामले में गांधीजी थे।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३१

श्री व्रजमोहन वर्मा को लिखे गये पत्र

२४३

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग

६, ८, ३०

प्रिय वर्मा जी, नमस्कार।

आपका २६-८ का कृपा-पत्र मुझे शाम यहाँ मिला। मैं १२-८ से यहीं हूँ।

आप हास्य रस की कविताओं का संग्रह करना चाहते हैं। अच्छी बात है। हिन्दी में ऐसा एक संग्रह बहुत दिन पहले 'भड़ौआ संग्रह' के नाम से (नवलकिशोर प्रेस से) नकछेदी तिवारी ने प्रकाशित किया था। बाद को उसका नाम बदलकर और बढ़ाकर काशी से प्रकाशित किया गया था। उसमें हास्य रस की पुरानी कविताओं का अच्छा संग्रह है। काशी में किसी बुकसेलर से मिल जायगा। बा० हरिश्चन्द्र भारतेन्दु ने एक छोटी-सी पुस्तक 'परिहासिनी' नाम से निकाली थी। उसमें भी उसकी कुछ कविताएँ मार्के की हैं। यह पुस्तक खड्गविलास प्रेस बाँकीपुर में बहुत पहले छपी थी, शायद अब भी मिलती हो। पं० रुद्रदत्तजी ने समय-समय पर पद्य में 'पंच' लिखे थे। 'भारतमित्र' के पुराने फाइलों में मिल सकेंगे। इस वक्त तो इस बारे में यही दो-एक बातें याद आ रही हैं। हिन्दी में आजकल तो कोई भी हास्य रस की अच्छी कविता नहीं लिखता। जो लिखते भी हैं, वह बेचारे हास्य रस के सिर पर मिर्जापुरी लठिया का प्रहार करते हैं, जिसे देखकर हँसने की जगह रोना आता है। गद्य में अलबत्ता अन्नपूर्णानन्दजी अच्छा लिखने लगे हैं। 'विशाल भारत' सर्वप्रिय हो रहा है। इस बार में कोई भी सहृदय ऐसा नहीं मिला जिसने 'विशाल भारत' की प्रशंसा न की हो। पत्रों के प्रसंग में मैं बराबर उसकी चर्चा चलाता रहता हूँ। 'विशाल भारत' बन्द न होना चाहिए। उसका प्रचार बढ़ रहा है। वि० भा० के स्टैम्प सौ टैढ़ सौ आप घर के पते पर भेज दीजिए। आपने घर के पते पर जो भेजे थे, उनका इस्तैमाल शुरू हो गया है।

हि० सा० स० की दशा वास्तव में शोचनीय है। कलकत्ते में उसका अधिवेशन सफलता से न हुआ तो बधिया बिलकुल बैठ जायगी। सम्मेलन के लिए उद्योग होना चाहिए। चतुर्वेदीजी लगन से प्रोपैगण्डा करेंगे तो अधिवेशन सफल हो जायगा।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

२४४

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
१३, ५, ३१

प्रिय वर्माजी, नमस्ते।

कृपा-पत्र शाम को मिला। लेख पढा, पूर्णसिंह के आत्म-चरित ने लेख को पूरा कर दिया। आपकी यह समस्या-पूर्ति बढिया रही। धन्यवाद। श्री काशीनाथजी वाले लेख भी भेजिए।

चतुर्वेदीजी का कार्ड आपके पत्र के साथ ही मिला, जो उन्होंने इलाहाबाद स्टेशन से लिखा है। पर उसमें वह विवाह की तारीख लिखना भूल गये। यह समस्या भी आपके पत्र ही से हल हुई। आपने १३-५ लिखी है, जो आज ही है। मल्लपुर के पते पर उन्हें पत्र लिख रहा हूँ। मैं आजकल बहुत ही अस्वस्थ हूँ। गरमी में इतना लम्बा सफर करने की हिम्मत नहीं होती। इच्छा रहते भी सम्मेलन में नहीं आ सकूँगा। श्री वर्माजी की मृत्यु सचमुच बहुत ही दुःखदाई हुई। क्या किया जाय, ईश्वरेच्छा ! आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२४५

चाँदपुर
२३, ६, ३१

प्रियवर वर्माजी, नमस्कार।

आपका १२-६ का कृपा-पत्र कल मिला। पत्र पढकर प्रसन्नता हुई। सम्मेलन आदि के झंझट मे पत्रोत्तर का अवकाश नही मिला तो बात क्षन्तव्य ही है। स्वर्गीय सतीशचन्द्र रायजी का पत्र वास्तव में महत्त्वपूर्ण है। गणेशजी के चित्र की बडी सुन्दर समालोचना की है। यह पत्र तो छपना चाहिए था। उनका चित्र और चरित्र 'विशाल भारत' मे छपने आ रहा है। उसी प्रसग में इसे भी उद्धृत कर दीजिए। स्वर्गीय रायजी बडे ही सहृदय विद्वान् थे। उन्होंने सतसई की जैसी मार्मिक समालोचना एक पत्र में मुझे लिखी थी वैसी हिन्दी के किसी धुरन्धर विद्वान् ने भी नही लिखी।

सम्मेलन की कार्रवाई के किसी प्रकरण में मुन्शी अजमेरीजी का 'जिक्रे खैर' किसी पत्र में नही पढा। मालूम होता है उन्हें सम्मेलन में कुछ पढने का—अपने कस्तब दिखाने का मौका नही दिया गया। आप लोगो ने प्राइवेट तौर पर उनसे कुछ सुना ?

उनमे बंगाली भाषाओं को भी कुछ सुनवाया जाता तो कैसा होता। हिन्दी वालो को प्रोपैगंडा करना नही आता। किसी गण्य व्यक्ति का सार्वजनिक रूप मे उपयोग करना वह जानते ही नही। मुन्शी अजमेरीजी भिन्न भाषा भाषियो पर हिन्दी का सिक्का बैठाने के लिए बहुत ही मौजूं है। पर इधर किसी का ध्यान ही नही जाता। वह कुछ रसिक रईसो मे मनोरंजन का साधन बने हुए है। उन्हे रिझाकर अपना काम निकालते है।

'विजय' में आपके कोई-कोई चुटकुले खूब होते है। सम्मेलन की रिपोर्ट तो आपने ऐसी अच्छी लिखी कि कमाल कर दिया। मालूम नही रत्नाकरजी ने और दुलरेव ने भी उसे देखा या नही।

श्री श्याममुन्दरजी से और आजादजी से नमस्कार कहिए। श्यामसुन्दरजी की कविताओं का संग्रह छपा या नही।

जून का 'विशाल भारत' कल मिल गया। प्रारम्भ मे जो इतनी लम्बी कविता दी गई है क्या कोई लेख न था। हिन्दी प्रेस प्रयाग मे पं० हृषीकेश भट्टाचार्यजी का ब्लाक एक रीडर मे देने के लिए मेरे लिखने पर गया था वहाँ से वापस न हुआ तो तकाजा करके मंगा लीजिए, वर्ना वहाँ से न मिलेगा। सम्मेलन की चित्र-प्रदर्शनी में नाहरजी ने मेरा एक फोटो मँगवाया था वह अभी वापस नही आया। प्रदर्शनी के प्रबन्ध मे आपका भी हाथ था? वह फोटो वहा से माँगकर देखिए। यदि उससे अच्छा ब्लाक बन सके तो देखकर और पूछकर ब्लाक का इस्टीमेट लिखिए। बहुत से लोग फोटो के लिए लिखते रहते हैं। वह सबसे आखिरी फोटो है। उसका अच्छा साफ ब्लाक बन जायगा तो कुछ फोटो छपवा लूंगा। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

चतुर्वेदीजी के पत्र का उत्तर कल दे चुका हूँ। उसी मे श्री सतीशचन्द्र रायजी के सुपुत्र श्री भवानीचरण राय एम० ए० के भी दो पत्र भेजे है। भवानीचरणजी भी अपने पिताजी के समान ही सहृदय व्यक्ति प्रतीत होते है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२४४

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
१३, ५, ३१

प्रिय वर्माजी, नमस्ते।

कृपा-पत्र नाम को मिला। लेख पढ़ा, पूर्णसिंह के आत्म-चरित ने लेख को पूरा कर दिया। आपकी यह समस्या-पूर्ति बढ़िया रही। धन्यवाद। श्री कानीनाथजी वाले लेख भी भेजिए।

चतुर्वेदीजी का कार्ड आपके पत्र के साथ ही मिला, जो उन्होंने इलाहाबाद स्टेशन से लिखा है। पर उसमें वह विवाह की तारीख लिखना भूल गये। यह समस्या भी आपके पत्र ही से हल हुई। आपने १३-५ लिखी है, जो आज ही है। मलेपुर के पते पर उन्हें पत्र लिख रहा हूँ। मैं आजकल बहुत ही अस्वस्थ हूँ। गर्मी में इतना लम्बा सफर करने की हिम्मत नहीं होती। इच्छा रहते भी सम्मेलन में नहीं आ सकूँगा। श्री वर्माजी की मृत्यु सचमुच बहुत ही दुःखदाई हुई। क्या किया जाय, ईश्वरेच्छा! आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२४५

चाँदपुर
२३, ६, ३१

प्रियवर वर्माजी, नमस्कार।

आपका १२-६ का कृपा-पत्र कल मिला। पत्र पढकर प्रसन्नता हुई। सम्मेलन आदि के झंझट में पत्रोत्तर का अवकाश नही मिला तो बात क्षन्तव्य ही है। स्वर्गीय सतीशचन्द्र रायजी का पत्र वास्तव में महत्त्वपूर्ण है। गणेशजी के चित्र की बडी सुन्दर समालोचना की है। यह पत्र तो छपना चाहिए था। उनका चित्र और चरित्र 'विशाल भारत' में छपने आ रहा है। उसी प्रसग में इसे भी उद्धृत कर दीजिए। स्वर्गीय रायजी बडे ही सहृदय विद्वान् थे। उन्होने सतसई की जैसी मार्मिक समालोचना एक पत्र मे मुझे लिखी थी वैसी हिन्दी के किसी धुरन्धर विद्वान् ने भी नही लिखी।

सम्मेलन की कार्रवाई के किसी प्रकरण मे मुन्शी अजमेरीजी का 'जिक्रे खैर' किसी पत्र में नही पढा। मालूम होता है उन्हे सम्मेलन में कुछ पढने का—अपने करतब दिखाने का मौका नही दिया गया। आप लोगो ने प्राइवेट तौर पर उनसे कुछ सुना ?

उनसे बगाली भाषाओ को भी कुछ सुनवाया जाता तो कैसा होता। हिन्दी वालो को प्रोपैगडा करना नही आता। किसी गण व्यक्ति का सार्वजनिक रूप मे उपयोग करना वह जानते ही नही। मुन्शी अजमेरीजी भिन्न भाषा भाषियो पर हिन्दी का सिक्का बैठाने के लिए बहुत ही मौजूं है। पर इधर किसी का ध्यान ही नही जाता। वह कुछ रसिक रईसो में मनोरजन का साधन बने हुए है। उन्हे रिझाकर अपना काम निकालते है।

'विजय' में आपके कोई-कोई चुटकुले खूब होते है। सम्मेलन की रिपोर्ट तो आपने ऐसी अच्छी लिखी कि कमाल कर दिया। मालूम नही रत्नाकरजी ने और दुलर्गव ने भी उसे देखा या नही।

श्री श्याममुन्दरजी से और आजादजी से नमस्कार कहिए। श्यामसुन्दरजी की कविताओ का सग्रह छपा या नही।

जून का 'विशाल भारत' कल मिल गया। प्रारम्भ मे जो इतनी लम्बी कविता दी गई है क्या कोई लेख न था। हिन्दी प्रेस प्रयाग मे प० हृषीकेश भट्टाचार्यजी का ब्लाक एक रीडर मे देने के लिए मेरे लिखने पर गया था वहाँ से वापस न हुआ तो तकाजा करके मँगा लीजिए, वर्ना वहाँ से न मिलेगा। सम्मेलन की चित्र-प्रदर्शनी में नाहरजी ने मेरा एक फोटो मँगवाया था वह अभी वापस नही आया। प्रदर्शनी के प्रबन्ध में आपका भी हाथ था? वह फोटो वहाँ से माँगकर देखिए। यदि उससे अच्छा ब्लाक बन सके तो देखकर और पूछकर ब्लाक का इस्टीमेट लिखिए। बहुत से लोग फोटो के लिए लिखते रहते है। वह सबसे आखिरी फोटो है। उसका अच्छा साफ ब्लाक बन जायगा तो कुछ फोटो छपवा लूंगा। आशा है, आप प्रसन्न है।

चतुर्वेदीजी के पत्र का उत्तर कल दे चुका हूं। उसी में श्री सतीशचन्द्र रायजी के सुपुत्र श्री भवानीचरण राय एम० ए० के भी दो पत्र भेजे है। भवानीचरणजी भी अपने पिताजी के समान ही सहृदय व्यक्ति प्रतीत होते है।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

३२

श्री प० नाथूराम शङ्कर शर्मा 'शङ्कर' को लिखे गये पत्र[1]

२४६

आर्यसमाज-मन्दिर
अहार (बुलन्दशहर)
२-३-१४

माननीय कविजी महाराज, प्रणाम ।

आजकल 'बिहारी सतसई' की टीका मे लगा हूँ । टीका का कुछ नमूना भेजता हूँ । देखिए, कुछ है भी या निरी बावले की बड ही है । सचमुच टीका लिखना और खासकर कविता का बडा कठिन काम है । चाहता था कि इसे दो-तीन महीने मे समाप्त कर दूँगा, पर आज मालूम हुआ कि ऐसा नही हो सकेगा । अब तक एक दोहे रोज का हिसाब बैठा है । 'हिनोज दिल्ली दूरअस्त ।' बेगार टालने को तबियत नही चाहती, और पीसे को पीसना क्या ? पहले टीकाकारो की अपेक्षा कुछ भी नूतनता रहे, तब तो ठीक, नही तो टीका की आवश्यकता क्या? और जिस पर बीसियों टीकाएँ हो, उसमे कोई नई बात निकालना आसान काम नही । खैर जो कुछ हो । अब तो प्रारम्भ कर दिया है । सौ-दो सौ दोहो पर टीका हो ले तो लेकर आपकी सेवा मे आऊँगा और सलाह तथा इसलाह लूँगा । इस नमूने को देखकर राय दीजिये कि ऐसा ही चलता रहे, या उसमे कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है ।

इस टीका मे इतना फैलाव नही है परन्तु कुछ न कुछ नई बात निकालने की जरूर कोशिश की गई है । पुराने टीकाकारो से कही-कही छंट-छाड भी हो गई है । लल्लूलालजी से खासकर । 'कहत न देवर की कुवत' को ध्यान मे देखिए । कोई अण्डबण्ड बात तो नही लिख गया हूँ । किसी हिन्दी कवि ने भाभी की गणना स्वकीया

१. कविवर शङ्करजी का प० पद्मसिंह शर्मा से घनिष्ठ सम्बन्ध था । शर्माजी शङ्करजी को उत्कृष्ट कोटि का कवि मानते थे । दोनो मे पत्र-व्यवहार भी खूब होता था । शङ्करजी के पास शर्माजी की सैकडो चिट्ठियाँ थी, खेद है कि वे सुरक्षित न रह सकी । बडी कठिनाई से कुछ पत्र मिले है, जो यहाँ दिये जाते है । इस पुस्तक के कई फर्मे छप जाने पर ये चिट्ठियाँ उपलब्ध हुईं, अत उपयुक्त स्थान पर न दी जा सकी । —सम्पादक

नायिका में की हो तो कृपाकर अवश्य पता दीजिये । लल्लूलालजी ने भाभी के साथ देवर की दुर्व्यवहार-चेष्टा को 'स्वकीयाऽसुर विवाह-वर्णन' हैडिंग दिया है। क्या यह ठीक है, या उस पर मेरी जिरह ठीक है ? इसका फैसला निष्पक्ष होकर दीजिये। 'रसाभास' पर जो कुछ लिखा गया है, उसे भी देखिए।

हिन्दी मे नायिका-भेद और रस-वर्णन विषयक कौनसा ग्रन्थ सर्वोत्तम है।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

२४७

नायक नगला
१५-१-१७

श्रीयुत् परम माननीय कविजी महाराज, प्रणाम।

अभी मैं, लखनऊ मे, प० व्रजनारायण 'चकवस्त' से मिला था । पूछने लगे, हिन्दी में अच्छे कवि आजकल कौन है ? कांग्रेस मे गाने और सुनाने के लिए कुछ भजन-कविताएँ आदि ···· से मँगाई गई थी। जो एक कन्या-पाठशाला की लडकियो द्वारा प्रतिदिन सुनाई जाती थीं । उनके बारे मे चकवस्तजी कहने लगे कि मामूली तुकबन्दियाँ थी। उनमे कविता का चमत्कार नही था । आपका परिचय देने पर बोले—उनकी कविताओ का सग्रह छपा है ? 'अनुराग-रत्न' और 'शङ्कर-सरोज' नाम लिया गया तो कहा कि देखेंगे। फिर पूछा कि पुराने ढग की शृगारपरक कविता भी शङ्करजी ने की हैं ? मैंने कहा—वह उन्होने जला दी । यह सुनकर चकवस्त बडा अफसोस करने लगे। कहा—शकरजी से कहिए, ऐसा जुल्म न करे। वह बूढे हो गये तो क्या हुआ हम लोग तो उसके कद्रदान नौजवान है । मैंने कहा, वह तो जो होना था हो चुका। बचे-खुचे जो उस विषय के पद्य है, उनसे ही उस रग का पता चल जायगा। कहा कि ज़रूर भेजिए। मैंने वादा किया कि भेजूंगा।

इस बार यहाँ आकर मैंने 'शिवसिंह-सरोज' और 'काव्य-प्रभाकर' मे हिन्दी कविताओ का सग्रह बडे ध्यान से, समालोचनात्मक दृष्टि डालकर पढा और अभी पढ रहा हूँ। अपूर्व आनन्द आ रहा है। किताबो को रँग रहा हूँ। नोट कर रहा हूँ। जी मे आता है कि इन कविता-सग्रह की गुदडियो मे अच्छे-अच्छे लाल निकालकर एक नया कण्ठा बनाऊँ। खैर, यह तो एक सकल्प मात्र है, शायद कभी पूरा हो जाय। एक इरादा है जो बहुत दिनो से है, और इस बार और पक्का हो गया है, जिसे जल्दी पूरा करना चाहता हूँ। यदि आप कुछ कष्ट स्वीकार करके थोडी-सी सहायता दें तो

यह संकल्प अच्छी तरह पूरा हो जाय। और एक ऐसा काम हो जाय कि 'बायदो शायद।' इरादा यह है कि आपकी कविता पर एक विस्तृत समालोचनात्मक और तुलनात्मक निबन्ध लिखूं और ऐसा लिखूं कि उससे अच्छा और न लिख सकूं। बस, कलम तोड दूं और दवात फोड दूं। हाय, आज 'कलित कलेवर'[1] होता तो यह काम कैसा होता। यह बात जब याद आती है, और जब कोई कविता-ग्रन्थ देखता हूं तो जरूर याद आती है, और बार-बार रह-रहकर याद आती है तो कलेजे पर साँप लोट जाता है। सहृदयता का हृदय फटने लगता है।

खैर, जो होना था सो हो चुका, अब जो कुछ है उसी से काम लेना होगा। सबसे पहले आपकी सारी कविताओ का संग्रह किया जाय। किसी अंग की कमी न रह जाय। पुराने महारथियो से मुकाबला करना है। सब साधन ठीक होना चाहिए। इसमे प्रयत्न और सावधानता की बडी जरूरत है। मैंने तुलनात्मक विषयो पर नोट किये है। पुराने कवियो के जो अच्छे-अच्छे पद्य है, वे मुकाबले के लिए चुने है। आपकी पुरानी कविताएँ जो उस समय जमा की थी, उनकी नकल प० राधावल्लभजी (शङ्करजी के अत्यन्त प्रिय शिष्य जिन्हे वे पुत्रवत् मानते थे) के पास है। कृपाकर उन्हे आप एक बार देख जाइए। जहाँ सुधारना हो वहाँ सुधार दीजिए।

सो महाराज, कुछ समय के लिए सब चिन्ताएँ छोडकर इस कविता-संग्रह की ओर ध्यान दीजिए। प्रार्थना स्वीकार कीजिए। बहुत हो चुकी। यदि यह काम इस समय न हुआ तो फिर कभी न होगा। मैंने इस बार इस काम के लिए बहुत कुछ सोचा-विचारा है। कही आपकी उदासीनता से मेरा यह संकल्प शेखचिल्ली का मनसूबा होकर न रह जाय। दया कीजिए, ऐसा न होने दीजिए। इस रङ्क-रोदन पर करुणा के कान दीजिये। सुनी-अनसुनी न कर जाइए।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

---

१. शङ्करजी ने शृंगार रस की कविताओ का एक अति उत्कृष्ट नख-सिख लिखा था। इस पुस्तक का नाम था—'कलित कलेवर'। 'कलित कलेवर' की कविताओ को पढकर सहृदय पाठक मुग्ध हो जाते थे। यह पुस्तक प्रकाशित होने वाली थी कि शङ्करजी ने अपनी धुन मे उसे एक दिन रात को फाड फेंका। बोले—यह सब यौवन की उमंग है। बुढापे में ऐसी बाते प्रकाशित करना-कराना शोभनीय नही। उसी 'कलित कलेवर' के नष्ट हो जाने पर शर्माजी ने इस पत्र में इतना अफसोस जाहिर किया है।—सम्पादक।

२४८

नायक नगला
१७-१-१७

श्री परम माननीय कविजी महाराज, प्रणाम ।

साहित्याचार्य प० शालग्रामजी शास्त्री को मैने आपका किया अनुवाद 'हीजडा के जाये तेरी चेरी बन जाऊँगी' भेजा था । यह अनुवाद-पद्य, मूल श्लोक के साथ भेजा था । उस पर शास्त्रीजी ने मार्के की समालोचना की है । लिखा है कि अनुवाद इतना सुन्दर है कि उसकी प्रशसा के लिए शब्द नही मिलते। अनुवाद पद्य का उत्तरार्द्ध तो मूल मे भी अधिक चमत्कारक है, और स्वतन्त्र भावपूर्ण है। मूल श्लोक मे 'प्रमदा' पद अनुरूप नही है। अनुवाद मे 'अबला' बहुत सुधर है। इससे अनुवाद का यह अश 'चटपटानुवाद या स्वतन्त्रानुवाद है । 'हीजडा' का 'जाया' होता ही नही, इसलिए 'हीजडा के जाये' का पर्यवसन 'हरामी' मे होगा । ऐसी बात अन्य के मुख से नही कढ सकती । इससे कवि के हृदय मे उसी 'विरहिणी' का 'आवेश' हुआ दीखता है । इसलिए यह अश आवेशानुवाद है अथवा तन्मयानुवाद ।

विनीत
पद्मसिह शर्मा

२४६

ज्ञानमण्डल, काशी
७-५-११

श्री कविजी महाराज, प्रणाम ।

·· गाधीजी का गन्ध-प्रसारण सर्वत्र है । पर, उसे ग्रहण करने वाले विरले ही हैं । ईश्वर किसी की क्यो रक्षा करे, जब उसे कोई मानता ही नहीं । अकबर ने खूब कहा है—

"जब मैं कहता हूँ कि या अल्लाह मेरा हाल देख,
हुक्म होता है कि अपना नामए अयमाल देख ।"

इस 'मिथ्या' ससार मे 'सत्याग्रह' की कही चलती है !

"चीखे-चिल्लाए, कूदे, उछले, टहले,
हिर-फिर के वही रहे जहाँ थे पहले,
हालत तो वही है, बल्कि उससे बदतर,
यो मुँह से जो जिसके दिल में आए कहले ।"

—अकबर

यह सकल्प-अच्छी तरह पूरा हो जाय। और एक ऐसा काम हो जाय कि 'बायदो शायद।' इरादा यह है कि आपकी कविता पर एक विस्तृत समालोचनात्मक और तुलनात्मक निबन्ध लिखूँ और ऐसा लिखूँ कि उससे अच्छा और न लिख सकूँ। बस, कलम तोड दूँ और दवात फोड दूँ। हाय, आज 'कलित कलेवर'[1] होता तो यह काम कैसा होता। यह बात जब याद आती है, और जब कोई कविता-ग्रन्थ देखता हूँ तो जरूर याद आती है, और बार-बार रह-रहकर याद आती है तो कलेजे पर साँप लोट जाता है। सहृदयता का हृदय फटने लगता है।

खैर, जो होना था सो हो चुका, अब जो कुछ है उसी से काम लेना होगा। सबसे पहले आपकी सारी कविताओ का सग्रह किया जाय। किसी अग की कमी न रह जाय। पुराने महारथियो से मुकाबला करना है। सब साधन ठीक होना चाहिए। इसमे प्रयत्न और सावधानता की बडी जरूरत है। मैंने तुलनात्मक विषयो पर नोट किये है। पुराने कवियो के जो अच्छे-अच्छे पद्य है, वे मुकाबले के लिए चुने है। आपकी पुरानी कविताएँ जो उस समय जमा की थी, उनकी नकल प० राधावल्लभजी (शङ्करजी के अत्यन्त प्रिय शिष्य जिन्हे वे पुत्रवत् मानते थे) के पास है। कृपाकर उन्हे आप एक बार देख जाइए। जहाँ सुधारना हो वहाँ सुधार दीजिए।

सो महाराज, कुछ समय के लिए सब चिन्ताएँ छोडकर इस कविता-सग्रह की ओर ध्यान दीजिए। प्रार्थना स्वीकार कीजिए। बहुत हो चुकी। यदि यह काम इस समय न हुआ तो फिर कभी न होगा। मैंने इस बार इस काम के लिए बहुत कुछ सोचा-विचारा है। कही आपकी उदासीनता से मेरा यह सकल्प शेखचिल्ली का मनसूबा होकर न रह जाय। दया कीजिए, ऐसा न होने दीजिए। इस रङ्क-रोदन पर करुणा के कान दीजिये। सुनी-अनसुनी न कर जाइए।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

---

१. शङ्करजी ने शृगार रस की कविताओ का एक अति उत्कृष्ट नख-सिख लिखा था। इस पुस्तक का नाम था—'कलित कलेवर'। 'कलित कलेवर' की कविताओ को पढकर सहृदय पाठक मुग्ध हो जाते थे। यह पुस्तक प्रकाशित होने वाली थी कि शङ्करजी ने अपनी धुन मे उसे एक दिन रात को फाड फेंका। बोले—यह सब यौवन की उमग है। बुढापे मे ऐसी बाते प्रकाशित करना-कराना शोभनीय नही। उसी 'कलित कलेवर' के नष्ट हो जाने पर शर्माजी ने इस पत्र में इतना अफ़सोस ज़ाहिर किया है।—सम्पादक।

२४८

नायक नगला
१७-१-१७

श्री परम माननीय कविजी महाराज, प्रणाम ।

साहित्याचार्य प० शालग्रामजी शास्त्री को मैने आपका किया अनुवाद 'हीजडा के जाये तेरी चेरी बन जाऊँगी' भेजा था । यह अनुवाद-पद्य, मूल श्लोक के साथ भेजा था । उस पर शास्त्रीजी ने मार्के की समालोचना की है । लिखा है कि अनुवाद इतना सुन्दर है कि उसकी प्रशसा के लिए शब्द नही मिलते। अनुवाद पद्य का उत्तरार्द्ध तो मूल से भी अधिक चमत्कारक है, और स्वतन्त्र भावपूर्ण है। मूल श्लोक मे 'प्रमदा' पद अनुरूप नही है। अनुवाद मे 'अबला' बहुत सुधर है। इससे अनुवाद का यह अश 'चटपटानुवाद या स्वतन्त्रानुवाद है । 'हीजडा' का 'जाया' होता ही नही, इसलिए 'हीजडा के जाये' का पर्यवसन 'हरामी' में होगा। ऐसी बात अन्य के मुख से नही कढ सकती। इससे कवि के हृदय मे उसी 'विरहिणी' का 'आवेश' हुआ दीखता है । इसलिए यह अग आवेशानुवाद है अथवा तन्मयानुवाद ।

विनीत
पद्मसिह शर्मा

२४९

ज्ञानमण्डल, काशी
७-५-११

श्री कविजी महाराज, प्रणाम ।

·· गाधीजी का गन्ध-प्रसारण सर्वत्र है । पर, उसे ग्रहण करने वाले विरले ही हैं। ईश्वर किसी की क्यो रक्षा करे, जब उसे कोई मानता ही नही । अकबर ने खूब कहा है—

"जब मैं कहता हूँ कि या अल्लाह मेरा हाल देख,
हुक्म होता है कि अपना नामए अयमाल देख ।"

इस 'मिथ्या' ससार में 'सत्याग्रह' की कही चलती है !

"चीखे-चिल्लाए, कूदे, उछले, टहले,
हिर-फिर के वही रहे जहाँ थे पहले,
हालत तो वही है, बल्कि उससे बदतर,
यो मुँह से जो जिसके दिल में आए कहले ।"

—अकबर

नास्तिकता की हद हो गई, 'स्वभाग्य-निर्णय' का अधिकार भी 'मजबूर बन्दे' अपने ही हाथ में लेना चाहते हैं। मानो 'खुदावन्द' कोई चीज ही नहीं। आस्तिक आदमी को यही कहकर सब्र करना चाहिए—

"ये उम्र कब तक वफा करेगी,
जमाना कब तक जफा करेगा।
मुझे कयामत की है उमीदें,
जो कुछ करेगा खुदा करेगा।"

दास
पद्मसिंह शर्मा

२५०

नायक नगला
२१-१-२०

श्री कविजी के चरणों मे प्रणाम।

आपके दर्शनों के लिए मैं जितना उत्कण्ठित हूँ, बस मैं ही जानता हूँ। मेरे किन्हीं दुष्कर्मों का फल है कि दर्शन-लाभ से वंचित हूँ। कोशिश में हूँ कि बहुत शीघ्र उपस्थित हूँ।

आप 'पद्य-पारिजात' अवश्य-अवश्य लिखें। खास चीज होगी। बड़ी जरूरत है ऐसी पुस्तक की। पर कहीं आप लिखें भी। कविता की कद्र होती है—पर "होती है सच की कद्र" बेकद्रियों के बाद।' आप अपना काम कर छोड़िये। 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'। 'पद्य-पारिजात' प्रारम्भ कर दीजिये। उसके मन भावन परम पावन परिमल से रसिक भृंग कृतार्थ हो जायँगे। मस्त होकर गुंजारने लगेंगे।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२५१

दिल्ली
३०-१-२३

श्री कविजी महाराज, प्रणाम।

श्री रत्नाकरजी (श्री जगन्नाथदास रत्नाकर) आपसे मिलने के लिए वहाँ आना चाहते हैं। आने वाले आदित्यवार को या उससे एक-दो दिन बाद यहाँ से चलेंगे। मैं भी साथ आऊँगा। प० उदित मिश्र का भी इरादा है। चलते वक्त तार से सूचना देंगे। आशा है, आपके दर्शन करके कृतार्थ होने का अवसर सफल होगा।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

२५२

दिल्ली
१२-२-२३

श्री कविजी के चरणो मे प्रणाम।

रत्नाकरजी कल लखनऊ चले गये। आपको बार-बार स्मरण करते थे। प्रणाम कह गये हैं। आपसे मिलकर बहुत प्रभावित हुए। सतसई भाष्य का अन्तिम फर्मा छप गया, अब उसकी भूमिका एक फार्म के करीब बाकी है। आप अपनी 'तक़रीज' भेज देते तो अच्छा था। साथ ही छपा देता।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२५३

नायक नगला
१४-४-२०

माननीय कविजी महाराज, प्रणाम।

मण्डी वालों की (धनोरा मण्डी से निकलनेवाली 'मनोरमा' नामक मासिक पत्रिका) बदतमीज़ी और बेअदबी हद से बढ गई है। इसके मुँह लगना और भी बुरा है। फिर भी 'प्रतिभा' (मासिक पत्रिका) ने उसकी गोशमाली करना मुनासिब समझा। मैं समझता हूँ अब आगे यह मामला न बढेगा। 'समालोचक' की भी यही राय मालूम होती है। मैंने 'प्रतिभा'-सम्पादक को भी यही राय दी है। अपनी-अपनी राय है। किन्ही की राय है कि गधा लात मारे तो बचकर एक ओर खडा हो जाना चाहिए। उत्तर में लात मारना ठीक नहीं। दूसरे लोग भी है कि अगर लत्तू गधा लात चलावे तो लाठी मारकर उसका टगड तोड देना चाहिए। मेरी राय इन दोनो से अलग है। यानी लत्तू गधे को धँगना देकर छोडना चाहिए। इस सम्बन्ध में मै आपका मत भी जानना चाहता हूँ।

दास
पद्मसिंह शर्मा

२५४

C/O बेताब प्रिंटिंग वर्क्स,
चाह रहट, दिल्ली
१९-११-२२

पूज्य कविजी, प्रणाम।

……कल प० बनारसीदास चतुर्वेदी के अकस्मात् दर्शन करके बड़ा हर्ष हुआ। वे यहाँ माननीय श्रीनिवास शास्त्री से 'इण्टरव्यू' करने आये हैं। बम्बई से ही उनके साथ हैं, उन्हीं के पास डाक्टर मध्रू के यहाँ ठहरे हैं। बड़े ही सरल सज्जन हैं। उन्हें देखकर और उनकी ब्रजभाषा सुनकर स्वर्गीय सत्यनारायण की मूर्ति आँखों में फिर गई। अभी दो-एक दिन रहेंगे।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

२५५

C/O बेताब प्रिंटिंग वर्क्स
चाह रहट, दिल्ली
२१-१०-२२

श्रीमाननीय कविजी के चरणों में प्रणाम।

एक मासिक पत्र का प्रस्ताव मैं भी बेताबजी से कई दिनों से कर रहा था।[1] आपने उसकी पुष्टि करके औचित्य की मुहर लगाई। पत्र का नाम मैंने 'देहली-दीपक' सोचा है। 'देहली-दीपक' संस्कृत में एक प्रसिद्ध न्याय है। जो बात अन्तरंग और बहिरंग बातों पर समान रूप से प्रकाश डालती है, ऐसे प्रसंग पर इसका प्रयोग होता है, इस कारण साहित्य की अन्तरंग-बहिरंग दशा की समालोचना की सूचना इससे ध्वनित हो सकती है। इसमें श्लेष भी है। एक नाम समालोचक भी सूझा था। कविराज भी अच्छा है।

यह पत्र तभी निकल सकता है जब आप हरिशङ्करजी को यहाँ रहने की आज्ञा दे दें। सम्पादक हों हरिशङ्करजी और बेताबजी। आप और मैं सहायक हों। बस, काम चल जायगा। हरिशङ्करजी यहाँ आ जायँ तो डिक्लेरेशन के लिए दरख्वास्त दे दी जाय। उनके आने से और भी कई स्कीमें ठीक हो जायँ।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

---

१. सुप्रसिद्ध नाटककार प० नारायणप्रसाद बेताब ने देहली में अपना बेताब प्रिंटिंग प्रेस खोला था, उससे वे एक साहित्यिक मासिक पत्र प्रकाशित करना चाहते थे, उसी का इस पत्र में संकेत है।—सम्पादक।

२५६

C/O बेताब प्रिंटिग वर्क्स
चाह रहट, दिल्ली
१२-१-२३

श्री कविजी महाराज के चरणो मे प्रणाम ।

मु० सूर्यनारायण मिहर को 'विहारी-सतसई' पढकर हिन्दी कविता का शौक हुआ है। उसमे आपके दो-चार पद्य देखकर उन्हे आपकी अन्य कविता पढने की उत्कण्ठा है। इसलिए 'अनुराग-रत्न', 'वायस-विजय', 'गर्भरण्डा-रहस्य', 'शङ्कर-सरोज' आदि सब कविता-पुस्तके उनके लिए भेज दीजिए। मै स्वय उन्हे भेट कर दूंगा।

विनीत
पद्मसिह शर्मा

२५७

पूज्यपाद श्री कविजी के चरणो मे प्रणाम ।

आपकी कविताओ का सुन्दर, सचित्र वढिया सस्करण मुज़फ्फरपुर से एक सहृदय सज्जन निकालना चाहते हैं, बहुत आग्रह से कहा है, वह आपके दर्शनार्थ मेरे साथ हरदुआगज आना चाहते है। कविताओ का सग्रह अवश्य छप जाना चाहिए। उसका सम्पादन मै करूँगा। हिन्दी के नये कवियो की शिक्षा के लिए आप एक पुस्तक लिख दे तो अच्छा है। एक काम की चीज़ होगी।

आप आज्ञा करते है कि 'भारतोदय'-सम्पादन कीजिये। पर 'भारतोदय' कहाँ है? किसका सम्पादन करूँ? वुरे की जान का या लम्बी दाढी का। 'भारतोदय' गया और हमेशा के लिए गया। गुरुडम के ग्राह के मुंह मे खाक पडे। गुरुडम के दीर्घ-काय देवता पर विजली गिरे। 'तहे दिल से हम कोसते है मगर कि गुरुडम के राक्षस पै विजली गिरे।'

दास
पद्मसिह शर्मा

२५८

नायक नगला
चैत्र कृ० ३०, १८८१

श्री कविजी के चरणो में प्रणाम।

प० वनारसीदास चतुर्वेदी को मैंने लिखा था कि हरदुआगज कव आइएगा। उनका उत्तर आया है कि ठीक नही कह सकता, पर आऊँगा ज़रूर। गाधी-आश्रम से

उन्होंने इस्तीफा दे दिया है। अब इधर ही कहीं आकर बैठेंगे। मैं उन्हें हरदुआगंज यथासम्भव शीघ्र बुलाने की चेष्टा कर रहा हूँ। पर, अबकी बार वहाँ आकर हम लोग जीवनी लिखाने के लिए आपको मजबूर करेंगे, आप टाल न सकेंगे।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२५६

आगरा
अनन्त चतुर्दशी, १६८२

श्री परम माननीय कविजी के चरणों में प्रणाम।

प० बनारसीदास चतुर्वेदी को साथ लेकर हम लोग शीघ्र चार-पाँच दिन बाद हरदुआगंज आने वाले हैं। पुस्तक छप चुकी है। सिर्फ 'सम्मतिसार' का फार्म बाकी है। सम्मतियों में आपकी वह पद्यात्मक सम्मति भी देनी है, जो दूसरे भाग में (बिहारी सतसई भाष्य के) रत्नाकरजी की सम्मति के साथ छपी थी। सम्मति में एक संशोधन कराना उचित प्रतीत हुआ—

"पाकर इष्टादर्श भाष्य को, वाचकवृन्द प्रसन्न हुआ,
माना गौरव 'रत्नाकर' ने, रञ्जन-रत्न प्रदान किया।

इस पद्य में 'रत्नाकर' की जगह कोई और पाठ रखिए, क्योंकि इस बार अन्य अनेक विद्वानों की सम्मतियाँ भी दी जा रही हैं। इस कारण केवल 'रत्नाकर' का उल्लेख उचित न होगा। अन्य सम्मतिदाताओं को शायद खटके। अतः 'रत्नाकर' की जगह कोई और उचित पाठ बनाइए। इसके अतिरिक्त एकाध पद नया बन जाय जो भूमिका-भाग—तुलनात्मक समालोचना पर—सम्मति प्रकट करने वाला हो तो और भी अच्छा है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२६०

नायक नगला
१-१२-२५

श्री पूज्य कविजी के चरणों में प्रणाम।

२५-११-२५ का कृपा-कार्ड पाकर कृतार्थ हुआ। अवकाश मिलते ही सेवा में उपस्थित हूँगा। यह मैं अपने दुरदृष्ट का परिणाम समझता हूँ कि इच्छा रहते भी

आपके चरणो मे, कुछ दिन रहने का अवसर नही मिल रहा। अपने जीवन के उन घण्टो को मै पुण्य पर्व का समय समझता हूँ जो आपके सत्सग मे बीते। मनुष्य जो चाहता है, वह नही होता, यही तो बन्धन है।

बराबर प्रार्थना करते-करते सकोच होता है, पर प्रार्थना करनी ही पडती है कि अपनी कविताओ का सग्रह करा डालिए। प्रिय सतीशकर(शकरजी के कनिष्ठ पुत्र) ही कर डाले। बडा जरूरी काम है। पर इस ओर कोई ध्यान नही दे रहा। आप तो 'लोकानुग्रहकाक्षया शकर-सूक्ति-सग्रह' की चिन्ता कीजिए। यही वह काम है जो आपके जीवन मे जरूरी और करने योग्य है। बाकी सब कुछ होता रहेगा।

विनीत सेवक
पद्मसिह शर्मा

२६१

काव्य-कुटीर, नायक नगला
श्रावण वदि ६, १९८३

पूज्य श्री कविजी के चरणो मे प्रणाम।

२, ६, ७ का कृपा-पत्र पाकर अनुगृहीत हुआ। आपके दर्शनो की उत्कण्ठा सदा ही बनी रहती है। जब अदृष्ट अनुकूल होता है, तभी मनोरथ सफल होता है।

आपकी मूर्ति हृदय मे प्रतिष्ठित है, भूलना कैसे ? आपको भूलना अपने को भूलना है, जो हो नही सकता। आपको तो महाराज ससार भी नही भूलेगा। आप तो 'यादगारे ज़माना' है और अमर है। उन रससिद्ध कवियो में है जिनके विषय में योगिराज भर्तृहरि ने कहा है—

"जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धा कवीश्वरा
नास्ति येषा यश काये जरा मरणज भयम्।"

एक उर्दू कवि ने सिद्ध पुरुषो की ओर से क्या कहा है—

"मौत यह मेरी नही, मेरी अजल की मौत है
क्यो डरूँ इससे कि मरकर फिर नही मरना मुझे।"

दास
पद्मसिह शर्मा

२६२

काव्य-कुटीर, नायक नगला
अ० सु० ११, १९८३

श्री कविजी महाराज के चरणो मे साष्टाग प्रणाम ।

'आपकी सेवा मे पहुँचना और आपके दर्शन करना मै अपने जीवन का फल और पुण्यो का उदय समझता हूँ । दुदैव ही इसमे बाधक होता है, जिस पर बस नही चलता ।'[1]

ससार का इतिहास साक्षी है कि सत्पुरुषो पर सदा विपत्तियाँ आती है । यही कारण आपके दु खित रहने का भी है । फिर आप तो कवि है । अकबर ने बिल्कुल ठीक और पते की कही है—

"शिकम होता तो मै इस अहद मे फूला-फला होता,
सरापा दिल बना हूँ इस सबब से कुश्तए गम हूँ ।"

आप इस उक्ति का पूरा उदाहरण है । अपने स्वरूप का ध्यान कीजिए और धैर्य धारण कीजिए । आप महापुरुष है, देवता है । अधीर होना आपको शोभा नही देता, आप अमर है । आपकी कविता आपका यश फैलाने को पर्याप्त है । मुझे अपना अनन्य भक्त समझकर दया-दृष्टि रखिए ।

कृपापात्र
पद्मसिह शर्मा

२६३

ज्वालापुर महाविद्यालय
आषाढ़ कृ० १०, ८४

पूज्यपाद श्री कविजी के चरणो में प्रणाम ।

ऐसा कोई दिन ही जाता होगा कि आपकी याद न आती हो । ध्यान द्वारा आपका दर्शन न हो जाता हो । कुम्भ के दिनो मे तो प्रतिदिन आपका पुण्य कीर्तन होता था । स्वामी नृसिहदेवजी 'शकर-सूक्तियो' का पारायण कलकण्ठ से करते थे और श्रोता गद्गद् होते थे । श्री मालवीयजी महाराज (महामना प० मदनमोहन मालवीय) को

१. नौ महीनें में दो पुत्रो की मृत्यु के कारण शकरजी के चित्त का उद्विग्न और दुखी होना स्वाभाविक था, उस समय शर्माजी ने यह पत्र लिखा था । वे समझाने-बुझाने और सहानुभूति के लिए कई बार कविजी के पास उनकी जन्म-भूमि हरदुआगज आए भी थे ।—सम्पादक ।

भी कविता सुनवाई थी। बहुत प्रसन्न हुए थे। उडिया स्वामी एक बहुत पहुँचे हुए सहृदय विद्वान् साधु है। उन्हे भी 'अनुराग रत्न' की कविता सुनवाई थी। वह आपकी कविता के प्रेमी है।

स्वर्गीय सत्यनारायणजी की जीवनी आपने पढली। बस लेखक का श्रम सफल हो गया। जीवनी चतुर्वेदीजी (प० बनारसीदास चतुर्वेदी) ने बडे परिश्रम से लिखी है। आपकी जीवनी तो आपके जीवन मे ही लिखी जानी चाहिए। पर हम लोगो के प्रमाद से विलम्ब हो रहा है। ईश्वर से प्रार्थना है कि हम लोगो के सिर पर आपका साया अभी बहुत दिनो बना रहे।

सेवक
पद्मसिह शर्मा

२६४

कव्य-कुटीर, नायक नगला,
श्री स्वा० श्रद्धानन्दजी का
जलाञ्जलि-दिवस
पौप सुदि ६, रविवार

श्री. चरणेषु प्रणम्य निवेदयति।

श्री स्वा० श्रद्धानन्दजी शहीद हो गये। मीर का शेर याद आता है—

मर्गे-मजनूं से अक्ल गुम है मीर—
क्या दिवाने ने मौत पाई है !

श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी भाग्यशाली थे। अपने उद्देश्य में सोलह आना सफल हो गये। शुद्धि-आन्दोलन के बुझते हुए कुण्ड को अपनी पूर्णाहुति से प्रज्वलित कर गये। विपरीत फल देखकर दुष्ट आततायी अपनी काली करतूत पर पछताते होगे। इस घटना पर कोई कविता आप अवश्य लिखें। कविता कलम-तोड होनी चाहिए।

इण्डियन प्रेस से 'पल्लव' नाम की पुस्तक निकली है। उसकी भूमिका देखिए। प्राचीन कवियो की बडी छीछालेदर की है। धृष्टता की पराकाष्ठा है।

भवदीय
पद्मसिह शर्मा

२६५

काव्य-कुटीर, नायक नगला
मा० कृ० ६, ८४

श्री कविजी के चरणो में प्रणाम।

... तुलसीदासजी की कवितावली के एक सवैये मे 'मात भरी सहरी सकल

मुत वारे वारे' आया है। वहाँ 'सहरी' का क्या अर्थ है। दीनजी ने 'पत्तल-भरी मछली' अर्थ किया है। पर यह अर्थ वैष्णव तुलसीदासजी को अभीष्ट नही हो सकता। यह शब्द कही और भी आया है। इस पर विवाद चल रहा है। आप इसका क्या अर्थ करते है? कृपाकर शीघ्र उत्तर दीजिए।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

२६६

नायक नगला
१५, ४, २३

श्री कविजी के चरणो मे प्रणाम।

सम्मेलन से लौटकर आपका कृपा-पत्र पढा। यह जो कुछ हुआ 'शकर' भगवान् की कृपा से हुआ। इसकी आशा न थी। मै इस योग्य तो न था। मुकाबले मे बडे-बडे महारथी थे। यहाँ इसकी खबर भी न थी। परवा भी न थी कि क्या हो रहा है। पाठकजी, गौडजी, वियोगी हरिजी की कद्रदानी समझिए। न मालूम किस बात पर रीझ गये। द्विवेदीजी, 'भारत-भारती' के लिए जोर लगा रहे थे और एक दूसरे सज्जन 'प्रिय-प्रवास' के पक्ष मे थे। वाजपेयीजी ('स्वतत्र'-सम्पादक) अलवत्ता 'सतसई' के पक्ष मे थे। दुबारा निर्णायक-समिति पाठकजी आदि की वनी। वह 'सतसई' के लिए सहमत हुई।[1]

दास
पदमसिह शर्मा

२६७

गुरुकुल, काँगडी
२६-५-२८

परम पूज्य कविजी महाराज के चरणों में प्रणाम।

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के सभापति का पाश मेरे गले मे पड ही गया। देह-धरे का दण्ड भुगतना ही पडेगा। गले पडा ढोल वजाना ही पडेगा। आशीर्वाद दीजिए, इस सकट से सही सलामत निकल आऊँ, जान बच जाय।

---

१ आचार्य श्री पद्मसिह शर्मा द्वारा लिखी 'विहारी सतसई' की भूमिका' पर सर्व-प्रथम 'श्री मगलाप्रसाद-पारितोपिक' प्रदान किया गया था, उसी का उक्त पत्र में उल्लेख है। —सम्पादक

कवि वियोगी हरिजी की 'वीर सतसई' वास्तव मे अच्छी है। निर्णायकों मे मै भी था। आपके पास शीघ्र ही उसकी कापी भिजवाऊँगा। वियोगी हरिजी आपको बहुत मानते है। उन्होने मुझे पहले एक बार लिखा था कि 'वीर सतसई' का कुछ अंश शंकरजी को सुनाकर सम्मति लीजिये। मै उधर न आ सका, न आपको सुना सका। अब भिजवाऊँगा।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

एक खास बात—

पर'''के लेख के विरुद्ध जो मुकदमा चल रहा है, उसमे एक सवाल बेढंगे तौर से आ पडा है। लेख मे लिखा है कि देवियो पर हाथ डालने से जैसे लंका और हस्तिनापुर का नाश हो गया, ऐसे ही'''का नाश हो जायगा। लेख का तात्पर्य स्त्रियो पर हाथ डालने से उनको पीटकर अपमानित करने से था। परन्तु वादी का कहना है कि इस वाक्य के द्वारा मुझ पर औरतो के साथ बदचलनी का इलजाम लगाया गया है। इसलिए आप किसी हिन्दी या उर्दू ग्रन्थ से कोई प्रमाण ऐसा दीजिये जिससे स्त्रियो पर हाथ डालने का अभिप्राय उनको पीटना—अपमानित करना—होता हो। ऐसा प्रमाण मिल सके तो जरूर तलाश कीजिए।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२६८

गुरुकुल, काँगडी
७-६-२८

श्री पूज्य कविजी के चरणो मे साष्टांग प्रणाम।

मेरा तो रोम-रोम आपकी कविता का अनन्य भक्त है। मै तो आपको न सिर्फ वर्त्तमान् हिन्दी कवियो में ही सर्वश्रेष्ठ महाकवि मानता हूँ, बल्कि अनेक अंशो मे प्राचीन कवियो मे भी अच्छा समझता हूँ। मैने अपने इस हार्दिक भाव को कितनी ही बार प्रकट किया है। आपने कुछ दिनो मे जो 'भणन्त' के ढंग की कविता लिखनी शुरू की है, उसे लोग पसन्द नही करते। पसन्द न करने वालो में आपके भक्त ही अधिक है। 'भणन्त' को लेकर जब कोई आक्षेप करता है तो हमे बुरा मालूम होता

है। 'भणन्त' में कविता की दृष्टि से कोई दोष है, यह अभिप्राय नहीं। आपकी लेखनी से जो कुछ भी निकलता है वह साँचे में ढला होता है, इससे तो किसी को इनकार ही नहीं। पर इस रंग ढंग को लोग पसन्द नहीं करते। भावक भक्त आपसे बहुत ऊँची आशा रखते हैं। जो लोकमत है वही मैंने निवेदन किया।[1]

क्षमा-प्रार्थी
पद्मसिंह शर्मा

---

१ स्व० शङ्करजी ने कुछ कविताएँ ऐसी लिखी थीं जिनमे 'भड़ौए' या 'भणन्त' की भाषा में स्पष्ट और तीखी आलोचनाएँ थीं, साहित्यिक व्यंग्य नहीं थे, इसी ओर शर्माजी का संकेत है।—सम्पादक

परिशिष्ट

१

आचार्य पं० पद्मसिंह शर्मा

पण्डित पद्मसिंह शर्मा का विद्वत्तापूर्ण साहित्य आज भी सब लोग बड़ी रुचि से पढ़ते हैं और आगे भी इसी प्रकार पढ़ा जाता रहेगा। हमें दुःख तो इस बात का है कि आधुनिक हिन्दी के इतिहास-लेखकों ने उनके साथ प्रायः न्याय नहीं किया। एक इतिहास-लेखक ने तो यह फतवा दिया है, "उनकी भाषा उछलती-कूदती, महफिली ढंग की होती थी। वे साहित्य के पारखी न थे। समालोचक तो वे थे ही नहीं।" हमें आश्चर्य तो यह है कि शर्माजी के सम्बन्ध में ऐसी ऊल-जलूल सम्मति देने वाले वे इतिहास-लेखक हैं जिन्होंने कदाचित् उनकी लिखी एक भी पुस्तक अच्छी तरह नहीं पढ़ी। हमने स्वयं एक विद्वान् इतिहास-लेखक से जानना चाहा, 'महाशय आपने शर्माजी के सम्बन्ध में जो पंक्तियाँ लिखी हैं, उनका आधार क्या है ?' वे बोले, "पुस्तक तो कोई नहीं पढ़ी। अमुक इतिहास-लेखक ने उनके सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, वही हमने दस-पाँच शब्द अदल बदलकर लिख दिया है।" आप कोई हिन्दी-साहित्य-इतिहास-पुस्तक उठा लीजिये। सब में शर्माजी के सम्बन्ध में प्रायः एक-सी ही सम्मति लिखी पायेंगे। कुछ शब्दों का हेर-फेर अवश्य होगा। यह है हमारे हिन्दी-साहित्य के इतिहास की लेखन-प्रणाली और ऐसी है हमारी राष्ट्र-भाषा की अनुसंधान-शैली ! हमने एक बार हिन्दी के एम० ए० के कुछ विद्यार्थियों के सामने श्री पद्मसिंह शर्माजी की विद्वत्ता और लेखन-शैली की प्रशंसा कर उनके विशाल व्यक्तित्व का वर्णन किया। विद्यार्थी बड़े प्रभावित हुए। परन्तु एक सप्ताह भी न हुआ था कि उन्होंने दो-तीन इतिहास हमारे सामने रखते हुए कहा, "पण्डितजी, आपने तो शर्माजी की उस दिन बड़ी प्रशंसा की थी, परन्तु इन पुस्तकों में तो उनकी भाषा को 'उछलती-कूदती' और 'महफिली ढंग की' बताया गया है। उन्हें साहित्य का आलोचक और पारखी भी नहीं माना।" हमने वे स्थल पढ़े तो लेखकों की बुद्धि पर क्रोध आया और तरस भी। तरस इसलिए कि दस-बीस दिनों में कोर्स के लिए किताबें लिखकर अपना पारिश्रमिक सीधा करने वालों में और आशा भी क्या की जा सकती है। एक दिन तो हमारे आश्चर्य और दुःख की सीमा ही न रही जब एक प्रसिद्ध कालेज के एक

हिन्दी-अध्यापक ने श्री प० पद्मसिंह शर्मा विषयक अपनी अनभिज्ञता बताई और बहुत समझाने-बुझाने और याद दिलाने पर भी वे इतना ही कह सके " हाँ, हाँ, पद्मसिंहजी थे। वे उर्दू-वुर्दू भी जानते थे।" यह है हमारे अध्यापकों की मनोवृत्ति और अध्ययन-शीलता, जो साहित्य महारथी प० पद्मसिंह शर्मा तक को नहीं पहचानने देती, उस संस्कृत, हिन्दी, फारसी और उर्दू के दिग्गज विद्वान् को मामूली उर्दू-वुर्दू जानने वाला कहकर सन्तोष करती है!

प० पद्मसिंह शर्मा संस्कृत-साहित्य के धुरन्धर विद्वान्, उर्दू-फारसी के ऊँचे आलिम और हिन्दी के नवयुग-निर्माता थे। उनकी संस्कृतज्ञता के सम्बन्ध में काशी के महान् पण्डितों से पूछिए। फारसी-उर्दू की जानकारी का हाल 'हाली', 'अकबर', 'चकबस्त' और 'इकबाल' बतायेंगे, जो उनकी इल्मियत से अवाक् रह गये थे। उर्दू-साहित्य को नये साँचे में ढालने वाले प्रोफेसर मोहम्मद हुसेन आजाद भी उनकी लियाकत के कायल थे। शर्माजी अपनी एक अद्भुत लेखन-शैली लेकर अवतरित हुए थे, जो उन्हीं के साथ चली गई। 'बिहारी सतसई' में प्राणों का सचार करने वाले शर्माजी ही थे। उन्होंने ही सबसे प्रथम हिन्दी में तुलनात्मक आलोचना-पद्धति की नींव डाली। एक बार बड़ा मज़ा रहा। शर्माजी दिल्ली में उर्दू के महान् साहित्यकार और कवि श्री सूरजनरायन 'महर' से मिलने गये। परिचय के दौरान में परिचय कराने वाले मित्र ने यह भी कह दिया कि शर्माजी ने 'बिहारी-सतसई' पर बड़ा सुन्दर भाष्य लिखा है। 'बिहारी-सतसई' का नाम सुनते ही 'महर' साहब आवेश में आकर बोले, "उस गन्दी, भद्दी और फुहश किताब पर जो छूने के काबिल भी नहीं है।" शर्माजी ने सतसई के सम्बन्ध में ये बेजोड़ वाक्य बड़े धैर्य से सुने और सहन किये। फिर साधारण बातचीत होती रही। उर्दू साहित्य का ज़िक्र छिड़ा।

सत्यनारायण के मन्दिर में, जहाँ शर्माजी ठहरे हुए थे और सतसई-भाष्य का द्वितीय संस्करण छप रहे थे, आकर शर्माजी ने अपनी लिखी बिहारी-सतसई की भूमिका 'महर' साहब के पास भेजी और उस पर लिख दिया, "अगर इस किताब के कुछ सफे जनाब पढ़ेंगे तो ममनून हूँगा।" 'महर' साहब के पास भूमिका-भाग पहुँच गया। एक दिन आश्चर्य की सीमा न रही जब वे अपनी लकुटी टेकते-टेकते सत्यनारायण के मन्दिर में पहुँचे और बड़ी विनम्रता से बोले—"मैं आपकी सारी किताब एक साँस में पढ़ गया। मैंने उस दिन 'सतसई' को गन्दी और 'फुहश' बताया था, आज अपनी उस बेअदबी, गुस्ताखी और बदलियाकती के लिए माफी माँगने आया हूँ। मुझे अफसोस है, अब तक मैंने आपकी यह पुस्तक नहीं पढ़ी थी। मैं तो आपकी इल्मियत और इतनी बढ़िया स्टाइल के लिए दाद और मुबारकबाद देने आया हूँ।"

'महर' साहब उस दिन से शर्माजी के अनन्य भक्त बन गये और जिस सतसई को उन्होंने फुहश और गन्दी किताब बताया था, उसी पर बड़ी सुन्दर सम्मति लिखी, जो द्वितीय संस्करण में छपी है।

चकबस्त साहब और महाकवि अकबर ने एक बार पण्डितजी से कहा था 'आप-जैसा इल्मदोस्त हमें दूसरा नहीं मिला।' हाली साहब की भी यही राय थी। हिन्दुस्तानी एकेडेमी में जब शर्माजी ने अपना निबन्ध पढ़ा तब उस मीटिंग के सभापति जस्टिस सुलेमान ने शर्माजी की लेखन-शैली और विद्वत्ता की भरपेट दाद दी थी। आचार्य द्विवेदीजी शर्माजी की लेखनी के बड़े प्रशंसक थे। हिन्दी की ही भाँति शर्माजी की संस्कृत और उर्दू लिखने की भी बड़ी प्रौढ़ और आकर्षक शैली थी। 'जमाना' के सम्पादक मुंशी दयानारायण निगम, मुंशी प्रेमचन्द, ख्वाजा हसन निजामी आदि शर्माजी की उर्दू लेखन-शैली के बड़े भारी मद्दाह थे। आपकी संस्कृत लेखन-शैली भी बड़ी प्रभावपूर्ण और अद्भुत थी। एक दार्शनिक ग्रन्थ पर शर्माजी की लिखी एक संस्कृत भूमिका को पढ़कर स्वयं उनके संस्कृत-गुरु महान् विद्वान् श्री पं० काशीनाथ शास्त्री ने कहा था, 'ऐसी सुन्दर और सरल संस्कृत लिखना पद्मसिंह का ही काम है। मैं स्वयं उस शैली पर नहीं लिख सकता।' पं० पद्मसिंह शर्मा काव्य-साहित्य के साधारण विद्वान् न थे। संस्कृत, फारसी, हिन्दी और उर्दू का ऐसा कोई काव्य-ग्रन्थ न था जिसका उन्होंने अध्ययन न किया था और जिसे वे दूसरों को न पढ़ा सकते थे। पण्डितजी से बड़े-बड़े आचार्य और विद्वान् साहित्य पढ़ने जाते थे। उनका पुस्तकालय विविध भाषाओं के ग्रन्थों का भण्डार है। वे रात-रात-भर पढ़ते और लिखते थे। चिट्ठियाँ लिखने में तो वे हिन्दी में अद्वितीय थे, इस दिशा में उन तक कोई नहीं पहुँच सका। वे नवयुवक लेखकों और कवियों को प्रोत्साहन भी दिल खोलकर देते थे। किसी की कोई रचना पसन्द आई और तुरन्त पत्र लिखकर उसे दाद दी, फिर वह रचना किसी छोटे-से-छोटे विद्यार्थी की ही क्यों न हो! वे ऐसे लेखकों और कवियों को दाद देने प्रायः उनके घर पर भी पहुँचते थे। कहाँ तक लिखें पं० पद्मसिंहजी असली अर्थ में साहित्याचार्य और वास्तव में साहित्य-महारथी थे। वे नये युग के प्रवर्त्तक और अभिनव हिन्दी के निर्माताओं में से थे। उनके एक-एक गुण पर पृथक्-पृथक् निबन्ध लिखने की आवश्यकता है। जिस महान् साहित्यकार का इतना अधिक महत्त्व है, उसके सम्बन्ध में हिन्दी के इतिहासकार कितने कंजूस और संकीर्ण हैं, यह बात उनकी लिखी सम्मतियों से प्रकट है। क्या यह पक्षपातपूर्ण प्रवृत्ति हिन्दी को कभी ऊँचा उठने देगी? और क्या यह नकलची इतिहास-लेखक सचमुच इतिहासकार कहे जाने योग्य हैं?

आचार्य श्री प० पद्मसिंह शर्मा के सम्बन्ध में जो कुछ ऊपर लिखा गया है, उसका उद्देश्य उनकी प्रशंसा करना नहीं है। कवि या साहित्यकार की प्रशंसा तो उसकी रचना से ही होती है। फिर स्वर्गीय आत्माओं के लिए प्रशंसा या अप्रशंसा कोई अर्थ नहीं रखती। इन पंक्तियों के लिखने से हमारा प्रयोजन यह है कि जिन साहित्यकारों की सहृदय काव्य-मर्मज्ञों और विद्वानों में इतनी श्रद्धा और प्रतिष्ठा है, उनके सम्बन्ध में हमारे इतिहास-लेखक कितने संकीर्ण हैं। इतिहासकार का कर्त्तव्य महान् है। उसे न्याय-मूर्ति की तरह सत्य घटना का ही उल्लेख करना चाहिए, परन्तु यहाँ तो अजीब हालत है। अपने मित्र, भक्त, श्रद्धेय, शिष्य और साथियों की तो ये नामधारी इतिहास-लेखक प्रशंसा करते-करते नहीं अघाते, परन्तु जो प्रशंसा के सचमुच पात्र हैं, उनकी जान-बूझकर उपेक्षा की जाती है या बेढंगे तौर से उनका उल्लेख होता है।

असल में बात यह है कि प्रारम्भ में जिन दो-तीन विद्वानों ने आधुनिक हिन्दी-साहित्य की रूप-रेखा लिखी उन्होंने बड़ा श्लाघ्य काम किया। परन्तु यह काम बहुत जल्दी में हुआ। फिर उस पर विचार या अनुसन्धान करने के लिए सम्भवतः उन लेखक महानुभावों को समय ही न मिला। नकलची इतिहास-लेखकों ने उन्हीं के आधार पर बिना अधिक छान-बीन किये मक्खी-पर-मक्खी मारना शुरू कर दिया। अपने जान-पहचान के जो इष्ट-मित्र या भक्त-शिष्य मिले उनको भी टाँक दिया और पन्द्रह-बीस दिन में एक वृहद् इतिहास-ग्रन्थ तैयार करके बेचारे प्रकाशक के मत्थे मढ़ दिया। कुछ टके मिल गये और वे इतिहास-लेखक की श्रेणी में भी जा बैठे। चुपड़ी और दो-दो। ऐसे और भी साहित्यकार हैं जिनकी इतिहास-लेखकों ने उपेक्षा और अवहेलना की है। हम इसे इतिहासकारों का अन्याय कहते हैं। हिन्दी में आधुनिक युग के एक सर्वांग सम्पन्न इतिहास की आवश्यकता है, जिसमें साहित्यकारों का पूरा स्वरूप दिखाया जाय और अच्छे-बुरे या साधारण होने का निर्णय स्वयं पाठकों पर छोड़ दिया जाय। रीडरबाजी के नाम पर इतिहास-लेखकों द्वारा जो अनर्थ हो रहा है, उसका प्रभाव भावी सन्तान पर अच्छा नहीं पड़ेगा। कुछ दिनों बाद ये इतिहास 'यार-दोस्तों' के स्मृति-पत्र मात्र बन जायँगे और वास्तविकता से कोसों दूर होंगे।

—श्रीराम शर्मा

२

शर्माजी

"शर्माजी जितने बडे साहित्य-सेवी थे, उससे कही बडे मनुष्य थे । आपसे मिलकर कभी जी नही भरता था । नये लेखको को आप वह प्रोत्साहन देते थे, जो माता अपने लटपते बालक को देती है । मेरे ऊपर तो उनकी असीम कृपा थी । 'सेवा-सदन' उपन्यास-क्षेत्र में मेरा पहला प्रयास था । शर्माजी ने जिस तरह दिल खोलकर दाद दी, वह मैं भूल नही सकता । उस समय उनकी कठोर आलोचना ने मेरा अन्त कर दिया होता । उसके बाद जब-जब मुझे उनसे मिलने का सुअवसर मिला, इस तरह टूटकर गले लगाते थे कि चित्त उनके सौजन्य पर पुलकित हो उठता था । सरल जीवन और ऊँचे विचार की ऐसी मिसाल मुश्किल से मिलेगी । · 'आप मे नवीन और प्राचीन का अभूतपूर्व मेल हो गया था । क्या सस्कृत, क्या हिन्दी, क्या उर्दू, क्या फारसी—आप इन सभी साहित्यो के ज्ञाता थे । अकबर मरहूम के तो आप आशिक ही कहे जा सकते है । मैने आपकी जबान से अकबर की सैकडो सूक्तियाँ सुनी है । आप उन पर मस्त हो जाते थे । हिन्दी में आप एक खास शैली के जन्मदाता है—जिसमे चुलबुलापन है, शोखी है, प्रवाह है और उसके साथ ही गाम्भीर्य भी । उनका पाण्डित्य उनके काबू में है । वह उस पर शहसवार की भाँति सवार होते है । उसकी लगाम ढीली नही करते, उसे बहकने नही देते । ·· कौन जानता था कि हिन्दी-साहित्य का वह सूर्य अपने साहित्य-जीवन के मध्याह्न में यो अस्त हो जायगा ।"

—प्रेमचन्द

३

पण्डित साहब

"मुझको आज तक इसकी दाद नही मिली थी । दाद एक तरफ, एक साहब ने मुझसे फरमाया था कि 'मै इस किते के मानी नही समझा ।' वह साहब बहुत ज़ी-इल्म (विद्वान्) और खुद साहिबे-सखुन (कवि) थे, मै खामोश हो रहा । खुदा ने आपके लिए यह बात रक्खी थी कि इसका मतलब समझिये और दाद दीजिये । असल यह है कि आप साहिबे-दिल है । आपने अपनी जबान और मजहब मे फिलसफा पढा है और मजाके-तसव्वुफ और हकपरस्ती आप में पैदा हो गई है । खुदा जाने किसने-किसने किन-किन मवाके (अवसर) पर किन अशआर की दाद दी, लेकिन यह तफसीली नज़र इस वज्द और लज्जत के साथ गालिबन किसी ने नही की ·····

"आपकी काबलियत और सुखनफहमी ने मुझको आपका आशिक बना दिया है, मेरे लिए दुआ फरमाया कीजिए, अब बजुज यादे-खुदा और जिक्रे आखरत के कुछ जी नही चाहता, लेकिन इस रग के सच्चे साथी नही मिलते, आप बहुत दूर है ।"

—अकबर इलाहाबादी

श्रद्धेय

परम पूजनीय श्रद्धेयवर

प्रणतयः सादरम् सस्नेहम् !

कृपा-पत्र पाकर अत्यन्त अनुगृहीत हुआ । आपने जो मुझे लोकोत्तर विरुदा-वलियो से विभूषित किया है यह केवल आपकी कृपा और दाक्षिण्य का अविकल प्रमाण है। मै तो स्वयं अपने को अत्यन्त अल्पज्ञ जानकर आपकी सहायता का सदैव अभिलाषी हूँ। बात असल यह है कि मुझे इतने शब्दो से भूषित कर आप सहायता देने के परिश्रम से अलग नही हो सकते। 'सरस्वती' मे जो लेख देने की आज्ञा की गई, सो अनुल्लघनीय न होने पर भी लेख के असामर्थ्योपहत होने मे विलम्बसाध्य होगी। 'सतसई-सहार' लिखकर आपने 'सरस्वती' के पाठको का जो आशीर्वाद ग्रहण किया है सो उसकी पुष्टि मेरे-से अल्पज्ञ के लेख से कैसे हो सकती है। प्रथम तो ऐसा विषय नही सूझता जिस पर हिन्दी-रसिकों का अनुराग हो, द्वितीयत हिन्दी लेख में भी सामर्थ्य नही। आप कुछ विषय निर्देश करे तो कुछ यत्न हो। 'समाज-सशोधन' वाला लेख आपको इतना पसन्द होगा, यह मुझे कभी धारणा नही थी। यदि उधर 'भारतोदय' कृतार्थ हुआ तो इधर मै भी कृतार्थ हुआ। हिन्दी लेखन जन्म सफल हुआ। आशा है, अपने समुचित उपदेशो से आप मुझे सदा कृतार्थ करते रहेगे।

७, १ वेचू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता
तारीख १४, शु० पौष १९६७

आपका परम सेवक
राजेन्द्र